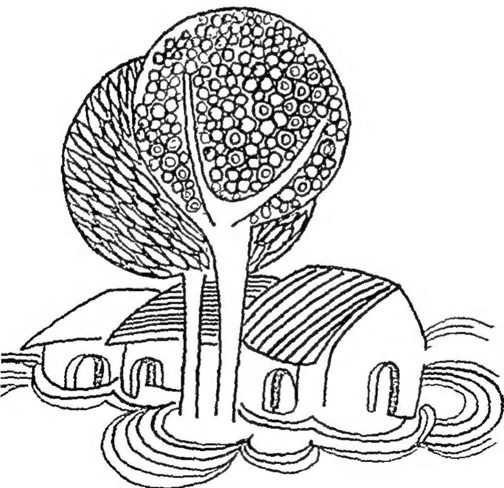
संदीपन पाठशाला

ताराशंकर वन्द्योपाध्याय





एक

प्रतिष्ठा की कामना जब मनुष्य की रोटी-कपड़े की चिन्ता को भुला देती है तब उसका राह चलना आसमान की ओर मुंह किये चलने के समान हो जाता है। अति-यथार्थ मिट्टी की धरती के बाधा-विघ्नों को वह उस समय भूल ही जाता है।

एक कहानी है : एक ज्योतिर्विद अंधेरी रात में आकाश के तारों की ओर देखते हुए राह चलते एक कुंए में गिर गये थे। जिस व्यक्ति ने उनका उद्धार किया था, उद्धार करने के बाद ही निवृत्त नहीं हुआ था, साथ ही साथ एक अनमोल उपदेश भी दे गया था। कहा था, अजी, धरती का हालचाल पहले जान लो, फिर आसमान की ओर देखना।

इस मशहूर अंगरेजी कहानी के बारे में सीताराम जानता है, बचपन में उसने यह कहानी पढ़ी है, याद भी है।

सीताराम का पिता वह कहानी नहीं जानता, उसने अंगरेजी नहीं पढ़ी, बंगला पढ़ाई भी नहीं के बराबर। यही बात वह दूसरे ढंग से कहता है। कहता है, बेटा, ऊपर की ओर मत देखना। नीचे की ओर निगाह डालो। तुमसे कितने लोगों का हाल बेहतर है, कितने लोग तुमसे ज्यादा मान-सम्मान पाते हैं, उसका हिसाब मत लगाना वर्ना अशान्ति की आग बुझेगी ही नहीं। इससे बेहतर होगा कि तुमसे कितने लोगों की हालत खराब है, तुमसे मान-सम्मान में कितने लोग छोटे हैं, उन्हीं का हिसाब लगाओ। इससे सुख चाहे न भी मिले, शान्ति में बीत जाएंगे तुम्हारे दिन।

सीताराम के कुल-गुरु कहते हैं, बेटा, कामना और आग में कोई फर्क नहीं, आग की लौ की भांति कामना का स्वभाव भी ऊर्ध्वमुखी है। कितना भी उसे नीचे की ओर घुमा दो, वह फौरन पलटकर ऊपर की ओर सिर उठा लेगी। लेकिन जब वह बुझ जाती है, तब जीवन जली हुई लकड़ी जैसा हो जाता है, राख और कोयले का ढेर-सा।

बातें सीताराम के दिल को भी छू गयी थीं। लेकिन फिर भी वे सारी बातें वह आज किसी कदर मान ही नहीं पा रहा है। किसान का बेटा जमाने के रिवाज के मुताबिक स्थानीय हाई स्कूल में पढ़ने गया था। वहां अंगरेजी अपने काबू में करने के बूते की कमी के कारण व्यर्थमनोरथ हो अन्त में हुगली नार्मल

स्कूल में पढ़ने चला गया था। वहाँ भी दो-दो वार फेल हो कर फिर सिर झुकाए लौट आया है। लेकिन इसी वीच जाने कव उच्चाशा की आग मन में सुलग उठी और वह नौकरी करना चाहता है। वह नौकरीपेशा वावू वनेगा। पंडित के रूप में संसार में जाना-माना जायगा। लेकिन वाप रमानाथ ने कहा, नहीं, यह इरादा छोड़ दो तुम। हम लोग किसान हैं, सिरजनकी घड़ी से वाप-दादों का खानदानी काम है काश्तकारी। हम लोग खा-पी, ओढ़-पहन अपनी औलाद को ज़र-ज़मीन दे, राम का नाम लेकर आँखें मूंदते चले आए हैं। यह सव छोड़-कर तुम नौकरी ढूंढ़ रहे हो! सो भी किसी कायदे की नौकरी होती तो वात कुछ समझ में आती। हाय! हाय रे किस्मत! दाहिने हाथ से खुरपा चलाकर वह नींबू के एक दरख्त के नीचे से घास की निराई कर रहा था, वाएं हाथ में हुक्का थामे तमाखू पी रहा था। वेटे से वातें करते समय दोनों ही काम वन्द थे, अव वात वीच में अधूरी छोड़ वह फिर से वे दोनों काम करने लग गया।

सीताराम सिर झुकाये खड़ा ही रहा।

अचानक फिर अपने हाथ का काम रोककर रमानाथ ने मुँह उठाकर पूछा, क्या है? वताओ! अपना इरादा तो वताओ।

सीताराम अव की वार वोला, कैसी भी हो, एक नौकरी जव मिली है तो मैं कोशिश करके देखूंगा ही।

रमानाथ ने खेद और श्लेष दोनों मिलाकर कहा, तकदीर तुम्हारी! नौकरी तो क्या, पेट-भर खाना और चार रुपए तनख्वाह! आज दस साल स्कूल की फीस, वोर्डिंग का खर्च भरने के वाद आखिर में चार रुपए तनख्वाह और खुराकी, सो भी कोई कपड़ा-लत्ता नहीं। जो लोग विना पढ़ेलिखे नौकर-खानसामे का काम करते हैं वे भी खुराकी और तनख्वाह के साथ कपड़े पाते हैं, वेटा!

सीताराम खामोश सिर झुकाये अव वाप के पास से चला गया।

वेटे के विन-वोले चले जाने में ही रमानाथ को उसका जवाव मिल गया। वह मौन रहकर वाप के प्रस्ताव का समर्थन नहीं जता गया। वही काम वह करेगा। खुराकी और चार रुपए तनख्वाह ही उसके लिए काफी है। कुछ देर उसके जाने के रास्ते की ओर एकटक देखने के वाद एक लम्वी साँस लेकर रमानाथ फिर काम में लग गया। इतनी देर में अचानक ही उसकी निगाह पड़ी, वातें करने की वेसुधी में जाने कव उसने पौधे की एक मोटी-सी जड़ काट डाली है! शायद यह पौधा न भी जी सके। कड़वी-सी मुस्कराहट रमानाथ के चेहरे पर झलकी, उसे लगा, उसके जीवन के आशा-तरु की मूल ही उसने काट डाली है।

"मुखिया दादा हैं क्या?"—उनके गाँव के आठ-आने हिस्से की जमीदारी का पुराना और खेती-वाड़ी की देखभाल करने वाला एतवारी कारिन्दा कन्हाई राय आकर खड़ा हो गया। यह कन्हाई राय मुजस्सम कलि है। नल-दमयन्ती जिन दिनों एक ही धोती में वनवास के दिन काट रहे थे—एक-दूसरे से दूर

जाने का कोई रास्ता नहीं था—उस समय कलि ने नल के हाथ में एक तेज छुरा जुटा दिया था। बस उसी कलि जैसे ही कन्हाई राय ने सीता के हाथों में यह नौकरी ला दी है। इसी कन्हाई राय ने ही सीताराम की नौकरी तय की है। उसी ने उसको प्रलुब्ध किया है। उसको देखकर रमानाथ अपने को संभाल न सका, बोल पड़ा, आपने मुझसे यह दुश्मनी क्यों की, यह तो बताइए ?

दुश्मनी !—कन्हाई राय आश्चर्य करने लगा।

दुश्मनी तो है ही—रमानाथ ने कहा, अकेली औलाद है यह मेरी। माँ मर गई इस बेटे की तो मैंने इसे पाला-पोसा गोद में। पढाई में आज चार साल से अलग-थलग रहा, सो भी मैंने कहा, झख मारने दो, बेटा पढ़ना चाहता है तो पढने दो। फेल होगा, यह तो मुझे मालूम ही था। लेकिन मैंने कहा, खैर शौक पूरा कर ले। वही फेल होकर घर लौट आया। सोचा था, बहरहाल, लड़के की साध तो पूरी हो गयी, अब थिर होकर घर पर बैठेगा। मेरा दाहिना हाथ बनेगा, खेती-बाड़ी देखेगा। बूढ़ा हो गया हूँ, पास रहेगा। सो नहीं, तुमने भला यह कैसी अक्ल दे दी उसे ?

राय ने ऐसी शिकायत की प्रत्याशा नहीं की थी। सीताराम से उसे प्यार है और उसी प्यार के कारण उसका अभिप्राय समझकर उसने ऐसी व्यवस्था कर दी है।

रमानाथ ने आँखें पोंछी। आँखों में आँसू आ गये थे, बोला, अचानक अगर मर जाऊं तो शायद बेटे के हाथों आग भी न मिले।

अब राय से बिना हँसे नहीं रहा गया। बोला, अरे ढाई मील का ही तो रास्ता है, दूर क्या कहते हो ? शाम को लड़कों को पढ़ाकर, खा-पीकर रोजाना घर भी आ सकेगा। आपका सिर भी दुखे तो इत्तिला मिलते ही घंटे-भर में घर आ जायगा।

रमानाथ को इस बात का कोई जवाब ढूंढे नहीं मिला। खामोश मिट्टी की ओर नजर गड़ाये घास के एक गुच्छे की जड़ पकड़कर खींचने लगा।

राय ने उसे समझाते हुए कहा, आप इसमें एतराज न करें। सीताराम का इसमें भला होगा, आपका भी। आठ आने हिस्से के जमींदार के घर के लड़कों का मास्टर बनेगा सीताराम, इससे…

रमानाथ ने यकायक उसका हाथ पकड़ लिया और कहा, सरिश्तेखाने का कामकाज सीख ले, ऐसा कर देना भाई।

राय ने कहा, यह कौन-सा मुश्किल काम है ! गाहे-बगाहे अगर सरिश्तेखाने के नायब के पास बैठे तो सीखने में कै रोज लगेंगे ? खैर, यह बात मैं रानी माँ से बता दूंगा।

हां, बाबू लोगों की गुमाश्तागिरी अगर मिल जाये हमारे गाँव की, तो इज्जत तो मिलेगी ही, दो-दस रुपए भी; घरपर रहेगा, सबकुछ ठीक रहेगा।

अदृश्य विधाता हंसे, आग की छूत लगते ही आग सुलग उठती है।

ऐन ऐसे ही समय सीताराम आकर खड़ा हो गया ।

मैं जा रहा हूँ बप्पा !

रमानाथ खड़ा हो गया । बोला, 'जा रहा हूँ' नहीं कहा जाता है बेटा, रहा हूँ' कहना चाहिए । चलो तिलक लगा दूँ, फूल दूँ, भगवान को मत्था क लो । चलो ।

सीताराम चला गया । रमानाथ उदास-मन हुक्का लेकर ओसारे बैठ या । उसका यह सजा-सजाया खेती-बारी का टाट, पीढ़ियों के खून से सींचा यह टाट, इसी टाट के देवता की पूजा बन्द होने का आज सूत्रपात हुआ । कुछ-कुछ पागल जैसे ही रमानाथ अकेले ही, मानों अपने को ही सुनाते हुए बोल पड़ा—हो गया, आज से नोटिस मिल गया । काल-पुरुष बाँस की गाड़ी पर बैठे यहाँ आ जाये और सबकुछ सीलमुहर कर दे बस, सारा का सारा सफाया ! जमाना है जमाना, जमाने की चाल ! पुराने जमाने का गाँव—सोने का गाँव होता था । अहा, क्या सारी गिरस्तियाँ थीं ! सोने की गिरस्ती । वह जमाना और वह गाँव आँखों पर तिर रहे हैं । उस जमाने का गाँव ! रमानाथ की आँखों में आँसू आ गये ।

उस जमाने की बात !

किसान-अहीरों का गाँव !

तेरह सौ सन[1] का किसानों का गाँव । उनके टोले के सिरे पर था बाउरी लोगों का पुरवा । मंडल जी की खेती-बारी में वे हलवाहे-टहलुए का काम करते हैं, गोपालन में सहायता करते हैं । भिनसारे मालिक उठने से पहले वे र में आ पहुँचते । मालिक खुद खड़े रहते, वे गौवों को गुहाल से बाह निकाल कर सानी-पानी देते । मालिक तमाकू पीते, गौवों की पीठ पर हा सहलाकर उनको दुलारते, डाँटते, सज़ा देते । फिर रात का काम भी वे ग सेवा कर समाप्त करते । गुहाल में धुँआ दे मच्छर भगाकर गौवों को उ अपने-अपने ठाँव पर बाँध देते । कोई ठाँव-ठिकाने में गलती करता तो उ फटकारते हुए कहते—बेवकूफ, बेहूदा, बदमाश, अपना ठाँव-ठौर भी जानते ? फिर तमाकू पीते हुए दयामय भगवान का स्मरण करते ।

मिट्टी का बना घर, फूस का छाजन, बाँस या लकड़ी की अठकोनी ख से घिरा ओसारा, तारकोल-पुते दरवाजे, लाल मिट्टी से पुती हुई दीवा पर खड़िया या गेरू से बनी अल्पना, गोबर-मिट्टी से लिपी-पुती फ आँगन, इन्हीं से उनका घर बना । किसी-किसी का घर कोठा है यानी दुम ज्यादातर घर कोठे नहीं, इकमंजिले हैं । घर के बगल में तलैया, त लकड़ी के लट्ठों से बने घाट, उस घाट पर बैठकर किसान-बहुएँ बरत

---

१. बंगाब्द १३०० ईसवी सन् १९०७ होता है ।

हैं, नारी का साग चुनती हैं, मर्द लोग बाँस की तीलियों का बना टापा डालकर मछली पकड़ते हैं।

तलैया के चारों ओर साग-सब्जियों का घरेलू खेत, लौकी-कुम्हड़े का मचान, उसी के बीच जाफरी से घिरे एकाध कलमी आम के बिरवे, इनके अलावा पपीते के दरख्त हैं, अड़हुल-कनेर के पेड़ हैं, गाढ़े हरे रंग के फ्रेम की तरह तलैया के पानी को घेरे रहते। अड़हुल-कनेर के फूल चुन कर वे खुद देवस्थान को दे आते, फल-साग भी दे आते और इससे विधि-निर्देशित मृत्तिका-सेवा में नियोजित उनके दो हाथ धन्य हो जाते। घर के दूसरी ओर खलिहान और गोशाला; इसी ओर उनके घर का सदर पड़ता है—जिस प्रकार जमींदार की कचहरी, बाबू लोगों की बैठक, उसी प्रकार इन लोगों का खलिहान-गोशाला। एक लम्बा-चौड़ा छप्पर, छप्पर के सामने अनावृत्त खलिहान में धान और पुआल रखने के गोल खत्ते, गुहाल के सामने साफ-सुथरे मिट्टी के बने नादों के सामने गौवों की पाँत बंधी हुई। चौड़े छप्पर के मचान में खेती-बारी के सामान—हल, जुआ, डोंगी, पगहा; यहाँ तक कि डोंगी इस्तेमाल करने में लगने वाला लकड़ी का पटरा और लम्बा बाँस भी रखे हुए रहते हैं।

सबल गठे हुए बदन, सिर के बाल छोटे कतरे हुए, उसके बीच चुटिया, गले में तुलसी की माला, मर्दों की पोशाक सात हाथ लम्बी और दो हाथ चौड़ी—करघे पर बुनी मोटी धोती और कन्धे पर अंगोछा। औरतों की पोशाक—उसी करघे पर बुनी नौ हाथ बयालीस इंच वाली साड़ी। सुबह उठकर मर्द खेतों में चले जाते हैं, औरतें घर का कामकाज करती, गो-सेवा करती, फिर पहरभर बेला चढ़ जाने के बाद रसोई चढ़ाती, खाना-पीना खत्म होने में दो पहर ढल जाती है, बाबुओं के गाँव रतनहाटा के स्कूल में उस वक्त टिफिन के बाद कक्षा लगने का टन-टन घंटा बजता। लड़के दस-बारह साल की उम्र तक गाँव के पुरोहित जी की पाठशाला में पढ़ाई करते, फिर पाठशाला जाना बन्द कर बड़ों के साथ खेती के काम में जुट जाते हैं। वे लोग जीवन में अधिक पढ़ाई की जरूरत महसूस नहीं करते। क्या जरूरत है भला? खेत की फसल, तालाब की मछली, घर का दूध, घर का गुड़—डट कर सन्तोष से पेट भर कर खाते हैं, भगवान का सुमिरन करते, एड़ी-चोटी का पसीना एक कर खेत में मेहनत-मशक्कत करते, खेतों में फसल हहरा कर पक आती, उनका जीवन भी अकूत आनन्द से भर उठता; उसी आनन्द से दोनों हाथ ऊपर उठाये शाम को मृदंग बजाते हुए कीर्त्तन की मंडली ले गाँव के डगर पर निकल कर गाते हैं—"ओ नामेर गुणे गहन बने मृततरु मुंजरे। बल माधाइ मधुर स्वरे, हरिनाम बिना आर कि धन आछे संसारे।"[1] इससे अधिक उन्हें सोचने की जरूरत नहीं और न वे सोचना

१. उस नाम की महिमा से बीहड़ वन में मरे हुए दरख्त में भी कोंपल निकल आते हैं। ऐ माधाइ, मधुर स्वर में बोल, हरि के नाम के सिवा संसार में और कौन-सा धन है।

ही चाहते हैं। लिहाजा ज्यादा पढ़-लिख कर भला क्या होगा ? किसी तरह टेढ़े-मेढ़े मोटे हरुफों में दस्तखत भर करना है, दस्तावेज पर गवाही बनना पड़ता, हैंडनोट तमस्सुक कबाला पर दस्तखत करने पड़ते, इसलिए इतने भर की जरूरत है। और जरूरत है गिनती, पहाड़ा, धान के वजन का मन-सेर-छटांक का हिसाब लगाना, बिसवा बीघा आदि की जानकारी की। उन्हीं में जो लोग अच्छा पढ़-लिख जाते हैं, सम्मान्य व्यक्ति हैं, ज्ञानी लोग हैं। उनके ओसारे में जाकर वे शाम को बैठते, सस्वर रामायण, महाभारत पढ़ते, ये लोग सुनते। जीवनतत्त्व के बारे में कितनी ही व्याख्याएँ वे उन्हीं से बटोरते रहते हैं।

इससे अधिक उनके जीवन में कोई प्रयोजन नहीं था। पाप और पुण्य का एक सरल-सहज मीमांसाबोध था। उसी बोध के अनुसार जीवन-सत्य को गम्भीररूप से अनुभव करने लायक हृदय का विस्तार और गहराई भी थी। भौतिक जीवन की आवश्यकताएँ भी अल्प थीं, अभाव की अशान्ति नहीं थी, अन्तर में परम सत्य को पाने के विश्वास में गहरी शान्ति थी। किसानों के गाँव के कोलाहलशून्य दिनो-रात के साथ उनका जीवन भी प्रसन्नता में बीतता जा रहा था।

अचानक देश में जोरदार हवा का एक झोंका आया। झोंका नहीं था दरअस्ल क्योंकि झोंका होने पर थोड़ी देर के बाद ही थम जाता है; यह हवा थमी नहीं, लगातार उसका जोर बढ़ता ही रहा, बरसात में पछुवा की नाईं।

भद्र बाबुओं के रत्नहाटा गाँव में शुरू में माइनर स्कूल खुला। रत्नहाटा के ब्राह्मण प्रायः सभी जमींदार हैं। पंख होने पर ही पंछी बन जाता है। दो-चार गंडे जमींदारी हिस्से की मिल्कियत लेकर सभी जमींदार थे। इतने दिनों दो आने दो पैसे की पक्की शराब की बोतल और बारह आने का बकरा खरीदकर दावत करते और दावत में मौज-बहार कर वे दिन काट रहे थे, उनमें नई लहर आई, पढ़े-लिखे बनेंगे। माइनर पास कर बाबुओं के बेटों में कुछ तो सदर में जाकर आममुख्तार बने, सबरजिस्ट्री दफ्तर में क्लर्क बने, अदालत में भी नौकरी मिली, कुछ थे जो माइनर पास कर, कीनीहार के अंगरेजी स्कूल से भी पास किया—उनको कलकत्ते में रेल की नौकरी मिली, सरकारी नौकरी मिली—दारोगा बने, पोस्टमास्टर बने, एकाध कालेज में पढ़कर वकील बन गये और एक बन गया हाकिम। किसानों के गाँव में भी यह हवा आ लगी। वे भी उसी ओर पलटे। सद्गोपटोले के मातबर रंगलाल ने अपने दो बेटों को माइनर स्कूल में भरती कर दिया। बड़े बेटे ने माइनर पास कर पाठशाला खोल दी। उससे छोटा भी माइनर पास कर पाठशाला खोलने की कोशिश में घूमता। उसके बाद वाले बेटे को माइनर पास कर वजीफा मिला। उसी बार रत्नहाटा में बड़ा अंग्रेजी स्कूल खुला। रंगलाल का वृत्ति-प्राप्त बेटा बड़े स्कूल में पढ़, पास कर कालेज में पढ़ने चला गया। साथ ही साथ सद्गोपटोले के सभी लड़के स्कूल में भर्ती हो गये। बरसात आई, मानस की खेती शुरू हो गई, नई फसल की खेती।

अचानक ही एक दिन सद्गोपटोले की प्रवीण मण्डली भी उत्साह और गौरव से चंचल हो उठी। लड़के आश्चर्यजनक खबर ले आए हैं। रत्नहाटा के स्कूल में एक तरुण सद्गोप शिक्षक आ गये हैं। कुर्सी पर बैठकर ब्राह्मण, वैद्य, कायस्थ बाबुओं के बेटों की गुरुआई कर रहे हैं। समारोह की महफिल जम गयी। सद्गोप मास्टर को एक दिन निमन्त्रित कर वे ले आए। गोष्ठी में बैठकर मास्टर ने बहुत सारी विचित्र बातें बताईं। ऐसे ही समय एक परम विस्मयकारी घटना घटित हो गयी। गाँव के रास्ते पर रत्नहाटा के बाबुओं के घर के लड़के आ पहुँचे। रविवार की छुट्टी में बन्दूक लेकर वे शिकार करने निकले थे। शिकार से निबट लौटती राह वे सद्गोप मास्टर के सामने पड़ गये। बाबुओं के लड़के शिकार पर जाने-आने के रास्ते अक्सर इस गाँव में आते हैं, मेहरबानी कर कभी-कभी प्यास लगने पर बताशे या गुड़ के साथ पानी पीते हैं। मण्डल लोग झुककर जमींदार ब्राह्मण-कुमारों को प्रणाम भी करते हैं। आज आश्चर्यजनक काण्ड हो गया! सद्गोप मास्टर को देखकर वे खड़े हो गये और सम्मान जताते हुए उनको नमस्कार किया। सद्गोप प्रवीणलोग ब्राह्मणनन्दनों को प्रणाम करते देखकर सविस्मय थमक गये। मास्टर ने हँसकर कहा शिकार?

—हाँ सर।

कहकर वे चले गये।

उसी दिन इस गाँव में दुगुनी रफ्तार से यही हवा चलने लगी।

रमानाथ ने भी अपने बेटे सीता को इसी उत्साहवश स्कूल में भर्ती कर दिया।

हाय, उस दिन काश! वह समझ सकता! पाँच साल पढ़ने के बाद सीताराम थर्ड क्लास तक नियमित उठने के बाद यकायक ठहर गया। अंग्रेजी की अड़चन से और आगे न बढ़ सका। लगातार दो साल फेल होता रहा। दो साल के बाद रमानाथ ने अचानक ही एक दिन उसे स्कूल से छुड़ा लिया। वजह भी थी। उस वक्त रमानाथ पढ़ाई के एक दूसरे पहलू को देखकर शंकित हो उठा था। इस ओर उसकी निगाह नहीं पड़ी थी और न ध्यान ही दिया था वर्ना वह सीता को अंग्रेजी स्कूल में न पढ़ने देता। उस मुहल्ले के महादेवपाल का बेटा चंडी सीताराम का हमउम्र है और पढ़ता भी सीताराम के साथ था। वह सीताराम को लाँघ कर एक कक्षा ऊपर उठने के बाद अटक गया था। उस दिन उसे एक हाथ में एक फूल लेकर घुमाते और दूसरे हाथ में सुलगती बीड़ी लेकर गाना गाते हुए देखा उसने। शाम के अन्धेरे में गाँव के बाहर एक पेड़ तले बैठे साँझ के आकाश की ओर उदास नयनों से देखते हुए छोकरा गा रहा था, "सम्मुख लाख मेघ खेला करे।" रमानाथ दंग रह गया! सीता के प्रोमोशन के लिए स्कूल के बड़े मास्टर के पास ही गया था, रमानाथ भारी मन लिए लौट रहा था, ऐसे समय अचानक ही यह दृश्य दिखाई पड़ गया। मन ही मन वह शंकित हो उठा। अगले दिन ही सवेरे अपने नाते के भाई के घर शोरगुल सुन

उसने जाकर देखा, भाई वल्लभ हाथों में सिर थामे बैठा है, उसका बेटा ईश्वर सन्दूक का ताला तोड़ रुपया लेकर भाग गया है। ईश्वर भी सीताराम की उम्र का है। वह आज कई साल से फिफ्थ क्लास में ही अटक गया था। इस बार भी फेल हुआ था और उसी सिलसिले में कल बाप के साथ झगड़ा हुआ था। उसके फलस्वरूप रात ही को कभी ताला तोड़ कर मुट्ठी-भर रुपया – पचास-पचपन रुपए लेकर भाग गया है।

वल्लभ ने कहा, अपने बेटे को कोई कभी स्कूल में मत पढ़ाना।

रमानाथ को यह बात भा गई। घर आकर ही उसने सीताराम की पढ़ाई छुड़ा दी—कोई जरूरत नहीं अब और पढ़ाई की।

हालाँकि सीताराम उन लोगों की तरह नहीं था। वह बराबर मोटे कपड़े से ही सन्तुष्ट है, जूते की जरूरत अभी उस दिन तक उसे नहीं पड़ी। सिर के बाल भी वह एक ही लम्बाई के कटाता। कोई नशा भी नहीं करता था—रमानाथ का हुक्का-तमाकू आज तक जगह से हिले नहीं। फिर भी वह भविष्य के लिए शंकित हो उठा, बोला, अब और पढ़ाई की जरूरत नहीं, खेतीबारी देखो।

सीताराम खामोश सिर झुकाये खड़ा रहा, कोई भी प्रतिवाद नहीं किया उसने। दो दिन बाद अचानक रात को नींद उचट गई और रमानाथ चौंक पड़ा। गर्मी के दिन—सीताराम ओसारे में खम्बे से टेक लगाये बैठे गुनगुनाता गाना गा रहा था। गर्मी के दिनों में भी देहात में खास कोई बाहर नहीं लेटते। कम उम्र के दो-चार लोग बड़ों से छिपकर भले लेट लें पर बड़े-बूढ़े कोई भी नहीं लेटते। चोर-डाकुओं के भय से पुरखों का निषेध है। वे आकर सबसे पहले घर के मालिक को अपने कब्जे में करना चाहते हैं। दूसरे लोगों पर थोड़ा-बहुत जुल्म कर डाकू छोड़ देते हैं। लेकिन मालिक का निस्तार नहीं। सारा माल-मता दे देने पर भी छुटकारा नहीं। बस और कुछ भी नहीं है—इस बात पर चोर-डाकू विश्वास नहीं करते, निर्ममता से पिटाई करते हैं। बहुधा कत्ल भी कर जाते हैं। खैर, जाने दो वह बात। बाहर के गुनगुनाने के शब्द से नींद उचट गयी तो रमानाथ ने खिड़की से देखा, सीताराम बाहर खम्बे से टेक लगाये गुनगुनाता गाना गा रहा था, "न साध मिटी मेरी, न आशा हुई पूरी—मेरा सभी कुछ चुका जाय माँ।" रमानाथ और भी अचम्भे में पड़ गया—सीताराम की आँखों से आँसू ढुलकते देखकर; चाँदनी उसके मुख पर आ पड़ी है, जुन्हाई की छटा में आंखों के कोर से लेकर ठोढ़ी के सिरे तक जल की दो धाराएँ चमक रही हैं। उसके दिल में एक हूक-सी उठी। सीताराम अपनी माँ के लिए रो रहा है। उसकी भी आँखों में आँसू आ गये। धीरे-धीरे दरवाजा खोल वह बाहर निकल आया और अपने बेटे का सिर अपनी छातीपर खींच लिया।

कुछ देर के बाद चौकीदार की हाँक सुन वह अपने आपे में आया। रात दो पहर पार कर रही है। बेटे से उसने कहा, 'आ जा, मेरे कमरे में आकर सो

जा।' हमेशा से सीताराम बड़ा ही शान्त और आज्ञाकारी है। उसने कोई विरोध नहीं किया, अपने कमरे से चटाई और तकिया लाकर बाप के पास लेट गया।

रमानाथ ने इतनी देर में सस्नेह पूछा, क्यों रे, अपनी माँ को क्या सपने में देखा था ?

सीताराम ने कोई जवाब नहीं दिया।

रमानाथ ने कुछ लम्हों के बाद फिर पूछा, तेरी माँ ने कुछ कहा ?

सीताराम फिर भी चुप किये रहा।

रमानाथ ने कहा, सो जा। सपने लोग देखा ही करते हैं। फिर एक गहरी-लम्बी साँस लेकर बोला, मेरी गिरस्ती तो तुझ ही को लेकर है। तेरे मुँह की ओर देखकर मैं चुप्पी साधे रहता हूँ। फिर कुछ देर चुप रहने के बाद बोला, तू अगर रोए तो मैं दिल में हौसला कैसे रखूँ, बता भी ? वह उठकर आया और बेटे के बिस्तर के बगल में बैठकर उसके बालों को सहलाते हुए बोला, सो जा।

सीताराम स्तब्ध लेटा रहा लेकिन नींद उसे नहीं आई, यह समझने में रमानाथ को देर नहीं लगी। वह पंखा लेकर झलने लगा। अब सीताराम ने हाथ बढ़ाकर पंखा ले लिया और कहा, नहीं।

रमानाथ ने पंखा नहीं दिया और सीताराम का जवाब पाकर उत्साहित हो उठा। उसी उत्साह में उसे अचानक दिलासे का रास्ता मिल गया, बोला, इसी साल मैं तेरा ब्याह कर दूँगा।

सीताराम चौंक पड़ा, उठ कर बैठ गया। बोला, नहीं।

नहीं ! रमानाथ दंग रह गया। नहीं—क्या ? ब्याह नहीं करेगा ? यह कैसी अनहोनी बात !

'नहीं ! मैं पढ़ूँगा।'

'पढ़ेगा ?' रमानाथ स्थिर दृष्टि से बेटे की ओर देखता रहा, अन्धेरे में ही। इतनी देर में सारी बात का धीरे-धीरे खुलासा हो गया। 'साध न मिटी, आशा नहीं पूरी हुई'—राम कहो, पढाई की साध और आशा ! रमानाथ उठ कर अपने बिस्तर पर जाकर लेट गया, बोला, अच्छी बात, पढ लेना। अब सो जा। तेरी साध और आशा पूरी होगी।

सीताराम बोला, मैं हुगली में नार्मल पढ़ूँगा।

हुगली में ? चौंक पड़ा रमानाथ। हुगली तो बहुत दूर है। इसके अलावा यहाँ की पढाई घर का खाना खाकर, वहाँ खर्च पड़ेगा।

'महीने में बारह रुपए मिलने पर ही मेरा काम चल जायगा,

रमानाथ ने जवाब नहीं दिया, करवट बदलकर वह लेट गया।

अगले दिन रमानाथ ने सबेरे उठते ही खाना चढ़ा दिया पकाने को। सीताराम के उठते ही बोला, भात उतार लेना। मैं खेत चला। खाकर तू अपने स्कूल चला जाना।

इसी ढंग से उसकी पत्नीशून्य गिरस्ती चली आ रही थी। वह दाल

बनाने के बाद एक तरकारी बना डालता था फिर चावल चढ़ाकर खेत चला जाता था, सीता पढ़ता था, सीता पढ़ते-पढ़ते ही भात उतार लेता था। बाप के लिए ढककर रख देता, फिर खुद खाकर ताऊ के घर चाभी रखकर स्कूल चला जाता था। दिन ढले पाँच बजे लौटता था। ढ़ाई मील का रास्ता है रत्नहाटा। उस दिन शाम को सीताराम छह बजे लौटा। रमानाथ घबरा रहा था; सारे लड़के लौट आए, सीता नहीं लौटा। उसे डर लगा; सबसे पहले उसने बक्सा-सन्दूक देखा। ताला तोड़कर बल्लभदा के बेटे ईश्वरा जैसा भाग तो नहीं गया? नहीं, बक्से-सन्दूकचे तो सब ठीक-ठाक हैं। फिर भी दिल नहीं मानता। ईश्वरा की तरह ताला तोड़ रुपया लेकर न भी भागे, यूँ ही एक कपड़े में भाग संन्यासी तो बन जा सकता है। कल ही रात को तो वह रो रहा था और गा रहा था 'साध नहीं मिटी।' रमानाथ गाँव के बाहर रास्ते पर जाकर खड़ा रहा।

सीता लौटा, उसके साथ रत्नहाटा के ही वही सद्गोप पंडित जी।

पंडित बोले, मण्डल जी, सीताराम मेरे पीछे पड़ा है, वह नार्मल स्कूल में पढ़ेगा। मेरा काम है आपको सहमत कराना।

रमानाथ क्या बोले, यह उसे ढूँढ़े नहीं मिला।

पंडित जी बोले, अंग्रेजी इसे भली-भाँति आती नहीं, इसीलिए यहाँ फेल हो रहा है। नार्मल में पढ़ना उसके लिए अच्छा ही होगा।

रमानाथ ने अब कहा, लेकिन वह पढ़ने तो हुगली जाना पड़ेगा।

हाँ, यहीं हुगली में, आज चिट्ठी डाली जाय तो कल मिल जाती है। सवेरे सवार होने पर बारह बजे दोपहर तक पहुँच जाइए, कौन ऐसी दूर है?

रमानाथ चुप किये रहा। अचानक उसे दिखाई पड़ा, सीता ओसारे के एक कोने में बैठा रो रहा है। एक लम्बी साँस लेकर उसने कहा, अच्छा ऐसा ही होगा।

रमानाथ ने ऐसा ही किया। हास्य से उद्भासित मुख लिये सीताराम बाप के पैरों की धूल सिर पर लेकर हुगली के लिए रवाना हो गया।

पंडित जी ने भी हंस कर कहा, सीताराम आपके वंश का मुख उज्ज्वल करेगा। चन्द्र-सूर्य-सा नहीं कर सकेगा—लेकिन माटी के दीपक-जैसा कर सकेगा।

रमानाथ खुश्की लिए हंसा, कोई जवाब नहीं दिया। चुपके-से बेटे को रत्नहाटा स्टेशन के एक छोर पर बुलाकर कहा, एक वादा तुमको मुझसे करना होगा। इसबार तुम्हारा ब्याह करूँगा मैं। 'नहीं' कहने से नहीं चलेगा।

सीताराम ने सिर झुकाकर कहा, अच्छा।

नार्मल स्कूल में पढ़ाई के पहले ही वर्ष में रमानाथ ने उसकी शादी कर दी। दुल्हन का नाम है मनोरमा। सीताराम को भी वह पसन्द आई। इन तीन वर्षों में जितनी बार वह छुट्टी में घर आया है, उतनी बार चन्द दिनों के लिए सीताराम ससुराल गया है। रमानाथ ही उसे भेज देता था। ब्याह के समय

मनोरमा बारह साल की छोटी-सी लड़की थी। उस समय उसके साथ बातें करने में सीताराम को अवसर हमी आती थी। शादी के बाद गर्मी की छुट्टियों में सीताराम जब पहली बार ससुराल गया, अपने साथ वह ले गया एक पाठ्य-पुस्तक—महाकवि माइकेल मधुसूदन दत्त का 'मेघनाद वध काव्य'। गर्मियों के दिन थे। भोजन के बाद सास ने उसे अपने मिट्टी के बने नये दुमजिले की सीढ़ियों का दरवाजा दिखलाते हुए कहा, ऊपर जाकर लेट जाओ बेटा, बिस्तर लगा दिया गया। तुम्हारे सब सामान ऊपर ही रख दिये गये हैं।

ऊपर आकर सीताराम ने दरवाजा खोल कर देखा, मनोरमा पहले से ही आकर बैठी हुई है, उसकी किताब खोलकर पढ़ रही है। सीताराम पुलकित हो उठा। मनोरमा पढ़ी-लिखी है? दरवाजा भेड़कर सीताराम मनोरमा के बगल में आकर बैठ गया। तबतक हालांकि मनोरमा एकहाथ घूंघट काढकर किताब से दूर सरक कर बैठ गई है। विवाह के बाद पति-पत्नी की पहली मुलाकात! रिवाज के मुताबिक जबरदस्ती ही उसका घूंघट खोलना होगा, काफी चिरौरी-विनती कर उससे बात कराना होगा। चिरौरी-विनती पर भी अगर वह न बोले तो पति को रूठना होगा।—अच्छी बात, मुझसे भला क्यों बोलोगी? मैं कौन होता हूँ तुम्हारा? लम्बी साँस लेकर कहना पड़ेगा, कल ही चला जाऊंगा मैं। सीताराम को इनमें से कुछ भी नहीं करना पड़ा। घूंघट का पट खोल देते ही मनोरमा फिक्क से हँस दी थी। कुछ ही देर में वह स्वच्छन्दता से बोलने लग पड़ी।

यकायक सीताराम हाथ मे किताब लेकर पूछ बैठा, कौन-सी जगह पढ़ रही थी? कैसी लगी?

मनोरमा ने होठों की भंगिमा से अच्छा न लगने का आभास दिया और गर्दन हिलाकर बोली, वाहियात किताब है तुम्हारी! एक भी तस्वीर नहीं।

सीताराम बोला, तुम पगली हो! पढ़कर समझ नही सकी, यह एक महाकाव्य है। इसमें क्या चित्र रहता है?

शब्द की ध्वनि से मनोरमा विस्मित हुई, महाकाव्य—महा शब्द के गाम्भीर्य और गुरुत्व-ध्वनि के प्रभाव से उसके मन पर असर डल चुका था। वह आँखें फाड़ती हुई बोली, महाकाव्य! फिर अपराधबोध से लजाकर बोली, क्या मालूम। मुझे पढ़ना तो आता नहीं, तस्वीर देखने के लिए खोला था। पचांग मे कितनी-सारी तस्वीरें होती हैं। दादा के स्कूल की किताब में कितनी-सारी तस्वीरें हैं। एक शेर है उसमें बड़ा अच्छा-सा।

सीताराम हँसा। बोला, खैर सुनो। वह पढने लगा—

"सम्मुख समरे पड़ि वीर चूड़ामणि
'वीरबाहु चलि जबे गेला यमपुरे—
'अकाले, कह हे देवि अमृतभाषिणि
'कोन वीरवरे वरि सेनापति-पदे

'पाठाइला रणे पुनः रक्षकुलनिधि
'राघवारि ।''

समझीं ? रामायण की घटना है। लंका के युद्ध में रावण के वीरपुत्र वीरबाहु मारे गये। राम ने उनका वध किया। उसके बाद ही यह कविता आरम्भ होती है समझ लो।

तकिये पर सिर रख मनोरमा तब तक लेट गयी है। बोली, हुंऽ।

इसीलिए कवि माता सरस्वती से कह रहे हैं, समझ लो। उसने शुरू कर दिया। एक साँस में पढ़ता चला गया—''गौड़जन याहे आनन्दे करिबे पान सुधा निरवधि'' तक। फिर वह रुका। बोला, अब आरम्भ हुआ। रावण सिंहासन पर बैठे हैं, समझी ?

मनोरमा से कोई आहट नहीं मिली। सीताराम ने जरा झुककर उसके मुख की ओर देखा, मनोरमा तब तक सो गई है।

शाम को मनोरमा ने कहा, वह सब पढ़ने पर अच्छा नहीं होगा जी। गाना गा सकते हो तो एक गाना गाओ, सबसे अच्छा हो अगर तुम एक कहानी सुना दो—भूत-प्रेत की कहानी।

तीन साल इसी प्रकार बीत गये। इसके बाद आखिरी परीक्षा के पहले वह फिर ससुराल गया ही नहीं। मनोरमा के बारे में भी उसने एक तरह से चिन्ता नहीं ही की। लगभग आहार-निद्रा त्यागकर वह केवल पढ़ता रहा, और पढ़ता ही रहा। परीक्षा खत्म हो जाने के बाद मनोरमा याद आई। शिशिर के अन्त में रिक्तपत्र रक्तकांचन का वृक्ष अकस्मात ही एकदिन फूलों से भर उठता है, इसी प्रकार से मन उस दिन मनोरमा की चिन्ता से भर उठा। परीक्षा से निबट कर जब वह मेस में लौट आया उस वक्त भी उसे मनोरमा याद नहीं आई, उसवक्त भी किसने कैसा लिखा है इसी की चर्चा चल रही थी। फिर सामान-बस्ते समेटने की बारी आई। इस वक्त एकबार वह याद आई। लेकिन साथ ही साथ बाबा भी याद आ गये। लेकिन उसी दिन रात को उसने सपना देखा, अपने बाबा को नहीं, मनोरमा को। सबेरे उसका दिल मनोरमा के लिए उतावला हो उठा। वह घर न जाकर ससुराल पहुँच गया। एक साल—करीब एक साल उसने मनोरमा को देखा नहीं, उसको देखकर वह अचम्भे में पड़ गया। मनोरमा सिर से लम्बी हो गयी है, भरी हुई नदी की नाईं उसके अंग-अंग यौवन उच्छास से भर गये हैं। घर में दाखिल होकर वह घूंघट काढे खड़ी मनोरमा को पहचान भी नहीं सका, थोड़ा-सा घूंघट खोल कर मनोरमा ने उसकी ओर ताका, फिर भी सीताराम पहचान नहीं सका। लगा कि पहचाना चेहरा है लेकिन ठीक याद नहीं आया। मनोरमा मुस्काई और उसकी संवर्धना की। अब पहचान लिया सीताराम ने। विस्मय-आनन्द से वह व्याकुल हो उठा। एकान्त कमरे में भेंट हुई। खुद ही आगे बढ़ दोनों हाथों से सीताराम का गला बांध उसके कन्धे पर उसने मुख रख दिया। पूछा, इसबार तो पास हो ही जाओगे ?

मनोरमा की बात का जवाब देने को होकर सीताराम अचानक ही अपने उत्तरपत्रों के बारे में सन्दिग्ध हो उठा। यहीं पहली बार उसे लगा कि परीक्षा मे उसने कोई खास अच्छा नही लिखा है। बोला, कोशिश में तो कोई कमी नहीं की।

मनोरमा बोली, इस बार तुम जरूर पास करोगे।

मानो न हुआ?

नहीं होंगे? क्यों? इतना पढ़े?

पढ़ने के अलावा भाग्य नाम की भी तो एक चीज होती है।

हाँ होती है।

तो फिर?

मनोरमा हँस कर बोली, सो शायद हो। भाग्य।

भाग्य ही था। सीताराम इसबार भी फेल हुआ, असफलता का सन्देश पत्र मे आया। उस वक्त वह घर मे था।

परीक्षा में असफलता की खबर को सीताराम ने सिर झुकाये ग्रहण किया। अब और वह रोएगा नही। रमानाथ छिपकर रोया। बेटे की पढ़ाई के सिलसिले में उसे बहुत ज्यादा कामना नही थी लेकिन सीता पढ़-लिख कर एक बड़ा विद्वान् व्यक्ति बन जाये, ऐसी कल्पना करते हुए उसे अच्छा ही लगता था, बस। रंगलाल मंडल का संझला बेटा बी. ए. पास कर एम ए पढ़ रहा है, साथ ही साथ वकालत भी पढ रहा है। उसको भाग्यवान ही मान लेना चाहिए, उस लड़के को—किशोरकृष्ण को देखकर दसजनो के साथ उसका भी दिल खुशी से भर उठता है। बाहर के दस लोगो के सामने किशोर उसके गाँव-रिश्ते का भतीजा है—ऐसा गर्व करने की भी इच्छा होती है; साथ ही साथ ठंडी साँस लेकर वह सोचता, काश! सीता नार्मल मे न पढकर यहाँ की पढाई पास कर कम-से-कम एक मुख्तार भी बन जाता तो अच्छा होता। यह सभी कुछ सच है, फिर भी उसके साथ यह भी सच है कि इसको लेकर एक अनबुझी दाहमय आकांक्षा भी उसमें नही थी। शान्त सरल आदमी है रमानाथ। विधुर हो जाने के बाद इसी सीताराम के प्रति अतिरिक्त स्नेहवश ही उसने दुबारा ब्याह नही किया। ब्याह के बारे में सोचते ही उसे पहले ही यह ख्याल आता कि वह इस घर में सीताराम की माँ बनकर तो नही आएगी, सौतेली माँ बनकर आएगी। दिल से वह उसकी अकल्याण-कामना करेगी, शायद मृत्युकामना भी करे। भय से सिहर कर वह विवाह की कल्पना को मन से पोंछ डालता था। गोद में सीता को उसने बडा किया है। सीता उसकी आँखो के सामने स्वस्थ रहकर जीवित रहे, यही उसकी सबसे बड़ी कामना है। इसीलिए पढ़लिख कर सीता नौकरी करने परदेश चला जायगा, इस काल्पनिक विरह की आशंका से उसकी पढ़ाई की सार्थकता की कल्पना बराबर न्यून ही बनकर उसके सामने आई

है। सीता कितनी ही बार कहता, नार्मल पास कर अगर काव्यतीर्थ पास कर सकूँ तो हाई स्कूल में हेडपंडित वाला काम तो मिल ही जायगा।

रमानाथ खामोश अपने हुक्के को फुर्र-फुर्र गुड़गुड़ाता ही रहता।

प्रसंग-क्रम से सीताराम नौकरी के स्थान पर ही घर बनाने की बात करता। कहता था, छोटा-सा घर बनाएंगे। आपके रहने पर मैं निश्चिन्त रहूँगा, दो वक्त दो लड़कों को पढ़ाने पर और भी बीस,पच्चीस रुपए आ जाएँगे। आप मेरी गिरस्ती की देखभाल करेंगे, मुझे फिर कौन-सी फिक्र होगी?

लम्बी सांस लेकर रमानाथ कहता था, घर छोड़कर जाना क्या मेरे लिए मुमकिन है बेटा? जमीन-जायदाद, गाय-बछिया, धान-पान, खेती-बारी, नवान्न-लक्ष्मी···

सीताराम इस समस्या का समाधान बड़ी आसानी से कर देता था। क्यों? खेत-जमीन अधिया पर उठा दीजिएगा, गाय-बछिया भी पालने के लिए दे देंगे, धान-पान साल में एकबार आकर बेच देने से ही चलेगा। नवान्न-लक्ष्मी का पूजन जहाँ भी हम रहेंगे वहीं होगा।

रमानाथ सिर हिलाता, ना-ना-नहीं। ऐसा नहीं होगा। डीह पर बाती नहीं जलेगी। इसके अलावा···। जरा चुप रहकर रमानाथ मन ही मन सोचता, फिर बोलता, बेटा, मेरे खेत बड़ी ही मेहनत-मशक्कत के बाद सोना उगलने वाले खेत बने हैं। पुकारने पर आवाज़ देता। ॲऽहेंऽ। फिर जरा चुप रहकर बोलता, बल्कि तू बहू को ले जाकर घर बसाना। कभी-कभार मैं देख आया करूँगा।

इसके बाद सीताराम चुप्पी साध लेता था। फिर कहता, फिर तो घर ही पर सब रहेंगे। मैं ही आया करूँगा छुट्टियों में। आपके न जाने पर अलग घर बसा कर क्या करूँगा?

रमानाथ की आँखों में आंसू आ जाते थे। वह जरा जोर लगाकर हुक्का गुड़गुड़ाने लगता था। तमाकू के धुंवे से अपने मुख के सामने धूम्रजाल बना डालता था।

सीताराम फिर कहता, रत्नहाटा में अगर काम मिल गया तो कोई बात ही नहीं। घर में खाकर ही काम करूँगा। जैसे घर में खाकर स्कूल पढ़ने जाया करता था, वैसा ही चलता रहेगा।

रमानाथ हंसकर कहता, यहाँ का स्कूल तुमको कोई काम नहीं देगा बेटा। देगा भी नहीं, और लेना भी क्या कहते हैं याने ठीक नहीं होगा। रत्नहाटा के बाबू हमें काश्तकार कहते हैं। ॲऽहेंऽ—नहीं-नहीं-नहीं। उससे परदेस खानदेस बेहतर होगा।

अचानक सारी कल्पना को व्यर्थ करता पत्र आया—सीताराम इसबार भी फेल हो गया है। रत्नहाटा के डाकघर से सीताराम खुद ही चिट्ठी ले आया। सिर झुकाये खुद ही उसने कहा, इसबार भी पास नहीं कर सका हूं बाबा।

उसकी सुखी आँखें देखकर रमानाथ ने अपने आँसुओं को रोका वर्ना उसकी आँखों में आँसू आ गये थे।

तीनेक दिन के बाद रमानाथ बोला, सीता बेटा, अब घर बैठ कर खेती-बारी देखो। बहू को भी लिवा लाता हूँ। तेरे घर पर न रहने से उसका भी यहाँ जी नहीं लगता। एक महीना, दो महीना गुजरते-न-गुजरते पीहर चले जाना चाहती है। उसे पीहर में अब और रखना अच्छा नहीं दिखता।

सीताराम आदतन थोड़ा चुप रहकर बोला, जो आपकी मर्जी हो कीजिए। दिन तय कर एक चिट्ठी लिख दीजिए।

रमानाथ बोला, मेरा जितना कुछ है, उससे तुझे तंगी-कमी नहीं होगी। पढ़ना तेरी तकदीर में नहीं, वर्ना कोशिश में तेरी कोई खामी नहीं, यह तो मैं जानता हूँ। चाहे तो एक बार और…। बात खतम करने की हिम्मत नहीं पड़ी रमानाथ की।

सीताराम बोला, नहीं, अब और नहीं पढ़ूंगा।

रमानाथ ने आराम की साँस ली। हँसकर बोला, कोई तुझे मूरख तो नहीं कह सकेगा।

सीताराम हँसा। पिता की इस तसल्ली से उसकी आँखों में आँसू निकलने को हुए इसलिए हँसी से उनको ढाँपने की कोशिश की। अगले ही क्षण वह उठ कर चला गया।

••

इस महीने की पच्चीस तारीख तय हुई है बहू को ले आने के लिए। रमानाथ खुद ही जाकर ले आयगा। सीताराम जाने में संकोच महसूस करेगा—यह मन में कूत कर रमानाथ ने खुद ही कहा, समझे, मैं ही बहू को लिवा लाने जाऊंगा। बहुत दिनों से समधी जी से मुलाकात नहीं हुई; फिर समधिन जी का पकाया पकवान भी खा आऊंगा, नजदीक दो कोस की दूरी पर गंगा-माई भी है, नहा आऊंगा। तुझे दो-चार कामों की जिम्मेदारी सौंप जाता हूं—उनको कर रखना। काम है—तख्तपोश की मरम्मत, पड़ोसी के घर से दो कथरियाँ तैयार करा लेना, घर-द्वार खड़िया-मिट्टी से पुतवाना। और भी कई इसी तरह के छोटे-मोटे काम। समधी के घर को रवाना होने से पहले खुद ही सबकुछ निपटाने की कोशिश रमानाथ करेगा, लेकिन अगर सब निपट न सका तो उसकी भी जिम्मेदारी सीताराम को लेनी पड़ेगी।

इन्हीं सब कामों में रमानाथ व्यस्त था—व्यस्त शब्द से भी वह व्यक्त नहीं होगा, वह करीब-करीब मस्त हो गया था। रमानाथ की कितनी साधमरी गिरस्ती, उसी गिरस्ती में लक्ष्मी आएगी। सीताराम गृहस्थ बनेगा।

सीताराम चुपचाप बैठे सबकुछ देखता था। भरसक कोशिश करता था कि सबकुछ अच्छा लगे। अपनी असफलता का दुःख भूल जाना चाहता था। मनोरमा की इस परिमार्जित घर-गिरस्ती के बीच कल्पना करने की कोशिश करता और पुलकित होने की इच्छा होती उसे। लेकिन वह इच्छा आँसों मन

में उभर कर ही विला जाती। कोई मानो साथ ही साथ उसे चाबुक मारता।

विवाह के बाद प्रथम परिचय से ही वह मनोरमा से बताता रहा है, वह पढ़ाई कर रहा है, वह पंडित होगा, सद्गोप होते हुए भी वह किसान नहीं बनेगा। कैसे, कौन-सा मुंह लेकर वह मनोरमा के सामने जाकर खड़ा होगा?

इसके अलावा कामना की आग भड़ककर उसको अस्थिर बनाती रही। जिस कामना का पथ रुद्ध हो जाने से किसी रात को उसने 'मेरी साध न मिटी, आशा नहीं पूरी हुई' गाना गाया था, जिस कामना की अस्थिरता से वह हुगली पढ़ने चला गया था, उसी कामना की बेचैनी! आखिरकार क्या वह एक किसान बनकर ही रह जायगा? आग जाने कब भड़क उठी थी, उस वक्त समझ नहीं सके थे। आज वह अब बुझेगी नहीं।

इसी गाँव में रास्ते पर खड़े जमींदार के नायब ने एक दिन कहा था, उसे साफ याद है, किसान से बड़ा दाता नहीं, पर बिना जूते के देता नहीं। बाबू लोग कहते हैं—किसान गँवार।

सीताराम फिर सख्त होकर अपने पैरों पर खड़ा हो गया। पिता से बिना पूछे ही चारों ओर शिक्षक की नौकरी ढूंढ़ने कगा। नार्मल पास करने के बाद जो वह करने वाला था, वही करेगा वह।

फिर वह रमानाथ के पास एक अजीब-सा प्रस्ताव लेकर आया। रत्नहाटा में उन्हीं के गांव के आठ आना हिस्से वाले जमींदार के घर में दो लड़कों को पढ़ाने के लिए एक गृह-शिक्षक की जरूरत है, दो जून खाना और चार रुपए वेतन पर। कई दिन से सीताराम चारों ओर घूमता रहा है। एक दिन विप्रहार भी गया था। विप्रहार यहाँ से चार मील दक्षिण में है। वहाँ एक माइनर स्कूल है। दो दिन अभयापुर गया था। रत्नहाटा उनके गाँव से ढाई मील उत्तर में है, रत्नहाटा से और भी सात मील उत्तर में है अभयापुर। अभयापुर में भी एक माइनर स्कूल है। लेकिन कहीं भी कुछ नहीं हुआ। सीताराम मुँह लटकाये घर लौट रहा था, अचानक भेंट हो गई जमींदार-गृह के खेती की देखभाल करने वाले गुमाश्ते कन्हाई राय के साथ। सब कुछ सुनकर कन्हाई राय ने प्रस्ताव किया, हमारे घर के दो छोटे बाबुओं को पढ़ाने के लिए पंडित चाहिए। पढ़ाओगे? सीताराम ने दुविधा नहीं की, राजी हो गया। दो लड़कों को पढ़ाना है, दो जून खाना और चार रुपए वेतन। रमानाथ जानता है, वह चार रुपया वेतन भी उसे नियमित नहीं मिलेगा, शायद पूरा भी नहीं मिलेगा। जमींदार घराने के लोग प्रजा के बेटे से विद्या सलामी में लेने में कुंठित नहीं होंगे। फिर भी सीताराम ने नहीं माना। वह दोनों जून लड़कों को पढ़ाएगा और दस से चार बजे तक बाबुओं के ठाकुरबाड़ी में छोटे बच्चों के लिए एक लोअर प्राइमरी पाठशाला खोल देगा; फीस होगी हर बच्चा चार आने। लेकिन उससे भी कितने नए होंगे? और जमींदार-घराने के बेटे इस खेतिहर गाँव के लड़के की क्या र-पंडित के रूप में इज्जत करेंगे?

सीताराम ही जाने !

रमानाथ ने कहा था, अगर पाठशाला ही खोलनी है तो गाँव में ही क्यों नहीं खोलता ?

सीता ने कहा, ताऊ जी के बेटे, बड़े भाई गोविन्द दादा ने पाठशाला खोल रखी है—क्या उससे मैं रार मोल लूँ ?

इस बात का जवाब रमानाथ नहीं दे सका। लेकिन खुराक और चार रुपए वेतन की मास्टरी कर होगा क्या ?—इस बात का जवाब भी सीताराम नहीं दे सका। न दे सके, शायद इसका कोई जवाब ही नहीं, फिर भी—

फिर भी सीताराम मानेगा नहीं। उसकी आँखों पर एक दिन का चित्र तिर रहा है। रत्नहाटा के बाबुओं के बेटों ने इस गाँव के सद्गोप शिक्षक को नमस्कार किया था। आग उसी दिन से भड़की है।

रोजाना खान-खाना खाकर घर आएगा और जमींदारी के सरिश्तेखाने में काम सीखने का बन्दोबस्त होगा—कन्हाई राय के यह वादा देने पर रमानाथ ने आखिरकार फिर कोई एतराज नहीं किया।

एक रामायण, कृष्ण का शतनाम, लक्ष्मी जी की पाँचाली—इनका एक बस्ता लेकर रमानाथ ने बेटे के माथे से छुवाया। तुलसी बिरवा के नीचे से मिट्टी लेकर दही के साथ मिलाकर उसका टीका बेटे के माथे पर लगाया। फिर सिर पर हाथ रख एक सौ आठ बार कृष्ण नाम का जाप कर सारे अंगों पर तीन बार हाथ फेरने के बाद बोला, भगवान का नाम लेकर यात्रा करो बेटा ! कोई पाप मत करना, ऊँचे की ओर मत देखना।—कहते हुए होठ उसके काँपने लगे। आँखों की कोर में आँसू आ गये थे।

सीताराम ने प्रणाम किया।

फिर एक बार बेटे के सिर पर हाथ रख रमानाथ बोला, रोजाना रात को घर लौट आओगे। लालटेन लेकर आओगे और एक लाठी।—कहकर अपनी जवानी की सहचर—बाँस की लाठी बेटे के हाथों में थमा दी। साँप-गोजर, सियार-भेड़िए, शोहदे-बदमाशों का मुकाबला इसी से करना।

सीताराम ने यात्रा की। गाँव पार करते ही खेत, खेतों के उस पार रत्नहाटा की पक्की इमारतें नजर आ जाती हैं। रईस लोगों का गाँव है। शिक्षा-दीक्षा-सभ्यता में बाबू लोग विशिष्ट हैं। सीताराम बचपन में उस स्कूल में पढ़ा है। इसके बाद भी कितने ही बार गया है। फिर भी इस गाँव के विचित्र लोगों को देखकर उसका विस्मय दूर नहीं हुआ, केवल विस्मय ही नहीं, थोड़ा-सा भय भी है मानो केवल भय ही नहीं, उनके प्रति क्षोभ भी है। बाबू लोग उनसे घृणा करते हैं और यह बात वे बेझिझक प्रकट करते हैं। कहते हैं —गँवार। निस्संकोच कहते हैं—तुम लोग तो जाति से किसान हो। दिल अपने-आप ही डोल उठता है।

लेकिन अपने अन्तर का क्षोभ वह प्रकट नहीं कर पाता। उन्हीं के बीच

वह जा रहा है। वहीं उसे रहना है।

भय वह नहीं करता। किसका भय, कैसा भय ? अन्याय वह करेगा नहीं, किसी का अन्याय वह सहेगा भी नहीं। फिर भी जाने कैसा लग रहा है !

सूटकेस हाथ में लेकर वह खेतों की पगडण्डी से रत्नहाटा की ओर बढ़ चला।

●●

दो

बहुत बड़ा सम्पन्न गांव। आधा शहर। दोनों तरफ से ही—भीतरी और बाहरी दोनों रूपों में ही। सीताराम का ताऊजाद भाई किशोर कृष्ण एम० ए० में पढ़ता है। रत्नहाटा का जिक्र होते ही वह तिरछे ढंग से बोलने लगते, रत्नहाटा की तुलना केवल देहाती कलकतिया कालेजी लड़के के साथ हो सकती है—हालांकि बिलकुल हाल ही के नहीं और न पक्के-पौढ़े—यह समझ लो जो फर्स्ट इयर पास कर सेकंड इयर में आ गया हो : घर की माली हालत अच्छी है, नियमित रूप से रुपये आते हैं। पन्द्रहवें दिन बाल कटाता है, हर दूसरे दिन हजामत बनवाता है लेकिन अब भी सेलून में दाखिल नहीं हो पाता। रेस्त्रां में चाय-टोस्ट, आमलेट खाता है लेकिन फार्पो या अन्य किसी साहबी होटल में नहीं जाता, डरता भी है और रुचि भी आड़े आती है; कविता नहीं लिखता, काव्यचर्चा करता है, योरोपीय लेखकों तथा पुस्तकों के नाम रट रखे हैं, लेकिन किताबें पढ़ी नहीं, बड़ी कठिन लगती हैं। राजनीति पर बहस करता है, वन्दे-मातरम् से लेकर इन्कलाब जिन्दाबाद तक, सभी बोलियां तोता रटन्तु-सा बोलता रहता है। कालेज-अधिकारियों के साथ हुए हंगामे में हुजूम के पीछे रहता, साथ भी। लेकिन हड़ताल होने पर कालेज में चोरी-छिपे आ जाता है। पोशाक फैशन माफिक लेकिन इस्तरी बेढंगेपन से की हुई। कृष्ण किशोर खुद कट्टर हिन्दू है, बहुत बड़ी चुटिया रखता है। इसलिए उसके मुंह ये बातें बड़ी अच्छी लगतीं।

यहां सब-रजिस्ट्री दफ्तर है, पोस्ट आफिस, थाना है, यहां तक कि एक सर्कल डिप्टी ने भी यहां अपना हेडक्वार्टर खोल रखा है। स्कूल, बोर्डिंग, गर्ल्स यू० पी० स्कूल है, लायब्रेरी है, अमेचर थियेटर है, महिला-समिति है, यहां तक कि साहित्य-सभा भी है यहां पर। फुटबाल मैच खेलने के लिए एक कप तक है, किसी भद्र सन्तान ने स्कूल के दिवंगत बंगला-साहित्य-शिक्षक के स्मृति-रक्षार्थ दान किया है। प्रवीण लोग तम्बाकू पीते, नये जमाने के बाबू लोग सिगरेट। सभी के पास कुछ देवदत्त सम्पत्ति है। लेकिन युवकों में प्रायः सभी मूर्ति-पूजा के विरोधी हैं। यात्रा करते समय सभी दही का टीका लगाकर घर

मे निकलते हैं किन्तु बाहर आते ही सबसे पहले जेब से रूमाल निकालकर टीका पोंछ डालते हैं। नये जमाने की लड़कियों और बहुओं में प्रायः सभी के पास जूते हैं लेकिन गांव में कोई भी पहनती नहीं, कहीं जाना हो तो कागज में लपेट कर स्टेशन पहुँचने के बाद ही पहनती हैं।

प्रवीण बाबू लोग सीधे गाली देते हैं, साला, हरामजादा, बदमाश, बदजात कहकर; नये बाबू लोग अंगरेजी में गाली देते हैं, 'डैम, स्वाइन' कहकर। बात-बात में कह देते, नानसेन्स। किशोर की बातें सुनकर सीताराम को कौतुक का बोध हुआ और खुशी भी हुई। लेकिन उसने कभी इन सारी बातों को विवेचना के साथ देखा-परखा नहीं। उसको खुद ही बुरा लगता, यहाँ नई रोशनी वाला कोई भी तालव्य 'श' का उच्चारण नहीं कर पाता, उनके लिए सभी अंगरेजी 'एस' के समान है। बाजारटोले और बाबूटोले के जो लोग निचले तबके के है, वे यार-दोस्तों से मुलाकात होते ही उनको सानन्द सम्भाषित करते, क्यों बे स्ला ?

ध्वनि की प्रतिध्वनि-सी जवाब आता, क्यों रे स्ला ?

एक और डर है सीताराम को। डर के साथ नफरत भी है। यहाँ लगभग सभी शराब पीते है, प्रवीण लोग तांत्रिक मतानुसार उसे कारणवारि बना लेते हैं और नवीन लोग अपने-अपने अड्डों पर इज्जत बनाये रखकर पीते हैं। कुछ नियमित पियक्कड़ ऐसे है जो दुकान की शराब पीकर रास्ते पर हो-हल्ला मचाते हैं, आस्तीन समेट कर मुंडई भी करते हैं, लेकिन छुरा-चक्कू चलाने की हिम्मत नहीं करते, कोई निरीह मिल जाये तो कोई-न-कोई कसूर निकालकर बड़ी बहादुरी के साथ दो-चार घूंसा-लप्पड़ रसीद कर ही देते हैं।

रत्नहाटा में प्रवेश कर गांव के नुक्कड़ पर सीताराम एकबार ठिठक कर खड़ा हो गया। सामने ही मणिलालबाबू का घर है। मणिलालबाबू कचहरी के बरामदे पर खड़े मूँछों पर ताव दे रहे हैं। उनके छोटे भाई महीन अद्धी का कुरता पहने एक बाइसिकल की सीट पर कोहनी रखे खड़े हैं, कहीं जाने से पूर्व शायद दादा से कुछ कह रहे हैं।

कन्हाई राय बोले, क्यों, खड़े क्यों हो गये ?

सीताराम ने पीछे पलट कर एक बार अपने गांव की ओर देखा। ताड़, शिरीष, आम और बंसवारी के घने घिराव के बीच वह विलुप्त हो गया है।

कन्हाई राय ने फिर कहा, चलो।

सीताराम ने फिर अपने को संयत और दृढ़ बना लिया और कहा, चलिए।

मणिलाल बाबू की कचहरी के सामने आकर उसका दिल धड़कने लगा। मणिलाल बाबू को यहा सभी लोग 'जरनैली' कहते है। बातचीत, चालढाल आदि सभी बातों में वे विशिष्ट हैं। सीताराम को अपने बाप का उपदेश याद आया। इसके अलावा कन्हाईराय ने पहले ही झुककर नमस्कार की मुद्रा में उनको प्रणाम किया, सीताराम ने भी अनुरूप ढंग से प्रणाम किया। सीताराम

वह जा रहा है। वहीं उसे रहना है।

भय वह नहीं करता। किसका भय, कैसा भय ? अन्याय वह करेगा नहीं, किसी का अन्याय वह सहेगा भी नहीं। फिर भी जाने कैसा लग रहा है !

सूटकेस हाथ में लेकर वह खेतों की पगडण्डी से रत्नहाटा की ओर बढ़ चला।

●●

दो

बहुत बड़ा सम्पन्न गांव। आधा शहर। दोनों तरफ से ही—भीतरी और बाहरी दोनों रूपों में ही। सीताराम का ताऊजाद भाई किशोर कृष्ण एम० ए० में पढ़ता है। रत्नहाटा का जिक्र होते ही वह तिरछे ढंग से बोलने लगते, रत्नहाटा की तुलना केवल देहाती कलकतिया कालेजी लड़के के साथ हो सकती है—हालांकि बिलकुल हाल ही के नहीं और न पक्के-पौढ़े—यह समझ लो जो फर्स्ट इयर पास कर सेकंड इयर में आ गया हो : घर की माली हालत अच्छी है, नियमित रूप से रुपये आते हैं। पन्द्रहवें दिन बाल कटाता है, हर दूसरे दिन हजामत बनवाता है लेकिन अब भी सेलून में दाखिल नहीं हो पाता। रेस्तां में चाय-टोस्ट, आमलेट खाता है लेकिन फार्पो या अन्य किसी साहबी होटल में नहीं जाता, डरता भी है और रुचि भी आड़े आती है; कविता नहीं लिखता, काव्यचर्चा करता है, योरोपीय लेखकों तथा पुस्तकों के नाम रट रखे हैं, लेकिन किताबें पढ़ी नहीं, बड़ी कठिन लगती हैं। राजनीति पर बहस करता है, वन्देमातरम् से लेकर इन्कलाब जिन्दाबाद तक, सभी बोलियां तोता रटन्तु-सा बोलता रहता है। कालेज-अधिकारियों के साथ हुए हंगामे में हुजूम के पीछे रहता, साथ भी। लेकिन हड़ताल होने पर कालेज में चोरी-छिपे आ जाता है। पोशाक फैशन माफिक लेकिन इस्तरी बेढंगेपन से की हुई। कृष्ण किशोर खुद कट्टर हिन्दू है, बहुत बड़ी चुटिया रखता है। इसलिए उसके मुंह ये बातें बड़ी अच्छी लगतीं।

यहां सब-रजिस्ट्री दफ्तर है, पोस्ट आफिस, थाना है, यहां तक कि एक सर्कल डिप्टी ने भी यहां अपना हेडक्वार्टर खोल रखा है। स्कूल, बोर्डिंग, गर्ल्स यू० पी० स्कूल है, लायब्रेरी है, अमेचर थियेटर है, महिला-समिति है, यहां तक कि साहित्य-सभा भी है यहां पर। फुटबाल मैच खेलने के लिए एक कप तक है, किसी भद्र सन्तान ने स्कूल के दिवंगत बंगला-साहित्य-शिक्षक के स्मृति-रक्षार्थ दान किया है। प्रवीण लोग तम्बाकू पीते, नये जमाने के बाबू लोग सिगरेट। सभी के पास कुछ देवदत्त सम्पत्ति है। लेकिन युवकों में प्राय: सभी मूर्ति-पूजा के विरोधी हैं। यात्रा करते समय सभी दही का टीका लगाकर घर

से निकलते हैं किन्तु बाहर आते ही सबसे पहले जेब से रूमाल निकालकर टीका पोंछ डालते हैं। नये जमाने की लड़कियों और बहुओं में प्रायः सभी के पास जूते हैं लेकिन गांव में कोई भी पहनती नहीं, कहीं जाना हो तो कागज में लपेट कर स्टेशन पहुँचने के बाद ही पहनती हैं।

प्रवीण बाबू लोग सीधे गाली देते हैं, साला, हरामजादा, बदमाश, बदजात कहकर; नये बाबू लोग अंगरेजी में गाली देते हैं, 'डैम, स्वाइन' कहकर। बात-बात में कह देते, नानसेन्स। किशोर की बातें सुनकर सीताराम को कौतुक का बोध हुआ और खुशी भी हुई। लेकिन उसने कभी इन सारी बातों की विवेचना के साथ देखा-परखा नहीं। उसको खुद ही बुरा लगता, यहाँ नई रोशनी वाला कोई भी तालव्य 'श' का उच्चारण नहीं कर पाता, उनके लिए सभी अंगरेजी 'एस' के समान है। बाजारटोले और बाबूटोले के जो लोग निचले तबके के हैं, वे यार-दोस्तों से मुलाकात होते ही उनको सानन्द सम्भाषित करते, क्यों बे स्ला?

ध्वनि की प्रतिध्वनि-सी जवाब आता, क्यों रे स्ला?

एक और डर है सीताराम को। डर के साथ नफरत भी है। यहाँ लगभग सभी शराब पीते हैं, प्रवीण लोग तान्त्रिक मतानुसार उसे कारणवारि बना लेते हैं और नवीन लोग अपने-अपने अड्डों पर इज्जत बनाये रखकर पीते हैं। कुछ नियमित पियक्कड़ ऐसे हैं जो दुकान की शराब पीकर रास्ते पर हो-हल्ला मचाते हैं, आस्तीन समेट कर गुंडई भी करते हैं, लेकिन छुरा-चक्कू चलाने की हिम्मत नहीं करते, कोई निरीह मिल जाये तो कोई-न-कोई कसूर निकालकर बड़ी बहादुरी के साथ दो-चार घूसा-थप्पड़ रसीद कर ही देते हैं।

रतनहाटा में प्रवेश कर गाव के मुवकड़ पर सीताराम एकबार ठिठक कर खड़ा हो गया। सामने ही मणिलालबाबू का घर है। मणिलालबाबू कचहरी के बरामदे पर खड़े मूँछों पर ताव दे रहे हैं। उनके छोटे भाई महीन अद्धी का कुरता पहने एक बाइसिकल की सीट पर कोहनी रखे खड़े हैं, कहीं जाने से पूर्व शायद दादा से कुछ कह रहे हैं।

कन्हाई राय बोले, क्यों, खड़े क्यों हो गये?

सीताराम ने पीछे पलट कर एक बार अपने गाव की ओर देखा। ताड़, शिरीष, आम और बंसवारी के घने घिराव के बीच वह विलुप्त हो गया है।

कन्हाई राय ने फिर कहा, चलो।

सीताराम ने फिर अपने को संयत और दृढ़ बना लिया और कहा, चलिए।

मणिलाल बाबू की कचहरी के सामने आकर उसका दिल धड़कने लगा। मणिलाल बाबू को यहां सभी लोग 'जरनैलो' कहते हैं। बातचीत, चालढाल आदि सभी बातों में वे विशिष्ट हैं। सीताराम को अपने बाप का उपदेश याद आया। इसके अलावा कन्हाईराय ने पहले ही झुककर नमस्कार की उनको प्रणाम किया, सीताराम ने भी अनुरूप ढंग से प्रणाम किया। सी

का भाग्य है कि मणिलाल ने इनके प्रणाम को तवज्जो नहीं दिया। वे मणि-वावू की कचहरी पार कर गये। लेकिन थोड़ा-सा वढ़ते ही मणिलाल वावू के छोटे भाई ने पुकारा, अजी कन्हाई राय !

जी।

कन्हाई पलटा। सीताराम वहीं खड़ा रहा। कुछ देर वातचीत के वाद कन्हाई ने पुकारा, सीताराम, सुनो, वावू बुला रहे हैं।

सीताराम आकर खड़ा हो गया।

तीखी नज़रों से उसको सिर से पैर तक देखकर मणिलालवावू वोले, रमानाथ मुखिया के वेटे हो तुम ? नार्मल पास किया है ? वाह ! क्या नाम है तुम्हारा ?

सीताराम ने सविनय कहा, जी, मेरा नाम है सीताराम पाल।

मणिलाल वावू वोले, वाह ! वहुत खूव ! नार्मल पास किया है तुमने ! वड़ा अच्छा है। वावुओं के वेटों को पढ़ाओगे ? वहुत खूव ! तुम लोगों में पढ़ाई की वड़ी लहर उठी है न ?

सीताराम खामोश रहा।

मणिवावू के छोटे भाई ने कहा, हाँ, इसका एक ताऊजाद भाई किशोरकृष्ण पाल वी० ए० पास कर एम. ए. और ला पढ़ रहा है, किशोर का एक और भाई इस वार मैट्रिक देगा। वह लड़का भी अच्छा है।

मणिलाल वावू वोले, वाह वहुत खूव ! म्लेच्छ-विद्या में तो व्राम्हण-सूद्र का कोई भेद नहीं, सभी को अधिकार है। तुम लोग पढ़ो-लिखो, आदमी वनो। तुम्हारी जाति की एक वदनामी है कि मूरख होते हैं, इस वदनामी को दूर करो तुम लोग।

एक अदम्य उच्छ्वास से सीताराम का दिल भर उठा। आंखों में आंसू आ गये। उसने तीखे श्लेषपूर्ण आचरण की प्रत्याशा की थी। ऐसे सस्नेह आचरण, ऐसी अकृपण प्रशंसा की उसने प्रत्याशा नहीं की थी। उस अप्रत्याशित उदार वरताव से सीताराम का दिल भावविह्वल हो उठा। वह अपने को सँभाल न सका, झुककर मणिलाल वावू के पैर छूकर उसने प्रणाम किया।

मणिलाल वावू के मुख पर अभिजातसुलभ मुस्कान खिल आई थी लेकिन अचानक ही वे चौंक पड़े, वोले, तुम रो रहे हो ?

सीताराम की आंखों में आंसू आ गये थे, वही आंसू उनके पैरों पर ढुलक पड़े हैं। गर्म सजल स्पर्श से अनुमान कर लेना मणिलालवावू जैसे विलक्षण व्यक्ति के लिए कठिन नहीं हुआ।

सीताराम झेंपकर मुस्काया और आँखें पोंछ वोला, जी नहीं। उसके वाद ही उसने मणिवावू के छोटे भाई को नमस्कार किया।

मणिलाल वावू उसके दिल की उछाह को भांप गये थे। उनको भी कुछ अच्छा ही लगा और इस उछाह के स्पर्श से उनमें भी शायद कुछ भावस्पंदन

जाग्रत हो उठा। उन्होंने कहा, हमारे गांव में स्कूल है—भद्रलोगों का गांव है लेकिन ब्राह्मणों के लड़के, हमारे बेटे पढ़ते-लिखते नहीं। स्कूल बनने के बाद दो लड़के बी. ए. पास कर चुके हैं, और कोई भी एंट्रान्स तक पास नहीं कर सका। खैर, तुम लोग सीखो, तुम लोग बड़े होओ।

यकायक सीताराम हाथ जोड़कर बोल पड़ा, मैंने नार्मल पास किया है यह आपसे किसने बताया, यह मुझे नहीं मालूम, लेकिन मैंने दो बार परीक्षा दी है, पास नहीं कर सका हूं।

मणिलालबाबू अब विस्मित हुए।

सीताराम ने कहा, तो अब मैं जाऊं ?

मणिलालबाबू बोले, तुम्हारा कल्याण होगा। बाद में मुझे मिलना।

■■

सीताराम भाग्य में विश्वास करता है। सभी सुख और दुःख के नियन्ता के रूप में उससे भय भी करता है, भक्ति भी। अपने भाग्य को वह बारम्बार प्रणाम करता है। आज के दिन के लिए इतनी तृप्ति, इतना आश्वासन, इतना आनन्द उसने संचित कर रखा था।

मणिलालबाबू का यह आशीर्वाद और स्नेहपूर्ण बरताव ही सबकुछ नहीं, उसे और भी कुछ मिला। अपने कर्मस्थल, जमींदार भवन में आकर लड़कों के पढ़ने के कमरे में उसने अपना सूटकेस रखा। यह कचहरी उसने इससे पूर्व भी देखी है। पहले भी वह यहां आया है। तब जमींदार बाबू जीवित थे। वे बड़े गम्भीर और भयंकर प्रकृति के थे। प्रताप और प्रतिष्ठा में वे मणिलालबाबू के समकक्ष तो थे ही, तिस पर अपने सहज सरल आचरण और स्पष्टवादिता के कारण सभी के आदरणीय भी थे। विषयी व्यक्ति थे किन्तु कुटिलपंथा के पक्ष-पाती नहीं थे। विरोध ठन जाने पर वे जो कुछ करते कह-सुन कर करते थे और अन्याय चाहे किसी का भी हो और कहीं का भी हो, प्रतिवाद करते थे। सीताराम के मन में एक बात बड़े गहरे में रेखांकित है। यहीं यह कत्ल हुआ था, इस गांव के और थाने के सामने। पुलिस ने सन्देहवश इसी गांव के दो भद्र सन्तानों को गिरफ्तार किया। भद्र सन्तानों में जो लोग शराब पीकर गुंडई की भँडैती कर अपने को खौफनाक रूप में प्रतिष्ठित करना चाहते हैं, उन्हीं में अमूल्य और भूपति को इस सिलसिले में पुलिस साहब ने पकड़ा और गांव के समाजपतियों को बुलवाकर इन लोगों के चरित्र के बारे में राय जाननी चाही। इस घर के मालिक को भी बुलाया था। पूछा था, अमूल्य और भूपति इन दोनों को आप जानते हैं ? ये लोग शराब पीते हैं ?

मालिक ने जवाब दिया था, हां जानता हूं। दोनों ही गांव के रिश्ते मेरे नातेदार हैं और शराब पीते हैं।

क्या ये भयानक प्रकृति के हैं ?

भयानक प्रकृति कहने से आपका तात्पर्य क्या है, ?

ठीक । लेकिन शराब पीकर वे चिल्लाते हैं, डींग हांकते हैं, शायद एकाध बेगुनाह को एकाध घूंसा भी जड़ देते हैं।

इसको क्या आप भयानक प्रकृति के नहीं कहते ? शराब पीते, चिल्लाते, लोगों को मारते-पीटते ?

मालिक ने जवाब दिया था, सुनिए साहब, शराब बहुत-सारे लोग पीते हैं, मैं भी पीता हूं, शायद आप भी पीते हों; इसलिए शराब पीने से ही कोई भयानक प्रकृति का नहीं बन जाता । शराब पीते ही उसकी एक क्रिया होने लगती है । कोई चीखता-चिल्लाता है, कोई रास्ते पर पड़ा रहता, कोई सावधानी से इज्जत बचाकर घर में रहता है । साधू लोग उसी को कारण बनाकर भगवान के नाम का जप करते हैं, काली की साधना करते हैं। ये लोग शोरगुल मचाते हैं, शराब पीकर फिर कभी सड़क पर भी पड़े रहते हैं लेकिन जिस अर्थ में आप उनको भयानक प्रकृति के कह रहे हैं, उस प्रकृति के वे नहीं हैं। जो सन्देह आप कर रहे हैं वह उनके द्वारा सम्भव नहीं।

साहब ने आश्चर्य से उनके मुख की ओर देखा था । मालिक ने फिर हँसकर कहा था, वे शराब पीकर डींग हांकते हैं, लोगों को मारते-पीटते भी हैं और इसी से अगर वे भयानक प्रकृति के बन जाते हैं साहब, तो एक बात और भी बता दूं साहब, शराब पीकर दूसरे के कष्ट पर उनको रोते भी मैंने देखा है । इन अपनी आँखों से कई बार देखा है । एक बार यहां के एक महान व्यक्ति की सख्त बीमारी के समय, मैंने देखा है, वे दोनों ही शराब पीकर भगवान को पुकारते कह रहे हैं, भगवान हमारी आयु लेकर इस महान व्यक्ति को जिला दो । तो क्या आपके तर्क के अनुसार वे महान व्यक्ति नहीं हैं ?

इसी घटना की स्मृति में ही इस घर के मालिक सीताराम के मन में जीवित हैं । श्रद्धा और भय ये दोनों मिलकर उसे इस घर के सम्बन्ध में विह्वल बनाये हुए हैं । सीताराम की धारणा है कि इस घर के लड़कों के खून में प्रचंड दम्भ की एक धारा है। उसने सुना है, नाबालिगों के राज्य में, बड़ा लड़का बड़े ही उग्र स्वभाव का है। सीताराम का सौभाग्य है कि उसको पढ़ाना नहीं पड़ेगा, वह फर्स्ट क्लास में पढ़ता है । पढ़ाना है दो छोटे लड़कों को । लेकिन उनमें भी तो वही खून है । इस घर की मालकिन अब रानी मां हैं । वे ही सीताराम की सहारा हैं । सुना है वे बड़ी नेक हैं ।

सूटकेस रखकर कमरे पर उसने एक बार अपनी नजर दौड़ायी । काफी साफ-सुथरा मझोले आकार का कमरा । असबाब में केवल एक तख्तपोश और एक पुराने जमाने की मेज ।

कन्हाई राय ने कहा, इस कमरे में तुम रहोगे । अब चलो, मुंह-हाथ धो लो, रानी मां को प्रणाम करने जाना है ।

कचहरी से सटा हुआ एक बड़ा-सा तालाब है, पानी भी अच्छा है, पक्का बना घाट है । यह तालाब भी बाबुओं का है । सबकुछ मिलाकर सीताराम को

यह स्थान अच्छा ही लगा।

मकान के भीतर प्रवेश करने मे दो दरवाजे पार करने पड़ते हैं। दोनों दरवाजों के बीच में जो जगह है वहाँ खडे घर के भीतर की बातें सुनाई पड़तीं है किन्तु कुछ दिखाई नहीं पड़ता। घर के भीतर मे एक शोरगुल-सा सुनाई पडा। कन्हाई राय ठिठक कर खडा हो गया, हुआ क्या? प्रश्न मानो उसने अपने से ही किया, धीमी और डरी हुई आवाज मे।

सीताराम को सुनाई पड़ा, घर के भीतर बचकानी आवाज में कोई कह रहा है, मैं चोर नही हू और न मैं चोरी करने गया था। फुटबाल खेलकर घर लौट रहा था, देखा, उस मुहल्ले के छकू, कड़ि और भी कई लडके खेत मे शाम के अन्धेरे में मूली और बैंगन तोड रहे हैं। मैंने पूछा तो छकू ने कहा, हम लोग रात को फीस्ट करेंगे इसलिए तरकारी चुरा रहे है। मैंने भी उन लोगों को कुछ आलू खोदकर दे दिये।

नारी-कंठ की आवाज सुनाई पड़ी, क्यों दिये?

जवाब मिला, उनकी सहायता की। और चोरी कभी की नहीं थी, देखा, चोरी करने में कैसा लगता है।

नारी-कंठ ध्वनित हो उठा, लेकिन वह किसान अगर तुमको देख न लेता तो सवेरे उठकर बेशक गाली देता, किस गुखोर के बेटे ने, किस हरामजादे ने मेरा मूली-बैंगन चुराया है! तब वह गाली तुम्हारे मरे बाप पर जा लगती। गाली अगर वह देता तो उसका कोई कसूर नहीं! इस बरसात मे बेवक्त उसने कितनी मेहनत से मूली-बैंगन उगाया है।

किसी पुरुष-कण्ठ की भारी आवाज सुनाई पडी, रहने भी दीजिए माँ! बच्चा है, कर डाला है।

बच्चा मत कहिए नायब जी उसे, फर्स्ट क्लास मे पढ रहा है, सोलह साल का हो गया है, बच्चा कैसे है?

कन्हाई राय सकपका-सा गया था। सीताराम की मौजूदगी को शायद भुलाकर ही वह बोल पड़ा, रानी माँ बड़े बाबू को डाट रही हैं।

बचकानी आवाज सुनाई पड़ी अब। सीताराम समझ गया कि यह उग्र स्वभाव वाला बड़ा बेटा है। सीताराम सिहर उठा, इस लड़के ने अनायास कह दिया, चोरी करने में कैसा लगता है, देख रहा था। इस बार वह क्या उत्तर देगा, सुनने के लिए सीताराम उद्ग्रीव हो उठा। लड़का कह रहा है, उसने सुना, हाँ, मुझसे बेजा काम हो गया है इसके लिए मैं उनसे क्षमा माग ले रहा हूँ। इसके बाद ही उसने किसी और को सम्बोधित करते हुए कहा, मैंने दोष किया है, इसके लिए मैं तुमसे क्षमा मांग रहा हूं।

घबरायी आवाज मे शायद उस किसान ने कहा, जी बाबू! जी बाबू! जी नही। मुझसे आप कहते तो मैं ही खेत से तोड़कर आपको दे देता

रानी माँ ने फिर कहा, नायब जी, इस आदमी को पाच सेर,

बाजारदर का दाम चुका दीजिएगा। और यह दाम धीरा के नाश्ते के पैसे में से काट लीजिएगा।

सीताराम विस्मय से अभिभूत हो गया। कहाँ आ पड़ा वह ! इनकी यह ध्यान-धारणा, यह रीति-नीति उसके लिए केवल विस्मयकर ही नहीं बल्कि उसे एक प्रकार के घुटन का भी अनुभव होने लगा। सिर्फ इतना ही नहीं, उसे लग रहा है, इसमें ऐसा कुछ निहित है जो इशारे से उस पर शासन कर रहा है। वह मानों बहुत छोटा हो गया।

नायब जी का गला सुनाई पड़ा, आओ जी आओ।

पँछुट सुनाई पड़ने लगी, लम्हेभर में कन्हाई सचेतन हो उठा, ऐसे छिपकर बातें सुनने का वह आदी है। उसने गला खँखार कर अपने आने की सूचना देते हुए कहा, आओ आओ। यह तो तुम्हारे जमींदार की ही कोठी है, अपना ही घर है। आओ, सकुचाते क्यों हो ?

नायब जी निकल आए, साथ में एक नीची जाति का किसान। सीताराम समझ गया, इसी के खेत से इस घर के बड़े लड़के ने आलू चुराया है, देख रहा था कि चोरी करने में कैसा लगता है।

कन्हाई ने नायब जी से कहा, यह आपके-हमारे रमानाथ दादा का बेटा है, सीताराम। मां के पास ले जाऊँ ?

नायब के कुछ कहने से पूर्व ही रानी माँ निकल आईं, नायब जी, उस आदमी से आप कुछ न कहें। उसने मुझसे शिकायत नहीं की। मुझे दूसरे आदमी की मार्फत इत्तला मिली थी। जिसने उनको आलू खोदते देखा है, उसी ने आकर मुझे बताया है।

माँ की बात खत्म होते ही कन्हाई बोल पड़ा, सीताराम आ गया है माँ।

यह है सीताराम ? आओ, आओ बेटा, घर के भीतर आओ।

सीताराम अचरज से इस माँ को देख रहा था। देहवर्ण की दीप्ति से ही उनके अवयव की सारी विशेषताएं मानो ढक गयी थीं। न देखने पर विश्वास नहीं होता, कृशकाया दीप्तगौरवर्ण मध्यवय की इस माँ को देखने पर लगता मानो एक ज्वलन्त शिखा हो। आँखें बड़ी नहीं, छोटी हैं। लेकिन देह-दीप्ति से सामंजस्य रखती हुई प्रखर दो आँखें। बस कंठस्वर कुछ विपरीत है—मधुर। सीताराम को उनके कंठस्वर से अभय मिला। उसने झटपट आगे बढ़ कर प्रणाम किया।

रानी माँ नहीं, माँ। सीताराम को लगा, रानी माँ से वे कहीं अधिक बड़ी हैं—केवल माँ हैं। माँ ने कहा, सीताराम को बैठने का आसन दो।

मकान के भीतर प्रवेश करते ही सबसे पहले सीताराम ने उस उग्र और विचित्र स्वभाव वाले बड़े बेटे को खोजा था। कहाँ है वह ? उसकी उग्र प्रकृति के बारे में उसने कानों से सुना था, इसके बाद अपने कानों उसकी अद्भुत बातें

सुनकर उसके कौतूहल और शंका की कोई सीमा नहीं रही। अकूत शंकाभरा कौतूहल ! "चोरी करने में कैसा लगता है, यह देखा"। यह कैसा लड़का है ? कहाँ है वह ? लेकिन वह नहीं है, शायद ऊपर चला गया है। इसी बीच अचानक आसन की बात सुनकर वह चौंक-सा पड़ा, आसन की प्रत्याशा उसने नहीं की थी। इसके लिए वह तैयार नहीं था। वह चंचल हो उठा, हाथ-पैरों से पसीना छूटने लगा। आत्मसंवरण कर उसने लज्जित हो संकोच से कहा, नहीं, नहीं माँ ! आसन किस लिए ? आसन नहीं चाहिए। आपके सामने—

उसके मुँह की बात छीनकर कन्हाई राय बोल पड़ा, ठीक बात है माँ, आपके सामने हम लोग क्या आसन पर बैठ सकते हैं ? आप ही का दिया खाकर जिन्दा है, फिर आपकी प्रजा भी तो हैं।

माँ हँसी, अनोखे स्नेहमधुर स्वर में प्रतिवाद करती हुई बोली, नहीं, नहीं राय, इस घर में सीताराम आज श्यामू-देबू का शिक्षा-गुरु बन कर आया है। इस घर में अन्न भी हम दया करके नहीं देंगे, वे ही दया कर ग्रहण करेंगे। जमींदार-प्रजा का रिश्ता अलग है। सीताराम, आसन पर उठ कर बैठो, बेटा !

सीताराम के मन में एक अजीब-सी उथल-पुथल मच गयी। उसका कोई स्पष्ट रूप नहीं, लेकिन एक आवेश है; उस आवेश ने उसको एक मर्यादामयी प्रेरणा से प्रेरित किया; उसके संकोच को दूर कर दिया। वह आसन खींच कर बैठ गया।

माँ चली गयी, बोली बैठो, मैं अभी आयी।

इतनी देर में सीताराम ने कोठी की ओर देखा। जमींदार होने पर भी छोटा जमींदार है, धनी नहीं कहा जा सकता, सम्भ्रान्त गृहस्थ हैं, घरद्वार भी उसी के अनुरूप। कुछ हिस्सा पक्का है तो कुछ मिट्टी का बना। मिट्टी के बने होने पर भी दालान पक्का-सा ही लगता। खम्बेवाले बरामदे, पक्की फर्श, मिट्टी के सलोतर पलस्तर के ऊपर पक्के मकान जैसी सफेदी की हुई; आँगन-चबूतरा सभी पक्के।

कन्हाई ने हंसकर किसी से कहा, आओ देबूदादा, तुम्हारे मास्टर जी हैं। आओ।

सीताराम की निगाह पड़ी, सामने बरामदे में एक खम्बे की आड़ से खूबसूरत-सा एक चेहरा झांक रहा है। उसकी आँखों से आँखें टकराते ही उसने फिक से मुस्करा कर मुख छिपा लिया।

सीताराम ने उसे सस्नेह पुकारा, आओ खोकाबाबू, आओ।

ऐन ऐसे ही वक्त माँ आकर खड़ी हो गयी। अपने हाथों एक तश्तरी में दो मिठाई लेकर आई हैं—मलाई के दो लड्डू, एक गिलास पानी। उतार कर उन्होंने कहा, तुम उन लोगों को 'बाबू' मत कहना बेटा !

फिर बोली, लो, पानी पी लो। पहली बार आए हो, ... कर लो। वह जरा मधु रखा है, उसी को पहले ले लो।

सीताराम को अब दिखाई पड़ा, एक ओर जरा-सा शहद है।

बिना किसी संकोच के उसने तश्तरी उठा ली। मधु चाट लेने के बाद उसने एक मिठाई उठा ली। दुकान की बनी नहीं, घर में बनाई हुई। ऐसी बेहतरीन मिठाई सीताराम ने कभी खाई नहीं थी। मुंह में रखकर लीलने की मानो इच्छा नहीं हो रही थी, खाने से ही तो खतम हो जायगी, बस एक ही तो बची है।

माँ ने इसी बीच बेटे को लाकर सीताराम के सामने खड़ा कर दिया। तुम्हारे मास्टर जी, नमस्कार करो।

बच्चे को माँ का रंग मिला है, मुखड़ा भी बड़ा मधुर-सा है, बस आँखें ही बड़ी प्रखर और चंचल हैं और शरीर बड़ा हल्का-सा, दुबला ही लगता है। वह मुस्करा रहा था, उस मुस्कान में उसकी चंचल प्रकृति का परिचय उभरा आ रहा है, मानो फूलों की कलियों के हरे आवरण के अन्तराल में उनकी मुंदी पखड़ियों के भीतर के रंग का आभास हो। आँखों से आँखें मिलते ही आंखें झुकाये ले रहा है। उससे मुस्कान और भी स्पष्ट होती जा रही है।

माँ ने फिर कहा, नमस्कार करो।

लड़के ने एकबार चट फुरती से सीताराम के पैर से हाथ लगा अपने माथे से छुवाया।

सीताराम सकपका कर बोल पड़ा, नहीं-नहीं। मुझे इस प्रकार से प्रणाम नहीं करना चाहिए। नमस्कार करना चाहिए।

मां ने हँसकर कहा, करने दो। उनका प्रणाम लेने पर तुम्हें कोई दोष नहीं लगेगा।

सीताराम बोला, क्या नाम है तुम्हारा ?

लड़का आदतन नीरव मुस्कराने लगा।

माँ बोली, बताओ, अपना नाम बताओ।

सिरी देवानन्द मुखोपाध्याय।

वाह ! बड़ा अच्छा नाम है, वैसा ही अच्छा लड़का भी।

माँ ने हँसकर कहा, अच्छा वह कतई नहीं। बड़ा ही नटखट है। इसको लेकर तुमको जरा परेशानी होगी। लेकिन श्यामू कहाँ गया ? श्यामू ! श्यामू !

ऊपर के किसी कमरे से आवाज आई, यहां हूं मैं।

क्या कर रहे हो ? नीचे आओ।

जवाब आया, दादा मुझे कैद में रख गये हैं।

माँ ने कहा, कोई बात नहीं, तुम्हारे मास्टर आए हैं, नीचे आओ।

दादा जब तक रिहा नहीं करते, कैसे आऊँ ?

दादा से बताओ। धीरा !

दादा हैं नहीं।

तो मैं तुम्हें रिहा कर रही हूं। मैं माँ हूं, दादा की भी गुरुजन हूं। मेरे

रिहाई कर देने पर दादा कुछ नहीं कहेगा।

अब दुमंजिले से एक सात-आठ साल का लड़का निकल आया। इस लड़के का रंग सांवला है, नाक-नक्शे अच्छे, पर जरा गम्भीर।

मां ने कहा, तुम्हारे मास्टर जी हैं, नमस्कार करो।

लड़के ने दोनों हाथ उठाकर बड़े ही सुन्दर ढंग से नमस्कार किया। कोई जड़ता नहीं, चंचलता नहीं, धीर और स्वच्छन्द भंगिमा में नमस्कार किया।

मां ने कहा, यह बड़ा धीर और शान्त है। बातें कम करता है।

सीताराम ने उसे पास खींच लिया। बोला, क्या नाम है तुम्हारा?

श्री श्यामानन्द मुखोपाध्याय।

क्या पढ़ते हो?

श्यामू बोलता गया, सरल बंगला पाठ,प्रथम भाग, सहज गणित, शिशु भूगोल पाठ, इतिहास की कहानियाँ प्रथम भाग, सचित्र लिखनप्रणाली, और दादा ने पढ़ने को दिया है श्रीयुक्त रवीन्द्रनाथ ठाकुर की 'कथा ओ काहिनी।'

अरे बाप रे, तुम तो बहुत-सारी किताबें पढ़ते हो!

श्यामू ने निसंकोच स्वीकारा, जी हां।

वाह, बहुत अच्छे लड़के हो!

छोटा देवानन्द शायद दादा का समादर देखकर ईर्ष्यातुर हो गया था। वह अब आगे बढ़कर बोला, मैं भी कविता जानता हूं, बोल सकता हूं। बताऊँ?—कह कर ही उसने शुरु कर दिया, सम्मति की प्रतीक्षा नहीं की, हाथ-पैर हिलाकर बड़े मजे में बोलने लगा—

"नामटी आमार गडाढर, सबाइ बले गडा,
सारा डिनटा रोदे टो-टो गाये धूलो काडा,
डाडा बलले, गाडा तुई-लिखबि पड़बि नें?
अमनि आमि केंडे दिलेम—एं-एं-एं-एं।"

आंखों पर हाथ रख एं-एं कर रोने का बेहतरीन अभिनय उसने किया। उसका वह हावभाव देखकर सीताराम और सभी हँसने लगे। और भी उत्साहित हो देवू कविता-पाठ करता रहा—

डीडी बलले— ना ना ना, तुमि भालो छेले,
सोना मानिक एस खानिक-हाडुडुडु खेले।

कहकर ही 'चल मारा चल कबड्डी, कबड्डी' कहते हुए लपक कर घर से निकल गया।

मां ने श्यामू से कहा, तुम कुछ सुना दो।

देवू की सफलता से श्यामू उत्साहित हो उठा था। सीताराम के पास से जरा दूर सरक कर वह खड़ा हो गया, एक नमस्कार किया, फिर बोला, कविगुरु रवीन्द्रनाथ ठाकुर की 'प्रार्थनातीत दान'—

"पाठानेरा जबे बाँधिया आनिल बन्दी शिखेर दल

सुहृदगंजे रक्तवरण हइल धरणीतल।"

सीताराम दंग रह गया। स्पष्ट उच्चारण, कवितापाठ में कहीं कोई छन्द-पतन नहीं, युक्ताक्षरों पर जोर डाल उच्चारण-कौशल से दो अक्षरों की क्रिया को लाकर सुन्दर पाठ करता जा रहा है। ऐसा कवितापाठ सीताराम स्वयं नहीं कर पाता। और कविता भी कितनी सुन्दर है! नार्मल स्कूल में रवीन्द्रनाथ ठाकुर की कविताएँ पढ़ाई नहीं जातीं। यहाँ के स्कूल में जब वह पढ़ता था तब भी पढ़ाई नहीं जाती थीं। उनको नोबेल प्राइज़ मिला है, यह सीताराम जानता है। लेकिन उनकी कविताएं खास कुछ उसने पढ़ी नहीं। लेकिन यह छोटा-सा लड़का!

श्यामू ने अपना कवितापाठ समाप्त किया—

"तरुसिंह कहे, करुणा तोमार हृदये रहिल गांथा
जा चेयेछ तार बेशी किछू देव, वेणीर संगे माथा।"

फिर उसने बताया, सिक्खों के लिए वेणी का कटना धर्मपरित्याग के समान दुषणीय है। यह तथ्य भी सीताराम के लिए नया था। वह अचम्भे के मारे हक्का-बक्का बना रह गया है। क्षणभर के लिए उसके मन में आया, इन लोगों को वह कैसे पढ़ाएगा?

हंसी मानो माँ के चेहरे पर जन्मजात है, वे हंसकर बोलीं, धीरा ने इन लोगों को यह सब सिखाया है। धीरानन्द को पहचानते हो न? मेरा बड़ा बेटा?

सीताराम का गला और तालू मानों खुश्क हो गये। परिचय-वैचित्र्य से धीरानन्द उसके तईं इस घर के मालिक जी के समान भय और श्रद्धा का पात्र बन चुका है। लार छुटते हुए उसने कहा, जी नहीं।

माँ ने पुकारा, धीरा!

श्यामू बोला, दादा साहित्य-सभा में लेख देने गया है।

माँ ने श्यामू से कहा, जाओ, मास्टरजी को ले जाओ।

अकेले कमरे में बैठे वह सोच रहा था। भाग्य ने उसके आज के दिन को विपुल सम्पदा से भर दिया है—रूप और परिमाण में वह सम्पदा विस्मयकारी है। दूसरी ओर भय से उसका दिल सकुचाता जा रहा है। सिमेंट की फर्श पर बैठा था, अचानक ही किसी मकान की पालिश की हुई संगमर्मर की फर्श उसे याद आगयी। हुगली में रहते वक्त एक मशहूर रईस की कोठी देखने जाकर ऐसी फर्श उसने देखी थी, हिमशीतल पिच्छिल प्रकाश छटा से चमचमा रही थी। देखकर उसको जितना विस्मय हुआ था उतना ही भय भी, उस फर्श पर पैर रखने में। गोबर और लाल मिट्टी से पुते हुए गृहांगन में जो सस्नेह अन्तरंगता है, उसके रंचमात्र का भी पता वहाँ न पाकर वह फर्श उसको अनात्मीय-सी लगी थी। वहाँ वह पैर नहीं रख सका था, अद्‌भुत एक अनुभूति से अभिभूत हो कुछ देर खड़े रहकर, दरवाजे से ही लौट आया था। यहाँ के परिचय में से भी उसी संग-

मर्मरी फर्श की अनात्मीयता मानों उभर आई है। इन लोगों को वह यहाँ कैसे पढ़ायेगा ?

क्या घर लौट जाये ? जिस तरह उस मरमर्मरी फर्श के छोर से वह लौट आया था ?

नहीं, वैसी इच्छा भी नहीं हो रही है।

उसका ताऊजाद भाई रत्नहाटा के बारे में जो बातें करता है, वे बातें सुन कर, उसे और उसके गाँव के सभी को आनन्द मिलता है, यह बात भी झूठी नहीं। इतने दिनों तक वही परिचय मिलता रहा। लेकिन आज और एक विचित्र परिचय जो उसे मिला उससे व्यंग करने की या उपेक्षा करने की प्रवृत्ति उसकी दब पड़ गयी है। यह स्नेह, यह समादर उसके लिए दुर्लभ वस्तु है। जो लोग इतनी दुर्लभ वस्तु दे सकते हैं, उनको कैसे वह बुरा कहे ? वे भी भले हैं, वे भी बुरे हैं—भले-बुरे मिलकर इन्सान होते हैं, भले भी हैं और बुरे भी—जितने भले, उतने बुरे।

बहुत देर तक वह स्तब्ध बैठा रहा। सोचता रहा।

नहीं, डर के मारे वह भागेगा नहीं। सब सीख लेगा वह। सीखने में भला कितने दिन लगेंगे ? यहाँ वह बहुत कुछ सीख सकेगा। घर में हालांकि मोटे भात और मोटे कपड़े की कोई तंगी नहीं, लेकिन क्या वहाँ सब कुछ है ? भात-कपड़े का अभाव रहने पर—किसान सद्गोप का बेटा है वह, उसकी पढ़ाई हो नहीं सकती थी, रोटी-कपड़े के लिए दूसरे के खेत में हलवाही करता, अधिया पर हल जोतता होता। या ऐसे ही किसी अमीर आदमी के घर में नौकर का काम करता होता। तकदीर बेहतर होती तो कचहरी घर की नौकरी मिल सकती थी। लेकिन जब मार्ग प्रशस्त और कितनी ही व्यवस्थाओं में से ही वह उस हालत से उत्तीर्ण हो सका है, हो सकता है कि थोड़ी-सी ही शिक्षा मिली हो लेकिन कुछ तो सोचने का सौभाग्य उसे मिला हो, तब क्यों वह उस जीवन में फिर से लौट जाये ?

यह जो आज जमींदार की कोठी में, संभ्रान्त घर में उसे शिक्षक का आसन मिला, उस आसन की उपेक्षा कर वह कायर-सा इन्कार कर दे ?

नहीं। नहीं जायगा वह।

कुछ देर बाद जाने उसे क्या ख्याल हुआ, जेब से पेन्सिल निकाल कर, टेबल-पोश से लगी जो खिड़की है, उसके सिर पर लिख दिया—८ कार्तिक १३३३ बंगाब्द। आज की तारीख।

की कल्पना का देवालय बनाने लगा। बाबुओं के घर की इस नौकरी पर रहने से उसका चलेगा नहीं। मासिक चार रुपए में वह जिन्दगी नहीं काट सकता, गिरस्थी है, गिरस्थी बढ़ेगी। इसके अलावा देवू-श्यामू के बड़े होने पर उसका क्या होगा ? हालाँकि उस बडे लड़के का शायद तब तक ब्याह हो जाय—शायद बच्चे भी हों। देवू-श्यामू के बाद वह उनको पढ़ा सकेगा। फिर श्यामू की सन्तान होगी, फिर देवू की सन्तान। कल्पना बहुत अधिक मधुर-सी लगी। यह मानो उस कोठी में मौरूसी खत लिखी नौकरी हो—मौरूसी मास्टरी। उससे बेहतर हो अगर वह यहाँ एक पाठशाला खोल सके !

पाठशाला की बात उसने कन्हाई राय से की है। कन्हाई राय ने इस कोठी की माँ से बता दी है। माँ ने आश्वासन दिया है। वे कोशिश करेंगी। मुहल्ले के ठीक बीचों-बीच उनका चंडीमंडप (चौपाल) है। वहीं पाठशाला के लिए जगह बना देंगी—ऐसा कहा है उन्होंने। लेकिन—। लेकिन बाबुओं के बेटे क्या उसके पास पढ़ने आएँगे ? बड़े स्कूल वाली पाठशाला छोड़कर ? सीताराम सोचता रहा।

ब्राह्मण जमींदारों के बेटों को लेकर पाठशाला की कल्पना से उसे कोई उम्मीद नहीं बंधती और न चैन ही मिलता। मन अजीब-सी परेशानी से भर उठता है। बनियाटोला, साहाटोला, या कैवर्त्तपुरवा में पाठशाला होने से बेहतर होगा। उनको वह पढ़ा सकेगा। वे मानों इनसे कहीं अधिक सहज हैं, बहुत सगे।

अन्यमनस्क हो पेन्सिल से गोद-गोद कर दीवार पर लिखी ८ श्रावण की तारीख को मोटा और दागदार बनाने लगा।

●●

तीन

सात दिन के बाद। आज महीने की पन्द्रह तारीख है।

मिट्टी के दिये की रोशनी का आदी आदमी अचानक ही जोरदार बिजली की रोशनी के सामने आ जाये तो उसकी आँखें चौंधिया जाती हैं, आँखों की शिराएँ तन्नाने लगती हैं, फिर दो-चार दिन की आदत के बाद ही वह तीव्रता आँखें सह लेतीं और क्रमशः रोशनी की उज्ज्वलता और मनोहरता ही दृष्टि को आनन्द देती है। उसी प्रकार इन चन्द दिनों के अभ्यास से ही, सीताराम के मन का संकोच और भय क्रमशः घट गये हैं। यहाँ के हालचाल का वह क्रमशः आदी होता जा रहा है। इस घर के लोगों से परिचय हुआ है, वे अच्छे भी लग रहे हैं। इस कोठी में प्रवेश करते ही जो उसे सबसे अधिक विस्मयकर और भय का

पात्र लगा था, जिसके उग्र स्वभाव की मोहरत उसने बाहर से ही सुन रखी थी और घर में प्रवेश के मुख पर ही 'देखा, चोरी करने में कैसा लगना है' यह विचित्र विस्मयकर उक्ति सुनी थी, इस घर के उस बड़े लड़के के साथ भी उसका अच्छा खासा परिचय हो चुका है। प्रथम परिचय के समय ही वह सबसे अधिक आश्चर्यचकित हुआ था और अब भी मन-ही-मन वही सबसे आश्चर्यजनक व्यापार बना हुआ है। उसके साथ परिचय हुआ बड़े सहज ढंग से, राह चलते वक्त हमराही के साथ जैसे सहज ढंग से परिचय हो जाता है उतने ही सहज ढंग से। आश्चर्य है!

उसी पहले ही दिन शाम को धीरानन्द से भेंट हुई। बिल्कुल मँझले भाई जैसा ही चेहरा-मोहरा। नंगे पैर, कछाना मारे, धोती और पसीने से तर बनियान पहने, कचहरी के चबूतरे पर चढ़ते ही ठिठक कर खड़ा हो गया। सीताराम कमरे में बत्ती जलाकर छात्रों की प्रतीक्षा में बैठा था। बाहर ड्योढ़ी में और कोई नहीं था। धीरानन्द आकर कमरे के सामने खड़ा हो गया।

आप ही नए मास्टर जी हैं?

मँझले से घनिष्ट सादृश्य देख उसको पहचानने में सीताराम को देर न लगी। वह झटपट उठकर खड़ा हो गया, बोला, जी हां। समझ में नहीं आया, प्रणाम करे या नमस्कार—क्या करना चाहिए?

आपकी बत्ती जरा ले लूं? फुटबाल खेलकर आया हूं, जरा हाथ-पैर धो लूं।

चलिए, मैं ही बत्ती दिखाता हू।

घाट पर हाथ-पैर धोकर धीरा बोला, तो फिर घर की गली में भी तनिक रोशनी दिखा दीजिए, हमारे घर के चारों ओर सांप भरे पड़े हैं।

सीताराम उत्साहित हुआ और सहज सम्भाषण की धारा में स्वच्छन्द गति से अनायास ही धीरानन्द के सम्मुख पहुँचकर बोला, ठहरिए, तो फिर रोशनी लेकर मैं ही आगे चलता हूं।

धीरानन्द ने कहा, पिछली बार हमारे घर से एक दिन में छत्तीस गेहूंअन सँपोले निकले थे।

छत्तीस! फिर तो घर में कहीं बच्चे हुए थे।

नहीं। घर में नहीं। लगभग सबके सब घर के बाहर से भीतर की ओर आ रहे थे। रास्ते वाली कोठरी में सोलह मारे गये, बाहर वाले दरवाजे के पास पाँच, मारे के मारे बाहर से घर की ओर आ रहे थे। आँगन में तेरह। घर के भीतर सिर्फ दो। एक भण्डारे में, और दूसरा—दूसरे ने ही सबको हैरत में डाल दिया था। दालान—कमरा—दरदालान पार कर लक्ष्मी जी का कमरा है, उसके पीछे बरतन वाला कमरा है, उसमें कोई खिड़की नहीं, बस एक दरवाजा है, दिन को भी बत्ती लेकर उस कमरे में दाखिल होना पड़ता है। उसी कमरे में गंगाजल की बड़ी हांडी में जाने कैसे जा पड़ा था। खैर, आपके का क्या हाल है?

साँप तो हैं।

कार्वोलिक एसिड से कभी साँप मारा है आपने ?

नहीं। सीताराम ने कहा, लेकिन सुना जरूर है कि कार्वोलिक एसिड देते ही साँप मर जाता है।

देते ही नहीं मरता। उस वार मैंने देकर देखा है। सिकुड़-सिमटकर काफी छटपटाने के वाद मरता है। भयानक यन्त्रणा मिलती है। लेकिन हां, उसकी गन्ध से साँप नहीं आता, यह भी ठीक है।

कहते-कहते वे घर के भीतर आ गये थे। धीरानन्द ने हाँक लगायी, श्यामू, देवू, तुम्हारे मास्टर जी खड़े हैं। मेक हेस्ट।—कहकर ही वह ऊपर चला गया था।

उसके चले जाने के वाद सीताराम को लगा था—वड़ा वेहतरीन आदमी है यह ! उग्रभाषी कहाँ ! इसमें विस्मयकारी भी क्या है भला !

इन सात दिनों में और भी कई वार भेंट हो चुकी है, वीस-तीस वार तो वेशक, वातचीत भी दस-वारह वार हो चुकी है। वस एक ही ढर्रे की वातें।

धीरानन्द सवेरे यहाँ के स्कूल के असिस्टेंट हेडमास्टर के पास पढ़ने जाता है। रात को घर पर पढ़ता है, घर के भीतर ऊपर धीरानन्द का पढ़ने का कमरा है। सुना है, वहाँ वहुत कितावें हैं। अच्छी-अच्छी अंग्रेजी और वाँगला किताबें। सीताराम का जी करता, किताबें लेकर पढ़ें। पढ़ने का कमरा देखने की भी इच्छा होती, पर वोल नहीं पाता। परिचय और वार्तालाप हो चुका है और वड़े ही सहज-सरल ढंग से हुआ है, कहीं कोई भी तनिक-सी भी वाधा के काँटे का अनुभव नहीं करता; लेकिन फिर भी उस लड़के में ऐसा कुछ है, जिससे उससे लिपटने लायक सान्निध्य में नहीं आया जा सकता। संसार में एक-एक व्यक्ति ऐसा होता है, जिसके वदन पर हाथ रखने पर मुँह से तो कुछ भी नहीं कहेगा और न हाथ को परे धकेल देगा, फिर भी हँसते-हँसते ऐसे सहज ढंग से हाथ को हटाकर अपने को दूर सरका लेता है, ताकि ठेस भी न लगे, यहाँ तक कि झेंपना भी नहीं पड़ता—वस उसी ढंग से वह अपने को सरका ले सकता है।

सीताराम भी आगे नहीं वढ़ा। उसने भी इसी वीच अपने रोजमर्रा के काम को योजनावद्ध ढँग से निर्धारित कर डाला है। रात को घर जाता है। सवेरे अपने पिता के साथ ही उठता है। कुरता और वनियान कन्धे पर डाल छतरी, लालटेन और लाठी हाथ में लेकर वह रवाना हो जाता है। रत्नहाटा और उसके गाँव के वीच एक छोटा नाला है, ऊपर के एक झरने से पानी वारह महीने प्रवाहित हो नदी की ओर चला जाता है। उसी नाले के पास आकर कुरता, वनियान, छतरी, लालटेन, लाठी रखकर वह अपना प्रातः कृत्य निवटा लेता है। नाले के दोनों ओर असंख्य वाघाभेरेंडा के पौधे हैं। एक पौधा उखार कर छुरी से काटकर वह दातौन वना लेता है। और भी थोड़ी दूर आकर रत्नहाटा के सिवान पर वहुत दिनों पुराना जो छायाघन वरगद का वृक्ष है

बेशक कुछ निकला है, लेकिन सीताराम ने जो आशा की थी वैसा नहीं हुआ।

माँ ने कहा था, छोटे-छोटे लड़कों को दस बजे ही खाना खाकर भागना पड़ता है, आधे मील से भी अधिक रास्ता। तुम अगर मुहल्ले में घर के पास चंडीमँडप में ग्यारह बजे पाठशाला खोलोगे, स्कूल से कम फीस लोगे तो सभी लोग अपने लड़कों को तुम्हारी पाठशाला में देंगे।

सीताराम को भी यह तर्क अकाट्य-सा लगा था। लेकिन वह आश्चर्य करता रह गया जब देखा कि तर्क अकाट्य होने पर भी लोग तर्क के आस-पास भी नहीं फटके। स्कूल से छुड़ाकर लड़कों को पाठशाला में देने को वे तैयार नहीं हुए।

जगद्धात्री इस मुहल्ले की प्रवीणा महरी तबके की औरत हैं। उन्होंने उस दिन इसी कोठी में ही माँ से कहा, सीताराम मौजूद था उस समय, बोलीं, हजार हो, स्कूल की पढ़ाई और पाठशाला की पढ़ाई दोनों में फर्क है धीरू की अम्मा! तुम्हीं बताओ क्यों? तुम क्या लड़कों को स्कूल से छुड़ा लोगी?

माँ ने हँसकर कहा, ननद जी, मेरे छोटे दो लड़के तो स्कूल में नहीं पढ़ते, वे तो उसी के पास पढ़ते हैं।

सो तो पेराइवेट पढ़ते हैं। दो लड़कों को लेकर वह मास्टर दो जून रगड़ता है। सो तो एक बात और पाठशाला के गोल में बैठ पहाड़ा बोलना दूसरी बात। जरा सोचने के बाद बोलीं, मेरे तीन भतीजों को दे सकती हूं अगर मास्टर तुम्हारे लड़कों की तरह उनको दोनों वक्त पेराइवेट पढ़ावे। सो तीन जनों के लिए तीन रुपए दूंगी। छोटा वाला तो मान लो पढ़ता ही नहीं, अ-आ और क-ख। उसका पढ़ना तो नाममात्र के लिए, बस संभाले रखना है, फिर भी तीन ही रुपये दूंगी।

इस मुहल्ले के पतित पावन बाबू प्रवीण और मातवर व्यक्ति हैं—उनको भी माँ ने बुलाया था, उन्होंने कहा, वह तो स्वयं एक बालक है। बच्चों को शिक्षा देना वह क्या जानता? स्कूल में पाठशाला रहते फिर पाठशाला! हुं ह!

यहाँ के स्कूल का प्रायमरी विभाग स्कूल के साथ नाम से स्वतन्त्र होने पर भी स्कूल ही का एक अंश है। वहाँ तीन मास्टर हैं। उनमें केवल एक ही प्रवीण हैं, पुराने दिनों का छात्रवृत्ति परीक्षा पास किया हुआ, बाकी दो जनों में एक तो मैट्रिक फेल है, दूसरा नार्मल पास। दोनों में एक है सेकेंड मास्टर का दामाद, दूसरा है हैडमास्टर के गुरुदेव का भतीजा। इन दोनों की उम्र हालांकि कम ही है, सीताराम के ही हमउम्र पच्चीस से तीस के अन्दर। प्रवीण जो हैं, प्रवीण होने के नाते स्कूल के पांच घंटों में ढाई घंटे कुर्सी पर बैठे बिना सोये उनसे रहा नहीं जाता।

माँ ने सीताराम को फिर भी आश्वासन दिया और हँसमुंह कहा, उनकी बातों से तुम हिम्मत मत हारना बेटा! लेकिन भले काम में बहुत सारी

बाधाएँ आती हैं। आईं, अगले दिन ही फिर एक बाधा आई। सीताराम खाने बैठा था, अचानक एक महिला आ पहुंची। कहां हो घोष की अम्मा!

कौन? मां निकल आयी।

मैं हूं। दादा ने तुम्हारे पास भेजा है।

बाहर से पुरुष का कंठ सुनाई पड़ा, बता दे कि मैं यहीं खड़ा हूं।

बताओ।

महिला गम्भीर भाव से कह गयी, चंडीमंडप के तुम लोग बड़े शरीक जरूर हो, बारह आना हिस्सा तुम लोगों का है—यह सच्ची बात है लेकिन इसलिए जो मर्जी सो तो नहीं किया जा सकता चंडीमंडप के साथ।

मां अचम्भे में पड़ गयी, बात क्या है?

उन्होंने कहा, मुहल्ले के बीच में देवस्थान है, बहू-बेटियां सब आती-जाती हैं, वहां तुम अपने पति के नाम पर सुना, पाठशाला खोल रही हो? यह क्या ठीक हो रहा है?

बाहर से महिला के दादा ने अब हांक लगायी, ठीक होना-ओना नहीं। ऐसा होगा नहीं। वह मैं करने नहीं दूंगा। चली आ तू।

वे चली गयीं।

सीताराम बोला, रहने दीजिए मां, जब इतना—। अपनी बात वह खतम न कर सका।

मां का मुख तमतमा उठा था। वे एकटक दृष्टि किये कुछ सोच रही थीं, अचानक बोल पड़ीं, हमारे कचहरी के पूरब के बरामदे पर पाठशाला खोलोगे तुम।

यही तय कर वह शाम को स्कूल सब-इन्सपेक्टर के पास गया। रतनहाटा में ही एक सर्कल सब-इन्सपेक्टर रहते हैं। पाठशालाओं के वे ही हर्ता-कर्ता-विधाता हैं। सब-इन्सपेक्टर बैठे थे बड़े स्कूल के हेड-मास्टर के घर पर। सीताराम के लिए यह अच्छा ही हुआ, हेडमास्टर जी उसके किसी समय के शिक्षक रहे हैं, उनसे भी अनुमति लेना हो जायगा। उनके पैरों की धूल सिर से छुवाकर उसने प्रणाम किया, सब-इन्सपेक्टर को नमस्कार किया। फिर सविनय निवेदन किया।

सब-इन्सपेक्टर बोले, अच्छी बात, खोलिए पाठशाला, चलने दीजिए कुछ दिन, सालभर गुजरने दीजिए, फिर दरख्वास्त कीजिएगा। तब दे[illegible] कर जो समुचित होगा किया जायगा।

हेडमास्टर गंभीर हो गए थे शुरू में ही, उन्होंने कहा, [illegible] क्यों कह रहे हो?

मैं आपका छात्र हूं। मैं यहां पाठशाला खोल रहा [illegible] मति मांग रहा हूं।

अनुमति तो मैं नहीं दे सकूंगा। यहां हमारा

तुमको पाठशाला खोलने की अनुमति देकर कैसे उसका नुकसान करने को कहूंगा, बताओ ?

इसका उत्तर सीताराम नहीं दे सका, केवल जरा दुखी हुआ। वह भी तो उनका छात्र है। उसका मंगल देखना भी क्या उनका कर्त्तव्य नहीं ?

मास्टर जी ने फिर कहा, अपने गाँव में क्यों नहीं खोली पाठशाला ?

जी, वहाँ मेरे ताऊजाद भाई पाठशाला खोले हुए हैं।

तो ? यहाँ भई हमारा अपना पाठशाला-विभाग जो है।

अबकी बार सीताराम ने जवाब दिया, कहा, हमारा गाँव छोटा है, वहाँ लड़के भी कितने ? यहाँ बड़ा गाँव है, बीस लड़के आएँगे तो मेरे पाँच रुपए बन जायेंगे। और ज्यादा लड़के तो आपकी पाठशाला में पढ़ते नहीं, ज्यादा फीस—

तो फिर शरीफ मुहल्ला छोड़कर तुम दूसरे मुहल्ले में पाठशाला खोलने की कोशिश करो। हँसकर बोले, देश-सेवा भी होगी। उन लोगों को इकट्ठे कर पाठशाला खोल 'अन्धकार से प्रकाश' में अगर ला सको तो तुम्हारी एक कीर्ति रह जायगी।

उनके बोलने की भंगिमा से सीताराम मर्माहत हुआ। वह वहाँ से चला आया।

माँ ने फिर मणिलाल बाबू के पास भेजा।—उनको एक बार बता आओ। वे अगर कहेंगे तो चण्डीमण्डप के बारे में कोई भी आपत्ति नहीं खड़ा करेगा।

मणिलाल बाबू को प्रणाम कर वह खड़ा हो गया। सारी बात बता दी। आश्चर्य ! उस दिन वाले व्यक्ति ही नहीं हैं वे, बात करने का लहजा भी अलग। वे केवल चन्द बार बोले, हूं। हूं। हूं। सुना है जरूर। अन्त में निर्लिप्त-सा बोले, देखो, कोशिश करो। फिर तकिए से टेक लगाकर हाँक लगाई, चैतन, ऐ चैतन !

जवाब न पाकर बोले, फरशी की चिलम लेकर बाहर किसी को दे देना छोकरा, आग बुझ गयी है, आग देने को कहना।

सीताराम स्तंभित रह गया लेकिन आज्ञापालन से भी विरत न हुआ।

माँ ने सुनकर कहा, मणि देवर जी ऐसे ही अजीब शख्स हैं। जब जैसी सनक सवार होती है वैसा ही बोलते हैं।

बैठक में आकर कन्हाई बोला, अजी भद्रलोग सब ही सनकी होते हैं।

सीताराम मर्मान्तक विषाद से भर गया है। बिना कोई उत्तर दिये उसने सिर्फ एक ठण्डी साँस ली। फिर सिर झुकाये बैठा रहा। अचानक एक बात याद आ गयी, हेडमास्टर की बात याद आ गयी। शरीफों का मुहल्ला छोड़कर दूसरे मुहल्ले में पाठशाला खोली जाय तो कैसा हो ? बहुत सोच-विचार कर एक क्षेत्र का भी आविष्कार कर डाला। साहाटोला या मछुओं-केवटों के टोले में पाठशाला खोलने की बात याद हो आई।

साहाटोले के लड़कों में अधिकांश पढ़ने-लिखने की ही कोशिश करते हैं।

साहा अर्थात् शौंडिक समाज में जल-अचल सम्प्रदाय होने पर भी आर्थिक अवस्था से काफी सम्पन्न होते हैं। वंश-परम्परा से शराब की दुकान तो है ही तिस पर महाजनी कारोबार भी है इनका। जो जैसा है उसका वैसा ही कारोबार है—गहने-बरतन गिरवी लेकर ऊँचे ब्याज पर रुपये उधार देते हैं। छुड़ा लेने की एक अवधि निश्चित रहती है, वह अवधि पूरी होते ही वह देनदार को इत्तला कर देता है कि वह चीज तुम्हें अब वापस नहीं मिलेगी। आचार और वेश-भूषा में भी वे भद्र हैं, लेकिन फिर भी स्कूल में पाठशाला में उन लोगों का स्थान नीचे है। शिक्षक उनको घृणा की दृष्टि से देखते हैं। सीताराम को याद है, उसके साथ साहा घराने के खुदे और पचा पढ़ते थे। मास्टर उनको बुलाते थे, ऐ शौंडिक (कलवार)।

कोई-कोई कहते थे, दारू वाले का बेटा! सीताराम को लगा, उनके लिए अगर वह पाठशाला खोल दे तो वे बेशक खुश होकर उसकी पाठशाला में पढ़ेंगे।

मछुवे-केवट के लड़के बहुत-सारे हैं। जाड़ा-गर्मी बारह महीने बरगद के तले सवेरे से शाम तक एक ही जगह बैठे वे ही: ही: कर हँसते रहते हैं, परस्पर गाली-गुफ्तार करते रहते हैं। वे पाठशाला नहीं जाते। उनमें से बहुतों की धारणा है कि उनको पढ़ना-लिखना नहीं चाहिए। जो पढ़ेगा वह मर जायगा। हालांकि केवटों के पास पैसे हैं—मछली के व्यापार के पैसे। उनके मुखिया विपन की बड़ी इच्छा है, बेटे को पाठशाला में देने की। हाईस्कूल की पाठशाला में भरती भी कर दिया था। लेकिन वहाँ दो दिन जाने के बाद उस लड़के ने फिर नहीं जाना चाहा। क्यों नहीं जाना चाहता, यह सीताराम अनुमान लगा सकता है। वह भय अगर न रहे, तो वे आयेंगे क्यों नहीं?

सीताराम उठकर बैठ गया। ज्योतिष साहा साहाटोले का मातबर है—आदमी भी नेक है। केवट भी साहा जी के अनुगत हैं। विपन को ज्योतिष 'काका' कहकर पुकारता और विपन कहता है, 'ज्योतिष बाबा'।

हाँ, यही करेगा वह। उन्हीं के पास जायगा।

श्यामू और देवू को दस बजे छुट्टी देकर उसने नहा लिया। नहाने में उसे जरा वक्त लग जाता है। पोखर में वह नहीं नहाता। इस बारे में वह अपने स्कूल-जीवन के दो प्राचीन शिक्षकों का अनुगामी हुआ है। जिस पण्डित जी ने उसके बाप से उसे नार्मल स्कूल में पढ़ाने का अनुरोध किया था, वे और इस स्कूल के थर्डमास्टर दोनों ही घनिष्ट मित्र थे और थे निर्मल चरित्र के व्यक्ति। जितने दिन वे जीवन में कर्मठ थे, उतने दिन वे दोनों साढ़े नौ बजे गड़ुवा लेकर अंगोछा और धोती कन्धे पर डाले गाँव से मीलभर दूर झरने की तरफ चल देते थे। झरने में स्नान कर दो गड़ुवे झरने के पानी से भर कर लौटते थे। दिन-भर उसी झरने का पानी पीते थे। सीताराम भी गड़ुवा लेकर अंगोछा और धोती कन्धे पर डाले झरने पर जाता। तेज कदम जाता और तेज लौटता। अपने कमरे के भीतर ही उसने अलगनी टाँग ली है। उस बल

पर वह अपनी धोती फैला देता है, गडुवे को मेज के नीचे रख देता है। किसी टूटे वक्से का एक सलोतर लड़की का पटरा उसने जुगाड़ा है, उससे ढाँप कर एक कंकड़ का वजन भी उस पर रख देता, फिर हुगली के पाठ्य जीवन की आदत के मुताविक वायें हाथ में आईना थाम वालों में कंघी करता है। माँग नहीं काढ़ता, वालों को समान रूप से सामने लाकर वाईं ओर से दाहिनी ओर कर देता है। एक चुटिया भी है, उसे वालों में ना-मालूम मिला देता है। इसके वाद खाना खाता है। खाना खाकर ही वनियान-कुरता पहन छाता हाथ में लिए वह निकल पड़ा। साहाटोले की ओर गया। ज्योतिप साहा जी की शराव गाँजा-अफीम-भाँग की दुकान के वरामदे पर जाकर खड़ा हो गया।

ज्योतिप आश्चर्य करने लगा। उसकी दुकान पर रमानाथ मुखिया का वेटा क्यों ? यह लड़का पढ़ा-लिखा है, इसके अलावा सभी उसे एक नेक लड़के के रूप में ही जानते हैं।

नमस्कार कर सीताराम ने कहा, आपसे एक वात करनी है।

क्या है ? वताओ।

आपके मुहल्ले में मैं पाठशाला खोलना चाहता हूँ। आप लोगों के लड़कों के लिए पाठशाला।

ज्योतिप ने हैरत में कहा, पाठशाला ?

जी हाँ, पाठशाला। सीताराम ने अपने सोचे हुए तर्कों को साहा से कहा। वताया, स्कूल के छोटे वच्चों को दस वजे खाना खाकर भागना पड़ता है डेढ़ मील रास्ता—शरीफ लोगों के घर में हालांकि दस वजे खाना वन जाता है, लेकिन हमारे जैसे गिरस्त घरों में औरतों को इसमें दिक्कत होती है। मान लीजिए, मैं ग्यारह वजे पाठशाला आऊँगा; घर के पास पाठशाला हो, औरतों को घण्टाभर समय मिल जायगा, इसके अलावा खाना न पक सका हो तो लइया खाकर पाठशाला चला आएगा और एक वजे टिफन—वड़े मजे में दौड़कर घर चला जायगा और खाना खाकर लौट आएगा। अचानक किसी को अपने लड़के की जरूरत पड़ गई, हाँक लगा दी,—मास्टर, राम को छुट्टी दे दो। वस हो गया। इसके अलावा फीस भी कम कर दूँगा मैं। गिरस्त-घरों में दो आने पैसे कोई कम नहीं।

इतने सारे तर्कों को पेश करने के वाद उसने साहा के मुख की ओर देखा, वातों का कोई असर साहा जी के मुख पर पड़ा या नहीं। साहा जी सोच रहे थे। वातें वाकई उनके मन को छू गई हैं।

सीताराम को फिर एक वात याद आ गई, वोला, इसके अलावा मान लीजिए स्कूल की फीस सात तारीख को जमा न करने पर जुर्माना देना पड़ता है, फिर महीना खत्म हो जाय तो नाम कट जाता है। जो लोग गरीव गृहस्त हैं वे क्या हर महीने ही ठीक-ठीक फीस जमा कर सकते हैं ? पाठशाला में यह भी एक सुविधा है, जुर्माना नहीं देना पड़ेगा, नाम नहीं कटेगा।

इस पर साहा जी हंसे, बोले, जुर्माना नहीं देना पड़ेगा यह सुविधा बेशक है लेकिन फीस न देने पर अगर महीना खतम होने पर भी नाम न काटा जाय तो उससे तुम्हें दिक्कत होगी। फीस कोई देगा ही नही।

सीताराम लज्जित हो गया, उसे लगा, उसने कंगलापन कर डाला है। अपने को सम्भालते हुए उसने कहा, उसके लिए एक कमेटी-जैसी रहेगी, आप लोग पांच जने मिलकर एक कमेटी बना देंगे। आप प्रेसिडेन्ट होंगे। महीने के अन्त में मैं आपको बही-खाता दिखाऊँगा। आप लोग कहेंगे तो नाम काट दूंगा।

कुछ देर चुप रहने के बाद फिर वह बोला, हालांकि मैं जी-जान लगाकर मेहनत से पढ़ाऊँगा, मुझे वेतन बेशक चाहिए। कुछ मिलेगा इसीलिए तो काम करने आया हूं। लेकिन मैं भी किसान-गिरस्त घर का बेटा हूं—गृहस्थ-घर के दुख-दर्द को मैं जानता हूं। अपने दुःख के साथ छात्र के घर की दुःख-दुर्दशा के बारे में भी तो मुझे सोचना है। कोई अगर एक महीना फीस न दे सका, आप लोग अगर देखें, फीस जानबूझ कर बाकी नहीं पड़ी है, तो उसका नाम नही काटूंगा, वह रहेगा। और उसकी तंगी यदि अधिक हो तो दो महीने की फीस बाकी रहे। बाद में दे देगा। सो भी अगर आप लोग ऐसा सोचें कि बकाया फीस माफ कर दी जाय तो मैं वैसा ही करूँगा।

साहा की दुकान के सामने ही बाबुओं का एक बाग वाला पोखर है। उस पोखर के पानी में उस वक्त हवा से हिलकोरें आने लगी हैं, सावन की बरसाती उतावली बयार। लहरों के सिर पर सूर्य की छटा चमचमा रही है। साहा उस ओर देखता हुआ काफी देर तक चुप रहा, फिर बोला, भाई, मैं जरा सोच लूं। मुहल्ले के और भी पांच जनों को पूछ लूं।

सीताराम ने इस बार आखिरी बात की, इसके अलावा यह होगी आप लोगों के लड़कों के लिए पाठशाला। बाबुओं के लड़के और आप लोगों के लड़कों में कोई फर्क नहीं रहेगा। आप लोगों का असम्मान नहीं होगा।

ज्योतिप ने चकित-सा मुंह उठाया, एकटक सीताराम के मुख की ओर देखता रहा फिर सामने की ओर पोखर के, प्रकाश से उज्ज्वल, जल की ओर।

●●

और भी दो दिन बीत गये।

पांच जनों को लेकर सलाह-मशविरा अभी तक चल रहा है।

गन्धवणिक टोले में कई स्कूल वाले दोस्त हैं उसके। दो दिन वह उनके पास भी गया। वहाँ उसे विशेष उत्साह नही मिला। ये लोग भी विचित्र लोग हैं। इन्ही के तबके के कम उम्र वाले तालव्य 'श' का उच्चारण अंग्रेजी 'एस' की तरह करते हैं। यार-दोस्त देखते ही समादर सम्भाषण कर कहते हे—स्ला। इनके प्रवीण लोग बड़े विज्ञ होते हैं। बोले, हां, खोलो तो पाठशाला। देख लें पढाई कैसी होती है, फिर देखा जायगा।

उस दिन दिनभर चक्कर लगाने के बाद सीताराम तिपहर लौटा।

पीकर अवसादग्रस्त मन से गड़ुवा हाथ में लेकर अंगौछा कन्धे पर डाले वह निकल पड़ा। यह उसका नित्य कर्म है। झरने के किनारे घूमने जाता है। और एक चीज़ साथ होती—एक आसन, यह आसन वह घर से ले आया है। आसमान में वादल होने पर छाता ले लेता है वगल में। गाँव पार कर उस झरने के पास चला जाता है। कंकड़-पत्थर से भरे रुख-विरिख से शून्य एक ऊसर टीले के नीचे झरना है। वह उस टीले के किसी स्थान पर जाकर आसन विछाकर वैठ जाता है। सूर्यास्त तक वैठा ही रहता है। यह भी उस पुराने जमाने वाले पंडित का अनुकरण है। वैठे-वैठे सोचा करता। उसकी चिन्ता—पाठशाला की चिन्ता। पाठशाला न होने पर खुराक और चार रुपए तनख्वाह पर नौकरी करना सच-मुच वड़ी ही लज्जा की वात है। वावा के सामने वह मुँह कैसे दिखाएगा ?

उसके वावा अव भी कह रहे हैं, घर पर वैठे खेतीवारी देखो वेटा। माँ लक्ष्मी की सेवा करो। "नया वस्त्र और पुराना अन्न, यही खा-पहन वीते जन्म-जन्म।" खेती छोड़ने पर खेती वरवाद हो जायगी। मैं भला कितने दिन। यह सव पुरखों की वातें हैं।

यह सही है कि वातें पुरखों की हैं। और सच्ची भी हैं। उसके ताऊजाद भाइयों की—उसी किशोर वगैरा की खेती की हालत इसी वीच सचमुच खराव हो गयी है। वड़े दादा ने माइनर पढ़ने के वाद गाँव में पाठशाला खोली है, न वह हल थामता है और न खेती देखता। मंझला नौकरी की टोह में घूम रहा है। किशोर एम० ए० और लॉ पढ़ रहा है। छोटा इस वार मैट्रिक देगा। ताऊ वूढ़ा गये हैं, आँखों से अच्छी तरह दिखाई नहीं पड़ता। फिर भी खेती का सारा भार उसी वूढ़े पर है। खेत-मजूर पर सोलह आने निर्भर रहना पड़ता। इस कारण, ताऊ के खेत में उसके नाते-रिश्तेदारों से सवसे कम फसल होती है। वात ठीक है। लेकिन घर में रहकर खेती-वारी लेकर रहने की वात सोचते ही उसका दिल जाने कैसा करने लगता है। खेती करने पर क्या जमींदार-गृह में उसे वैठने का आसन मिलेगा ? उस मणिलालवावू ने जो उस दिन उसको वाहर चिलम ले जाने के लिए कहा था, वह किसान का वेटा था इसलिए। इतना कहने पर भी उससे तमाकू भर कर लाने को नहीं कह सके। पढ़-लिखकर मास्टरी करेगा, सुनकर उनको तारीफ भी करनी पड़ी। अपने हाथ खेती करने पर क्या वे इतना भर भी वोलेंगे ? अव की वार तमाकू भर लाने के लिए कहेंगे।

भर पेट खाकर जिन्दा रहना ही क्या सवकुछ है ?

उसके वे पुराने पंडित जी कहा करते थे, सूअर भी दिन गुजार लेता है, दिनभर घूम कर वह भी अपना पेट भर लेता है।

उसके पिता और भी कहते थे, अच्छी वात, पाठशाला ही खोलनी है तो गाँव में तेरे दादा ने खोल रखी है उसी में लग जा। या वगल के गांव राधिकापुर में खोल ले।

राधिकापुर उन लोगों के गाँव के पास ही है, उन्हीं के गांव जैसा ही छोटे

किसानों का गाँव है। लेकिन वह भी उसको नही भाता। राधिकापुर के पंडित जी और रत्नहाटा के पंडित जी में क्या तुलना हो सकती है ! इसके अलावा छात्र ? जो जमीदार-गृह के दो लड़के, खिले हुए चेहरे, चमकती आँखें, झटपट बातों का जवाब देते हैं, चुस्त-दुरुस्त, यह सब राधिकापुर के लड़कों में कहाँ से मिलेगा ? मणिबाबू ने बेशक उस दिन कहा था, गाँव मे स्कूल होते हुए भी हमारे लड़के कोई भी कुछ भी नही कर सके, तुम लोग कर रहे हो, यह तो अच्छा है, बहुत अच्छा। फिर भी वे ही तो इस जवार के प्रधान हैं। वे ही तो मारे काम में आगे बढ आते हैं। साहब लोग आकर उन्ही से बातचीत करते हैं। वे पढाई नही कर पाउे अवहेलना के कारण, जानते हैं, पास न होने पर भी उनकी प्रतिष्ठा कोई छीन नही सकता। उनके मास्टर जी बनने में कितना बड़ा गौरव है। श्यामू और देवू को यदि वह पढाता है, और किसी समय अगर वे जाने-माने व्यक्ति बन जायें तो वह कह तो सकेगा कि वह श्यामू-देवू का मास्टर है। श्यामू-देवू मे एक अगर जज बन जाये और एक मजिस्ट्रेट, तो ? उसका दिल जाने कैसा होने लगता।

झरने के पास का गाँव उसी का गाँव है। उसके गाँव से औरतें आकर पानी ले जाया करती हैं। हरे धानों से भरे खेतों की पगडण्डी से, सज्जी मे धुले मोटे कपड़े पहने बहू-बेटियाँ आकर पानी ले जाती हैं। बहुओं के सिर पर घूंघट, बेटियाँ घूंघट नहीं काढ़ती, उनके सिर के जूड़ा पर शाम के सूरज की आभा आ पड़ती। रूखे बालों के ढीले जूड़े, घड़े लेकर चलते वक्त पैर रखने के लय पर डोलते, जिनके जूड़े बँधे हुए उनके तैलाक्त बालो पर सूर्य की छटा चमकती।

मनोरमा भी इनके साथ पानी लेने आएगी। उसके साथ इसी मौके रात को घर पर मुलाकात होने से पहले ही एक बार भेंट हो जायगी। मनोरमा शुक्रवार को आ रही है। उसकी ख्वाहिश थी कि उसी बृहस्पतिवार को ही आ जाये। ट्रेन पाँच बजे आने वाली है। बृहस्पतिवार ग्यारह बजे पाठशाला खुलेगी। उसी दिन पाँच बजे मनोरमा आएगी, यह सोचते हुए उसे भला लगा था। लेकिन बृहस्पतिवार केवल गुरुवार ही नही, लक्ष्मीवार भी है। धान नहीं बेचना चाहिए, कन्या घर की लक्ष्मी के समान है—उसको भी नही भेजना चाहिए। कल बाबा रवाना होंगे। उसकी ससुराल से गंगा बहुत निकट है, दो मील के अन्दर ही, खेत की जुताई खत्म हो चुकी है, निराई में अभी कुछ दिन की देर है। सावन के अन्त तक निराई होने से ही चलेगा, अभी लमेरा घास-पात बढ़े नही। इसी मौके पिताजी जाकर कुछ दिन रहेंगे, गंगास्नान होगा। इन चार दिनों मे उसके घर पर भी बहुत-सारे काम हैं। बाबा रहेंगे नहीं, इसी वक्त घर को अपने मनमाफिक सजा डालना है। हालाँकि बाबा ने खुद ही कहा है, लेकिन फिर भी बाबा के सामने यह सब करने मे लाज लगती है।

कपड़े टाँगने की खूंटिया वह रत्नहाटा ले गया है। वह है भी बहुत छोटी। उससे घर मे कोई काम न होता। मनोरमा के कपड़े, अपनी धोती, कुर्

वनियान रखने के लिए एक बड़ी अलगनी चाहिए। वाबुओं के घर के नायव उसने एक अलगनी खरीदने को कहा है, वे सदर गये हैं। दो पैकिंग केस खरी कर रत्नहाटा के सतीश बढ़ई को दो शेल्फ बनाने को दिया है—बड़ा वाल घर के लिए और छोटा वाला वह रत्नहाटा की पाठशाला में रखेगा।

साँझ हो आई, वह उठा, झरने में मुँह-हाथ धो गड़ुवा भरकर वह लौ चला। अचानक उसे 'मेघनादवध काव्य' के द्वितीय सर्ग का प्रारम्भ याद आ गया—

"अस्ते गेला दिनमणि, आइला गोधूलि
एकटि रतन भाले। फुटिला कौमुदी;
मुदिला शरमे आँखि विरस वदना
नलिनी।"

इसके वाद ठीक तरह से याद नहीं। उसकी स्मरण-शक्ति कोई अच्छी नहीं। उसके जीवन की अकृतकार्यता का यही सबसे बड़ा कारण है। जाने क्या सोच यकायक वह खड़ा हो गया। फिर लौट गया झरने की ओर। कुछ ब्राहमीसाग चुनकर लौट चला। पकाकर खाने की सुविधा नहीं मिलेगी, कूट-कर रस पी लेगा सवेरे। हाँ, और भी है, सामने भादों का महीना है, पित्तवृद्धि का समय, ऐसे समय चिरैता का पानी कम-से-कम हफ्ता-भर पीना है। शरीर को स्वस्थ रखना है। शरीरमाद्यम्।

वाबुओं के घर लौटते ही कन्हाई राय ने कहा, क्यों जी पंडित, भरमन हो गया? यानी भ्रमण।

सीताराम को यह बात जरा कोंच गयी। कन्हाई राय चन्द दिनों से जाने कैसी आड़ी-तिरछी वातें कर रहा है। 'सीताराम' कहकर नहीं बुलाता। कहता, पंडित, कभी-कभी 'पंडित जी' भी कहता। कन्हाई राय के मन की बात वह समझता है। लेकिन वह उसका क्या करे।

'मूर्ख जो है, विद्या का मूल्य वह कभी क्या जाने।'

वणिक ने कुक्कुट से जो कहा था, "तेरा दोष नहीं है मूढ़, दैव है यह ...ना, ज्ञानशून्य किया गुसांई ने।" कोई झूठ नहीं।

कन्हाई राय वोला, यह कैसा? वात नहीं करोगे क्या?

हँसकर सीताराम ने कहा, तुमको मैं 'काका' कहता हूं, तुम्हारा अनादर ..., अश्रद्धा करते कभी तुमने मुझे पाया, यह वताओ?

...राय जरा झेंप गया। नहीं, नहीं, नहीं।—कहकर ही अपनी आवाज़ में ...ारीपन लाकर प्रसंग को दवाते हुए वोला, ज्योतिप साहा ने आदमी भेजा ...ुमको एक वार शाम को जाने के लिए कहा है।

...ीताराम गड़ुई रख वनियान और कुरता पहनते हुए वाहर निकल गया। ...र की भी देर नहीं लगाई उसने।

...हा की दुकान के वरामदे पर शोरगुल हो रहा है। सीताराम दुकान के

सामने ही ठिठक कर खड़ा हो गया। इसी गाँव के बाबुओं के लड़के [illegible]
से हाथ जोड़कर ज्योतिप कह रहा है, मुझे माफ कर दीजिये बाद [illegible]
रहा हूं। मुझसे नही होगा। दुकान बन्द हो गई है। [illegible]
मैं नहीं दे सकूंगा।

लड़खड़ाते स्वर में शिवकिंकर ने कहा, और नही दे सकोगे [illegible]

जी नही। हाथ जोड़ रहा हू आपको।

हाथ जोड़ रहे हो ?

जी हाँ।

जी हाँ ?

इस तरह से बात करना शोभा देता है ?

मतवाला शिवकिंकर नशे में लगातार हँसता ही जा रहा था, कह रहा था, खेतिहर पण्डित और कलवार छात्र ? हलवाहा पण्डित बन गया है, अब कलवार पण्डित होगा। हे-हे-हे—हे-हे-हे।

सीताराम अब आगे बढ़ आया—बाबू के सामने जाकर सीना तानकर खड़ा हो गया।

शिवकिंकर ने उसकी ओर कुछ देर देखा। काली सूरत, पत्थर-सा सख्त जिस्म और आँखें गुस्से से दमकती हुई। बिना कुछ कहे वह चलने लगा। सीताराम उसके साथ बढ़ रहा था लेकिन ज्योतिष ने बाधा दी, कहा, रहने दो, जाने दो।

कुछ दूर आगे बढ़कर शिवकिंकर फिर हँसने लगा, हे-हे-हे—हे-हे-हे ! हलवाहा पण्डित और शौंडिक छात्र। कागजम् कलमम् खरचम् मात्र।

भद्र घराने के लड़के के मन की कदर्यता देखकर सीताराम स्तम्भित रह गया। ज्योतिष भी धूप से तपी पत्थर की मूर्ति की नाईं वाक्शून्य खड़ा रहा।

●●

चार

एक छोटी-सी आकस्मिक घटना से अघटन, अर्थात् जिसकी घटित होने की सम्भावना नहीं थी, बहुधा घटित हो जाता है। घटित हो जाने पर सीताराम उसे भाग्य का खेल कहता है। शिवकिंकर का यह गाली-गलौज करना, सीताराम के लिए भाग्य का खेल बन गया। ज्योतिष साहा चन्द क्षण चुप रहने के बाद सीताराम से बोला, तो यही तय हुआ पंडित। तुम पाठशाला खोलो।

सीताराम उस वक्त भी अपने को संभाल नहीं सका था। वह शिवकिंकर के जाने के रास्ते की ओर अपलक देख रहा था। शिवकिंकर दिखाई नहीं पड़ रहा था, केवल अंधेरा भाँय-भाँय कर रहा है। दिल जले के आवेश से रूखे स्वर में ही बोल पड़ा, शिवकिंकर के व्यंग्य-श्लेष-भरे 'चापा' शब्द की नकल करते हुए वह बोला, चापा, चापा ! चापा लोग मानों इन्सान नहीं ! कलवार मानों इन्सान नहीं !

ज्योतिष बोला, कलवार के दरवाजे पर चक्कर न लगाने पर बाबुओं का दिन नहीं पूरा होता। शराब की दूकान हथियाने के लिए बाबुओं के बेटों ने कितनी कोशिश की। दस बारह दरख्वास्त मेरे खिलाफ भेज चुके हैं, मैं रात को शराब-गाँजा बेचा करता हूँ। इसके अलावा—। ज्योतिष हंसा। शिवकिंकर के पथ की ओर उसने भी एक बार देखा, फिर कहा, सिर्फ शराब ही नहीं, बाबुओं को

रुपए की जरूरत पड़ जाये तो कपड़ों में गहने छिपाकर लाते और कितनी ही मीठी-मीठी बातें करते हैं। जानते हो पंडित, दो-तीन घरों को छोड़ ऐसा कोई बाबू नहीं है यहाँ जिसका कुछ-न-कुछ हमारे घर पर न हो। इस युद्ध के बाजार में बाबुओं की जायदाद हमी लोग तीन-चार घरों में बनाये रखे हैं।

सीताराम बोला, आप अगर बीच में न पड़ते तो आज उसे एक सबक दे देता मैं।

कितनों को सबक दोगे? ज्योतिष का मुख कठोर-सा हो गया। धीमी आवाज में बोला, वह तो शराबी है। मुँह के सामने बोल गया। यही बात बाबुओं में कौन नहीं कहता? हम लोग जाति के साहा हैं, खैर ठीक है। हमारा छुवा पानी नहीं पीते, हम लोग नीचे जमीन पर बैठते, हमें कलवार कहकर पुकारते हैं। खैर देशाचार चला आ रहा है, शास्त्र में है, बहुत अच्छा। लेकिन हमारे ही नातेदार नरेन साहा डाक्टरी पास करके आया है, क्यों, उसकी दवा पानी मिली दवा पर तो कोई ऐतराज नहीं करता? क्यों, उसके बारे में तो ऐसी बात कोई कह नहीं पाता? जानते हो, स्कूल में उसके बेटे-बेटियों की खातिर-तवाजह ही निराली होती है। यकायक ज्योतिष का कंठ-स्वर गम्भीर हो उठा, बोला, मुझे याद है, स्कूल में पढ़ता था, पढ़ाई में तेज नहीं था। जरा रुका वह। रुकने के बाद फिर बोला, लेकिन यहां के बाबुओं के लड़के भी तो कोई अच्छे नहीं थे। यही शिवशंकर, यह भी तो मेरे साथ का पढ़ा है। हम लोग जो कुछ पढ़ भी लेते थे, वह नहीं पढ़ पाता था। मास्टर उनको कुछ भी कहने की हिम्मत नहीं करते थे। और मुझको क्या कहते थे, जानते हो? कहते, महुआ मिलने वाले जाकर महुआ गिरा। ताड़ी बेच जाकर।

एक गहरी लम्बी साँस ली उसने। फिर चुप्पी साधे जाने क्या सोचने लगा। शायद उसी जमाने की ऐसी सारी बातें। सीताराम को भी याद आ गई। अंगरेजी उच्चारण उनके गाँव के और बिरादरी के ज्यादातर लड़कों का शुद्ध नहीं होता था। 'ऐम' को 'एम' 'एन' को 'ऐन' 'एल' को 'ऐल' और 'एस' को 'ऐस' कह डालते थे वे। सेकंड मास्टर कहते थे 'ऐल' नहीं—'एल', 'ऐम' नहीं—'एम', 'ऐन' नहीं 'एन', 'रैल' नहीं रेल समझे 'एस' 'ऐस' नहीं है—'एस' है, ऐस हो तुम गधे कहीं के।

वे लोग शरमिन्दा हो जाते थे। मखौल उड़ाते हुए वे फिर बताते थे, अच्छी तरह से जीभ छिलोगे, समझे? अगर हो सके तो लुहार के घर से रेती लाकर घिसकर पतली कर डालोगे। फिर धमकाते हुए कहते थे, अबकी अगर, 'ऐल', रैल कहा तो एक 'बैल' लाकर सिर पर ठोक-ठोक कर सिर तोड़ डालूँगा। छोड़ दे, छोड़ दे पढ़ना। जाकर अपना कुल-कर्म शुरू कर दे।

ज्योतिष साहा ने कहा, तो फिर वही हुआ। तुमको बुलाया था, कहना चाहा था, अब पाठशाला तुम बाबुओं के वहाँ ही खोलो, हमारे यहाँ सब ए बुलमुलयकीन हैं। तुमने मुझसे कहा था, वृहस्पतिवार को ही पाठशाला खो

चाहते हो इसलिए कहा था सबको समझा-बुझाकर देख लूं। लेकिन—चन्द क्षण स्तब्ध रहने के बाद वह बोला, नहीं, तुम बृहस्पतिवार ही को इस मुहल्ले में पाठशाला खोल दो। कलवार के लड़के, केवट के लड़के पढ़ेंगे, खेतिहर पंडित ही हमारे लिए अच्छा है। हाँ, यही अच्छा है। पक्की बात।

सीताराम बोला, देख लीजिएगा आप, हर साल अगर लड़कों से वृत्ति न लिवा सकूं, तो—। क्या शपथ लें यह उसकी समझ में नहीं आया। क्षण-भर चुप रहने के बाद बोला, देख लीजिएगा, आप देख लीजिएगा।

●●

अगले दिन से पाठशाला खोलने का आयोजन लेकर वह जुट गया। ऐसा उत्साह उसे माँ की सहायता से पाठशाला खोलने के प्रस्ताव पर नहीं मिला था। उस प्रस्ताव के तहत पाठशाला के उद्योग-आयोजन में मानों उसके लिए कुछ भी करने-धरने का नहीं रह जाता। सारी व्यवस्था ही माँ के हुक्म से हुई होती। और इस पाठशाला के लिए चेष्टा सभी कुछ उसी पर निर्भर है। साहा ने सम्मति दी है, कुछ छात्र वह शुरू में संग्रह कर देगा और पाठशाला के लिए जगह भी वही देगा। साहा ने एक नया बखार घर बनाया है, उसी बखार घर में पाठशाला लगने का स्थान निर्धारित हो गया है। साहटोला और केवटटोले के सिरे पर एक तालाब का किनारा है। तालाब के मालिक यहाँ के एक ऋण-ग्रस्त बाबू हैं, धन के लिए उसे बन्दोबस्त पर देना चाहा था। साहा के घर के पास ही है यह तालाब। साहा यूं ही दर्शक के रूप में बन्दोबस्त की बोली देखने के लिए चला गया था। जाने क्या जिद्द चढ़ गई, सबसे ऊँची बोली बोलकर उसीने बन्दोबस्त पर ले लिया। जब ले ही लिया तो चहारदिवारी से उसे घेरना भी पड़ा। दीवार से घेरते वह एक कमरा भी बना डाला था। साहा के तीन-चार बेटे हैं, भविष्य में काम आएगा।

साहा ने खुद ही हँसकर कहा, किस काम के लिए क्या बन जाता है, किसके भाग्य से कौन भोग करता है, यह कोई भी नहीं बता सकता। इन दिनों सोच रहा था, गाँजा-अफीम की दुकान इस ओर ले आऊंगा। तो यह घर पाठशाला बन गया। अब सारा आयोजन करो तुम।

एक कुर्सी चाहिए, एक स्टूल, एक मेज भी हो तो बेहतर। बोर्ड—एक ब्लैक-बोर्ड तो चाहिए ही। इसके अलावा एक घड़ी। पानी के दो घड़े, दो गिलास; दो-चार खजूर या ताड़ के पत्तों की बनी चटाइयाँ। घड़े, गिलास आदि आदि बड़े मामूली सामान हैं। चन्द रुपये से ही हो जाएंगे। पहले वाले कई सामान के बारे में ही चिन्ता है। इन सब चिन्ताओं से रात को उसे अच्छी नींद नहीं आई। सवेरे उठते ही दूसरे दिनों से तेज रफ्तार वह रत्नहाटा की ओर चलने लगा। हो जायगा, किसी-न-किसी तरह सबकुछ हो जायगा। 'बिना उद्यम के पूरा होता भला किसका मनोरथ।' कुर्सी-स्टूल मिल जाएंगे—यह दोनों अभी वह बाबू के घर से ही ले लेगा—कुछ न हो, मोढ़े से भी काम

चल जायगा। पैकिंग केस खरीदकर एक मेजव नवा लेगा। अब सिर्फ घड़ी और ब्लैकबोर्ड की फिक्र रह जाती है। यहां का यामिनी बनर्जी घड़ी मरम्मत करता है और जरूरत पड़ने पर नयी घड़ी भी मंगवा देता है। उससे एक टाइम-पीस खरीदने से ही हो जायगा। सात-आठ रुपये होने से ही होगा। हालांकि एक क्लाक होता तो बेहतर होता। आधे घंटे पर बजेगी, हर घंटे पर ठीक-ठीक घंटे की आवाज देती रहेगी, बच्चे गिनेंगे—एक, दो, तीन, चार—। जापानी घड़ी सस्ते में मिलती है इस समय, पन्द्रह, सोलह रुपये में मिल जायगी। न हो तो यह रुपया वह उधार ले लेगा। लेकिन ब्लैकबोर्ड? सोचते-सोचते इस समस्या का भी समाधान उसने कर डाला। थोड़ा-सा कटहल का तख्त मिल जाय तो रतनहाटा के मंजे हुए मिस्त्री सतीश से एक छोटा-मोटा बोर्ड बनवा लिया जा सकता है। कटहल की लकड़ी पर पालिश अच्छा चढ़ेगा, अच्छी तरह पालिश चढ़ाकर मिट्टी के तेल मे तारकोल मिलाकर हल्का-सा अस्तर चढ़ा देने से ही हो जायगा। फ्रेम के बदले ऊपर दो कुंडे लगा, रस्सी बांध दीवार पर गड़े हुक से टांग देने से ही हो जायगा।

रतनहाटा पहुँचते ही सतीश मिस्तरी के पास जाकर उसने सारी व्यवस्था कर डाली। जाया करने लायक समय अब कहां? 'समय बदलता जाय नदी का प्रवाह प्राय.' यामिनी बाँडुज्जे से एक क्लाक घड़ी का भी इन्तजाम कर डाला। इसके बाद रुपए का हिसाब लगाया। उसका अपना जो संबल था उससे चार रुपए तो कटहल का तख्ता खरीदने में खर्च हो गया। और भी दो रुपये मिट्टी का तेल, तारकोल, लोहे की कीलें, कुंडा आदि के दाम चुकाने में। इसके अलावा डोमों से चटाइयां भी खरीदनी पड़ी हैं। अब सम्बल रह गया कुल छह रुपए।

दोपहर वह बाबुओं के घर के कमरे में खामोश बैठा था। छह रुपये कई बार ठोकने-बजाने के बाद एक ठंडी सांस लेकर उसने तय किया, अब एक टाइमपीस ही ठीक रहेगा। आह, काश मनोरमा पहले आ गयी होती! उससे कुछ रुपए ले लेने से ही काम बन गया होता। उसे मालूम है, मनोरमा का अपना कुछ संचय है। बड़ी भली संचयी लड़की है। तीस-चालीस रुपए है उसके पास। जब भी उसे जो कुछ मिला है, सब संचय कर रखा है—पैसा, इकन्नी, दुअन्नी, चौवन्नी, अठन्नी, रुपया सब मिल-मिलाकर उसका संचय है। रेजगारी बदल कर रुपया बनाने का ख्याल भी उसे नहीं हुआ। केवल एक बार उसने खर्च किया है—कान की पुरानी तरकी तोड़कर नई पारसी तरकियाँ बनवाई हैं और अंगूठी तुड़वाकर लाल नग लगवाकर अंगूठी बनवाई है।

अचानक वह उठ खड़ा हुआ। उपाय उसे सूझ गया है। कमरा बन्द कर वह सीधे केष्टो सुनार के घर जा पहुँचा। नाक की नोंक पर आ लटकने वाला चश्मा पहनकर केष्टो काम कर रहा था। चश्मा और भवों के दरार से सीताराम की ओर देखकर बोला, आओ पंडित! अपने बेटे को मैं तुम्हारी ही पाठशाला में दूंगा। बड़ी मोटी अक्ल है उसकी। जरा ख्याल रखना। बैठो। सामने ही कुछ

चाहते हो इसलिए कहा था सबको समझा-बुझाकर देख लूं। लेकिन—चन्द क्षण स्तब्ध रहने के बाद वह बोला, नहीं, तुम बृहस्पतिवार ही को इस मुहल्ले में पाठशाला खोल दो। कलवार के लड़के, केवट के लड़के पढ़ेंगे, खेतिहर पंडित ही हमारे लिए अच्छा है। हाँ, यही अच्छा है। पक्की बात।

सीताराम बोला, देख लीजिएगा आप, हर साल अगर लड़कों से वृत्ति न लिवा सकूं, तो—। क्या शपथ लें यह उसकी समझ में नहीं आया। क्षण-भर चुप रहने के बाद बोला, देख लीजिएगा, आप देख लीजिएगा।

••

अगले दिन से पाठशाला खोलने का आयोजन लेकर वह जुट गया। ऐसा उत्साह उसे माँ की सहायता से पाठशाला खोलने के प्रस्ताव पर नहीं मिला था। उस प्रस्ताव के तहत पाठशाला के उद्योग-आयोजन में मानों उसके लिए कुछ भी करने-धरने का नहीं रह जाता। सारी व्यवस्था ही माँ के हुक्म से हुई होती। और इस पाठशाला के लिए चेष्टा सभी कुछ उसी पर निर्भर है। साहा ने सम्मति दी है, कुछ छात्र वह शुरू में संग्रह कर देगा और पाठशाला के लिए जगह भी वही देगा। साहा ने एक नया वखार घर बनाया है, उसी वखार घर में पाठशाला लगने का स्थान निर्धारित हो गया है। साहटोला और केवटटोले के सिरे पर एक तालाव का किनारा है। तालाव के मालिक यहाँ के एक ऋण-ग्रस्त बावू हैं, धन के लिए उसे बन्दोवस्त पर देना चाहा था। साहा के घर के पास ही है यह तालाव। साहा यूं ही दर्शक के रूप में बन्दोवस्त की बोली देखने के लिए चला गया था। जाने क्या जिद्द चढ़ गई, सबसे ऊँची बोली बोलकर उसीने बन्दोवस्त पर ले लिया। जब ले ही लिया तो चहारदिवारी से उसे घेरना भी पड़ा। दीवार से घेरते वह एक कमरा भी बना डाला था। साहा के तीन-चार बेटे हैं, भविष्य में काम आएगा।

साहा ने खुद ही हँसकर कहा, किस काम के लिए क्या बन जाता है, किसके भाग्य से कौन भोग करता है, यह कोई भी नहीं बता सकता। इन दिनों सोच रहा था, गाँजा-अफीम की दुकान इस ओर ले आऊंगा। तो यह घर पाठशाला बन गया। अब सारा आयोजन करो तुम।

एक कुर्सी चाहिए, एक स्टूल, एक मेज भी हो तो बेहतर। बोर्ड—एक ब्लैक-बोर्ड तो चाहिए ही। इसके अलावा एक घड़ी। पानी के दो घड़े, दो गिलास; दो-चार खजूर या ताड़ के पत्तों की बनी चटाइयाँ। घड़े, गिलास आदि आदि बड़े मामूली सामान हैं। चन्द रुपये से ही हो जाएंगे। पहले वाले कई सामान के बारे में ही चिन्ता है। इन सब चिन्ताओं से रात को उसे अच्छी नींद नहीं आई। सवेरे उठते ही दूसरे दिनों से तेज रफ्तार वह रत्नहाटा की ओर चलने लगा। हो जायगा, किसी-न-किसी तरह सबकुछ हो जायगा। 'बिना उद्यम के पूरा होता भला किसका मनोरथ।' कुर्सी-स्टूल मिल जाएंगे—यह दोनों अभी वह बाबू के घर से ही ले लेगा—कुछ न हो, मोढ़े से भी काम

चल जायगा। पैकिंग केस खरीदकर एक मेजव नवा लेगा। अब सिर्फ घड़ी और ब्लैकबोर्ड की फिक्र रह जाती है। यहाँ का यामिनी बनर्जी घड़ी मरम्मत करता है और जरूरत पड़ने पर नयी घड़ी भी मंगवा देता है। उसमें एक टाइम-पीस खरीदने से ही हो जायगा। सात-आठ रुपये होने से ही होगा। हालांकि एक क्लाक होता तो बेहतर होता। आधे घंटे पर बजेगी, हर घंटे पर ठीक-ठीक घंटे की आवाज देती रहेगी, बच्चे गिनेंगे—एक, दो, तीन, चार—। जापानी घड़ी सस्ते में मिलती है इस समय, पन्द्रह, सोलह रुपये में मिल जायगी। न हो तो यह रुपया वह उधार ले लेगा। लेकिन ब्लैकबोर्ड? सोचते-सोचते इस समस्या का भी समाधान उसने कर डाला। थोड़ा-सा कटहल का तख्त मिल जाय तो रत्नहाटा के मंजे हुए मिस्त्री सतीश से एक छोटा-मोटा बोर्ड बनवा लिया जा सकता है। कटहल की लकड़ी पर पालिश अच्छा चढ़ेगा, अच्छी तरह पालिश चढ़ाकर मिट्टी के तेल में तारकोल मिलाकर हल्का-सा अस्तर चढ़ा देने से ही हो जायगा। फ्रेम के बदले ऊपर दो कुंडे लगा, रस्सी बाँध दीवार पर गड़े हुक से टाँग देने से ही हो जायगा।

रत्नहाटा पहुँचते ही सतीश मिस्तरी के पास जाकर उसने सारी व्यवस्था कर डाली। जाया करने लायक समय अब कहाँ? 'समय बदलता जाय नदी का प्रवाह प्राय.' यामिनी बाँड़ुज्जे से एक क्लाक घड़ी का भी इन्तजाम कर डाला। इसके बाद रुपए का हिसाब लगाया। उसका अपना जो संबल था उससे चार रुपए तो कटहल का तख्ता खरीदने में खर्च हो गया। और भी दो रुपये मिट्टी का तेल, तारकोल, लोहे की कीलें, कुंडा आदि के दाम चुकाने में। इसके अलावा दोमों से चटाइयाँ भी खरीदनी पड़ी हैं। अब सम्बल रह गया कुल छह रुपए।

दोपहर वह बाबुओं के घर के कमरे में खामोश बैठा था। छह रुपये कई बार ठोकने-बजाने के बाद एक ठंडी साँस लेकर उसने तय किया, अब एक टाइमपीस ही ठीक रहेगा। आह, काश मनोरमा पहले आ गयी होती! उससे कुछ रुपए ले लेने से ही काम बन गया होता। उसे मालूम है, मनोरमा का अपना कुछ संचय है। बड़ी भली संचयी लड़की है। तीस-चालीस रुपए हैं उसके पास। जब भी उसे जो कुछ मिला है, सब संचय कर रखा है—पैसा, इकन्नी, दुअन्नी, चौवन्नी, अठन्नी, रुपया सब मिल-मिलाकर उसका संचय है। रेजगारी बदल कर रुपया बनाने का ख्याल भी उसे नहीं हुआ। केवल एक बार उसने खर्च किया है—कान की पुरानी तरकी तोड़कर नई पारसी दरकियां बनवाई हैं और अंगूठी तुड़वाकर लाल नग लगवाकर अंगूठी बनवाई है।

अचानक वह उठ खड़ा हुआ। उपाय उसे सूझ गया है। कमरा बन्द कर वह सीधे केष्टो सुनार के घर जा पहुँचा। नाक की नोंक पर आ लटकने वाला चश्मा पहनकर केष्टो काम कर रहा था। चश्मा और भवों के दरार से सीताराम की ओर देखकर बोला, आओ पंडित। अपने बेटे को मैं तुम्हारी ही पाठशाला में दूँगा। बड़ी मोटी अक्ल है उसकी। जरा ख्याल रखना। बैठो। सामने ही कुछ

मोढ़े रखे थे, केष्टो ने उसी ओर संकेत किया।

सीताराम ने अपने हाथ से दो अंगूठियां खोलकर दीं, जरा देखिए तो कितना वजन है। सोना तो गिन्नी सोना है, मुझे मालूम।

अंगूठियों में एक दी है उसके पिता ने और दूसरी दहेज में मिली है। वेच दूं मैं?

सुनार ने दोनों अंगूठियां हाथ में लेकर एक वार सीताराम के मुख की ओर देखा फिर दोनों अंगूठियों को दोनों हथेलियों पर लेकर वजन का अनुभव से अनुमान लगाता हुआ बोला, डेढ़ तोला होगा या छह आना याने एक तोला छह आना होगा। इसके वाद नन्हा तुला यंत्र निकाल कर वजन किया। तराजू के सिर पर के धागे को सावधानी से उठाकर वाट की ओर दो घुंघचियां रखीं, तराजू की कांटी स्थिर हो खड़ी हो गयी। केष्टो ने हँसकर कहा, एक तोला साढ़े छह आने।

अंगूठियां वेचकर तैंतीस रुपये कुछ आने हो गए। आज उसने युद्ध के वाजार को धन्यवाद दिया। युद्ध छिड़ने के कारण वाजार में मानो आग-सी लग गई है। पिछले नवम्बर में युद्ध थम गया है लेकिन आग आज भी वुझी नहीं। सीताराम ने खुद ही कितनी वार कहा है, काल-युद्ध। लेकिन आज सोना वेच इतने सारे रुपये मिल जाने से वह युद्ध छिड़ने के लिए खुश हुआ। सन उन्नीस सौ उन्नीस वाला युद्ध का वाजार।

रुपया लेकर वह पहले ही अनन्त वैरागी के घर गया। वैरागी सिर पर बिसात लिये फेरी करता फिरता है। माला-डोरा-आईना-कंघी, तेल सावुन और कुछ गिलट के गहने। उसने देखा है वैरागी की दुकान में काले मखमल के छोटे-छोटे खाने में तरह-तरह की अंगूठियां रखी रहती हैं। दो अंगूठियां छाँटकर उसने खरीद लीं, कुछ-कुछ उसकी अपनी अंगूठियों की तरह। अपने वावा और मनोरमा को वह यह वात जानने नहीं देना चाहता। वावा दुखी होंगे, उनकी दी हुई अंगूठी उसने वेच डाली है। शायद डाँटें भी, वोलें, तू ही लछमी को भगाएगा। मनोरमा शायद मुंह लटका ले, शादी की अंगूठी, उसके वाप की दी हुई चीज उसने वेच डाली है।

वे उसके दिल की वात तो नहीं समझेंगे।

इसके वाद वह गया रघुनाथ राजमिस्त्री के घर। तय कर आया; कल सवेरे से ही वह अपने लोगों को लेकर साहा के वखार-गृह जाएगा। छोटी-मोटी मरम्मत जो कुछ है कर देगा और चूने से घर और वरामदे की सफेदी कर देगा। रघुनाथ को ही चूना और कूची के लिए पैसा दे आया। थोड़ी दूर आकर फिर लौट गया और वोला, थोड़ी-सी नील दिये विना ठीक नहीं होगा। नील भी थोड़ी-सी खरीद लेना।

रघुनाथ ने कहा, तो फिर थोड़ी-सी चीनी भी इसके साथ दीजिए। वर्ना

पकड़ेगा नहीं, बदन का घिस्सा लगते ही सफेदी उठ जाएगी। सल्वाट वाले सिर की तरह नीचे की मिट्टी उघड़ आएगी।

अच्छी बात। कितनी लगेगी बताओ।

चीनी लगेगी आधा पाव और नील···। खैर, चार आना पैसा दे जाइए।

जरा और सोच लेने के बाद सीताराम बोला, और भी एक काम का जिम्मा तुमको लेना पड़ेगा। घर का जिम्मा तो तुम्हारा है। बाहर आँगन को भी सलोतर बना देना होगा। सलोतर ढंग से छील-छालकर गोबर-मिट्टी से पुताई कर देना पड़ेगा। एक फालतू मजूर और मजूरिन ले लेना। ठीक है न ?

अच्छी बात। यह भी करा दूंगा।

कल हमारा सारा काम खत्म हो जाना चाहिए। आज है मंगल। कल बुध को तुम सबकुछ निवटा दोगे। परसों से ही मेरी पाठशाला खुल रही है, समझे ?

सो आप देख लीजिएगा। शाम को चार बजे आ जाइएगा। सब कम्पिलीट कर रखूंगा। अगर न हो तो मेरा कान उमेठ दीजिएगा, बस।

चार बजे तक वह धीरज न धर सका। छात्रों को पढ़ाकर उसने पोखर में नहाने का काम निबटा लिया। झरने तक जाने की फुर्सत नहीं है आज। नहा-कर खाना खा लिया और सीधे पाठशालागृह में जा पहुँचा। सारा काम खत्म कराकर जब वह निकला तो सिर से पैर तक चूने की गर्मी से कट गए हैं। खुद भी वह रघुनाथ के साथ खटता रहा। तिपहर के पांच बज रहे थे। कुरता-बनियान-जूते पोखर के किनारे रख वह पानी में उतर गया।

तिपहर को घूमने जाना भी नहीं हो पाया। और भी बहुत-सारे काम बाकी हैं। आज उसने जरा चाय पी। मेहनत की है, दो बार पोखर में नहाया भी। चाय पीकर फिर चल पड़ा वह। अब असबाब : बाबुओं की कोठी से एक कुर्सी मिली है—साहा ने भी एक दी है। सतीश मिस्त्री के घर से छोटा शेल्फ, मेज और ब्लैकबोर्ड मंगवा लिए उसने। ठीक दरवाजे के सामने दीवार से सटाकर उसने अपनी कुर्सी रखी, उसके सामने मेज, कुर्सी के दाहिने हाथ दीवार पर उसने ब्लैकबोर्ड टांग दिया, इस ओर बड़े दो हुकों से पैकिंग बाक्स से बने शेल्फ को जड़ दिया। कुर्सी के ठीक सिर के ऊपर ढाई इंच लम्बी कील मजबूती से ठोककर उस पर क्लाक घड़ी लगा दी। दम देकर घड़ी को चालू कर दिया। मुहल्ले के छोटे-छोटे लड़के इकट्ठे हो गए थे। उनके उत्साह की भी कोई ओर-छोर नहीं। उनके लिए पाठशाला बन रही है, यहीं वे पढ़ेंगे। इसी बीच वे सीताराम को मास्टर जी कहकर पुकारने लगे हैं। घड़ी को चालू कर उन्हीं लड़कों में से एक सयाने को बुलाकर कहा, साहा जी की दुकान से पूछ आना कितने बजे हैं। कितने बजकर कितने मिनट ठीक-ठीक पूछ कर आओगे।

दूसरे एक से कहा, तुम जाओ, यह चाबी लेकर धीरानन्द बाबू के घर चले

जाओ। कन्हाई राय होगा, उसको देना, कहना, मास्टरजी की लालटेन दे दीजिए।

फिर वह घड़ी की सूई घुमाने लगा। नौ पर सूई थी। सावन का महीना, शाम हो आई है। इस वक्त कम-से-कम साढ़े छह:, पौने सात बजा होगा। दस, ग्यारह, बारह—टन्न-टन्न शब्द से घड़ी टंकोर बजा रही है। बढ़िया आवाज और तेज़ आवाज़ !

मास्टर जी !

सीताराम चौंक पड़ा। धीरा बाबू की आवाज़ है। वह झट कुर्सी से उतर पड़ा। कमरे से बाहर निकल आया। उसका दिल आवेश से भर आया। आप धीरा बाबू ?

धीरानन्द ही हैं। वह अकेले नहीं, श्यामू-देबू भी आए हैं, साथ कन्हाई राय के दो हाथों में दो लालटेन। उनमें से एक सीताराम की है।

धीरानन्द बोला, देखने आया कि आपकी पाठशाला कैसी हुई ? श्यामू-देबू भी आए हैं।

सीताराम ने देबू को गोद में उठा लिया। देबू अपनी हंसी छिपाने की कोशिश में दांतों से होंठ दबाये मुंह फेरे रहा।

धीरानन्द बोला, वाह ! बहुत अच्छा, बहुत खूब !

अकारण ही सीताराम शर्मा गया। फिर कुंठित स्वर में बोला, पाठशाला जो है।

धीरानन्द बोला, पाठशाला से कहीं बेहतर बना है। वाह ! घड़ी तो नई देख रहा हूं।

सिर झुकाये सीताराम ने कहा, क्यों खूबसूरत है न ?

इसी क्षण सीताराम ने खुद ही एक ऐब ढूंढ़ लिया। बगल की दीवार पर जैसे घड़ी लगी है वैसा ही उधर वाली दीवार पर अगर एक चित्र होता।

धीरानन्द ने कहा, बहुत अच्छा हो। एक दीवार पर नहीं, तीन दीवारों पर तीन—स्वामी विवेकानन्द, महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर और एक—विद्यासागर का चित्र तो मिलता नहीं, एक माता सरस्वती का चित्र ! बड़ा ही अच्छा लगेगा।

धीरानन्द की बात सीताराम को भा गई। उसके मुंह की ओर देखता रहा। उसे लगा, काश यह लड़का छोटा होता ! यह अगर उसका छात्र होता। ऐसा न हो तो छात्र ही क्या !

धीरानन्द बोला, इसके बाद हाथी, घोड़ा, शेर, गाय, भैंस, सांप इनके कुछ रंगीन चित्र मंगवा लीजिएगा। दीवार पर टांग दीजिएगा। लड़कों को बेहद पसन्द आएंगे।

फिर उसने कहा, पाठशाला का नाम क्या रखा आपने ? नाम दीजिए—सन्दीपन पाठशाला। सन्दीपन मुनि की पाठशाला में श्रीकृष्ण ने पढ़ाई की थी।

इस बरामदे की दीवार पर मोटा-मोटा लिख दीजिए। या खुद ही एक साइन-बोर्ड बना डालिए।

सीताराम विस्मय से मुग्ध-सा सुन रहा था। पहले दिन बाहर से इस लड़के की बातें सुनकर जैसी अद्‌भुत लगी थीं, इन दस दिनों के बाद फिर उसकी बातों से वैसा ही विस्मय जाग उठा।

कन्हाई राय बोला, चलिए भैया साहब।

चलो। धीरानन्द उठा।—आप भी आइए मास्टर जी।

आप चलिए। मैं जरा बाद में आ रहा हूं। लेकिन देबू तो सो गया है।

धीरानन्द बोला, यह बड़ा चंचल है, जरा स्थिर होते ही सो जाता है। रायजी, तुम उसे ले लो।

वे चले गए। सीताराम अकेला बैठा रहा। मेज पर लालटेन रख, कुर्सी पर बैठे बाहर अन्धेरे की ओर देखता रहा वह। उसकी पाठशाला! बच्चे शोर मचाते पढ़ते रहेंगे, वह बैठा रहेगा। तीखी नजरों से देखता रहेगा, जिसकी जहां गलती होगी संशोधन करता रहेगा। वे सारे लोहे के पिंड हैं। वह लुहार है। वह लोहे के पिंड से तरह-तरह का हथियार बना डालेगा। अथक मेहनत से उसके बदन से पसीना चू पड़ेगा। जतन से उनके धार पर सान चढ़ाकर तेज करेगा। साल-दर-साल लड़कों में कुछ तो लोअर प्रायमरी पास कर चले जाएंगे, वे बड़े स्कूलों में जायेंगे, वहां से कालेज चले जायेंगे। कितने लोग जीवन में कृती बनेंगे। भेंट होते ही सविनय सम्मान से 'पंडित जी' कहकर उसको सम्बोधित करेंगे! यहां पढ़ाते-पढ़ाते वह प्रौढ़ हो जाएगा, वृद्ध होगा, सिर के बाल सफेद हो जायेंगे, क्षीण दृष्टि वाली आंखों पर ऐनक चढ़ाए वह तब भी पढ़ाता रहेगा। वे उसके चारों ओर रहेंगे, नन्हें-नन्हें मुख कलरव करते हुए पढ़ेंगे।

घड़ी में टन्न-टन्न दस बज गये। काफी रात हो गयी है, बाबू की कोठी में भोजन समाप्त होने का समय हो आया। वह उठा। लालटेन लेकर फिर एक बार कमरे को देखा। फिर दरवाजे पर ताला लगाकर आंगन में उतर आया। उसकी पाठशाला। आह!

आंगन में एक बगीचा-सा बनाना है। छोटे-छोटे कुछ खुरपे और दो छोटी-छोटी बालटियां खरीदेगा। लड़के पौधों के लिए जगह खोदेंगे, पोखर से पानी लाकर जड़ें सींचेंगे;—चारों ओर फूल खिले रहेंगे, सुन्दर शोभा होगी।

लड़कों को एक फुटबाल भी खरीदकर देना है। कई कदम जाकर उसे याद आया, घड़ी के नीचे दम भरने का दिन लिख देना होगा—बुधवार, सन्ध्या सात बजे।

रोजाना सवेरे उठकर वह पुण्य श्लोकों का स्मरण करता है। बचपन से ही पिता से उसने यह सीखा है। बाबा जो कहते हैं, बचपन में जो उसने सीखा था उसमें कुछ गल्तियां हैं। इस समय बेशक वह शुद्ध श्लोक ही कहता उसने प्रगाढ़ भक्ति के साथ उस श्लोक का उच्चारण किया।

मूर्त्ति मन-ही-मन कल्पना की और सिद्धिदाता गणेश का स्मरण किया। फिर उसने पुण्यश्लोक महात्माओं का स्मरण किया। रामकृष्णदेव को प्रणाम किया, उस नार्मल पास पंडित जी का स्मरण किया, प्रणाम किया; यहाँ के हेडमास्टर का भी स्मरण किया, प्रणाम किया। साथ ही साथ उसे याद आ गयी महात्मा हाजी मोहम्मद महसीन की मूर्त्ति। उनको भी प्रणाम कर वह दरवाजा खोल कर निकल आया। बाहर निकल कर वह बहुत खुश हुआ। सामने ही बाग में भोर के झुटपुटे में पक्की वेदी पर धीरानन्द बैठा था। अहा, भले आदमी का मुख ही देखा, दिन अच्छा बीतेगा। आज दिन अच्छा जाने का मतलब हुआ—उसकी पाठशाला का भविष्य अच्छा होगा। पिछली रात वह घर नहीं गया। सवेरे से ही बहुत-सारा काम करना है। मुस्कराते हुए आगे बढ़कर उसने धीरानन्द से कहा, वाह, आप तो बहुत सवेरे उठते हैं!

धीरानन्द कुछ लिख रहा है। उसने कहा, जी। लिखता ही रहा वह। सीताराम ने इस छोटे-से उत्तर की प्रत्याशा नहीं की थी। वह जरा खिन्न हुआ। फिर भी कुछ क्षण खड़े होकर बोला, आज आपको प्रणाम करूँगा।

क्यों? प्रणाम क्यों करेंगे?—बिना मुख उठाए ही धीरानन्द बोला।

आज अपनी पाठशाला खोलूँगा।

लेकिन मैं तो किसी का भी प्रणाम नहीं लेता, अपने सगे लोग, याने—भाई-बहनों के सिवा।

मैं भी तो आप लोगों का अपना ही बन गया हूं।

धीरानन्द लिखता ही रहा, जवाब नहीं दिया।

सीताराम विस्मित नहीं हुआ, लेकिन उसे लगा, यह धीराबाबू की अधिकाई है, कुछ-कुछ चालबाजी जैसी ही। वह बिना प्रणाम किए ही धीरे-धीरे निकल गया और भरसक जल्दी लौट आया। बहुत-सारा काम है। शुभ कार्य, अपने जीवन की साध पूर्ण करने वाला कार्य आरम्भ करेगा वह। गांव के सारे देव-मन्दिरों में प्रणाम करना है। फिर यहाँ के ग्राम देवता—जाग्रत बूढ़ी काली माता के थान पर पूजा कराएगा। पूजा के अन्त में निर्माल्य लेकर कपड़े के टुकड़े में बांधकर पाठशाला के दरवाजे के सिर पर बांध देगा। माँ का प्रसादी सिन्दूर लेकर दरवाजे के सिरे पर लिखेगा—सिद्धिदाता गणेश जयति! उसके नीचे पाठशाला खोलने की तारीख लिख रखेगा, २० श्रावण, सन् १३२६ बंगाब्द।

झरने से लौटकर देखा, धीरानन्द अब और लिख नहीं रहा है, लिखा हुआ पढ़ रहा है। गड़ुवी रखकर, बनियान-कुरता पहनकर निकल जाने के लिए सीताराम ने कमरे में ताला लगाया। सवेरे-सवेरे जाकर मन्दिरों में प्रणाम कर आएगा।

धीरानन्द बोला, कितनी दूर घूम आए?

झरना तक।

मैं भी रोज सवेरे टहलने जाता हूं लेकिन आज हो न सका। बड़ी नींद आ रही है।

शायद बहुत सवेरे उठे होंगे, इसलिए।

नहीं, कल रात को बिल्कुल सोया ही नहीं। रात-भर में एक कविता लिखी है।

कविता—सीताराम दंग रह गया, इतना-सा लड़का कविता लिखता है! उसने पूछा, कविता लिखी आपने?

जी। लेकिन अभी फिर कहां जाएंगे?

देवी-देवताओं को जरा प्रणाम कर आऊं। एक शुभ कार्य करने जा रहा हूं।

जरा चुप रहने के बाद धीरानन्द ने कहा, लेकिन एक बुरी खबर दे रहा हूं। रघुनाथ राज का बेटा आया था आपकी खोज में। कल रात को कुछ लोग पाठशाला के आंगन में उपद्रव मचाते रहे। उन लोगों का घर नजदीक ही है। उन लोगों ने देखा है। दारू-आरू पीकर नाचते-कूदते रहे हैं शायद। कुछ नुकसान भी पहुंचाया है। बाबू टोले के चन्द लोगों के नाम भी बताए।

सीताराम का दिमाग झन्ना उठा। वह फौरन भागने लगा।

ठहरिए, मैं भी जाऊंगा।

■■

पाठशाला में घुसकर सीताराम स्तम्भित रह गया।

साफ सुथरे आंगन और बरामदे को कदर्य रूप से गन्दा कर गये हैं। जूठे पत्तल, मांस का अवशेष, हड्डियों के टुकड़े चारों ओर पड़े हैं। मिट्टी की जूठी हांडी तोड़कर चारों ओर बिखेर दी गयी है। बगाबग सफेद दीवार पर लकड़ी के कोयले से लिखा है—किसान-किसान-किसान, कलवार-कलवार-कलवार। एक संस्कृत श्लोक भी लिखा है। उसकी भाषा विचित्र है और भाव भी—

"अश्वपृष्ठे गजस्कन्धे यदि वा—
दोलायाम् याते—
न किसान सज्जनायते।"

आंगन दुर्गन्ध से भर गया है। नीचतम ढंग से आंगन को मैले से भर दिया है। इसी बीच दर्शक भी बहुत-सारे इकट्ठे हो गए थे। नाक कपड़े से दबाए उनमें से कुछ तो इन बुरी हरकत करने वालों को बुरा-भला कह रहे हैं और कोई-कोई इस रसिकता के रसग्राही जैसे मुस्कराकर धीमे स्वर में उनकी तारीफ कर रहे हैं। सीताराम मिट्टी का बुत-सा बना निर्वाक निस्पन्द-सा खड़ा रहा। ऐसे निष्ठुर और नीच अपमान का दुःख उसको जीवन में कभी झेलना नहीं पड़ा था। कहीं शिवकिंकर उसे पकड़कर रास्ते पर हजार लोगों के सामने बेवजह जूता खोल कर मारता तो भी इतना दुःख न हुआ होता। ज्योतिष साहा भी आ पहुंचा, वह भी शुरू में सन्नाटे में आ गया। फिर वह सजग हो उठा। निगाह घुमाकर चारों ओर के लोगों को देख उसने व्यस्त भाव से कहा, ऐ, जरा मेरे

घर जाकर झाड़ू-पंजा तो लेते आना। रघुनाथ, रघुनाथ हो ?

रघुनाथ था। उसने कहा, जी।

सफेदी है और ?

हाँ शायद थोड़ी-सी बची है।

हो तो बेहतर, वर्ना देखभाल कर ले आओ। दीवार पर की लिखावट घिस घार पोंछकर सफेदी पोत दो। जाओ, जाओ, देर मत लगाओ। यह लो, झाड़ू-पंजा ले आए ? अरे भाई, चार आने पैसा दूंगा, कोई पंजा से खुरचकर सारा मैला फेंक दे।

किसी ने भी आहट नहीं दी। सभी लोग खिसकने लगे। जी, यह काम कौन करेगा ?

आठ आना पैसा दूंगा।

एक ने कहा, अजी, समूचा एक रुपया देने पर भी यह नहीं होगा। मतिया मेहतर को बुलवा भेजिए।

अचानक ही एक विस्मयकर घटना घटित हो गयी; धीरानन्द ने आगे बढ़कर पंजा उठा लिया, विना कुछ कहे-सुने !

फिर बोला, परेशान मत होओ ज्योतिष ! मतिया को ग्यारह बजे से पहले नहीं पाओगे।

लेकिन, तो फिर आप क्यों ! लाइए, लाइए मुझे दीजिए।

मुझे इसकी आदत है। मतिया से झगड़कर अपने घर का ड्रेन मैं सालभर साफ करता रहा हूं। मुहल्ले में कुत्ता मरने पर उस लावारिस सड़ते जानवर को मैं ही फेंक आता हूं। धीरानन्द हँसा।

सीताराम इस बार आगे बढ़ आया, उसकी निस्पन्द जड़ता इतनी देर में एक विपरीत भाव के आघात से दूर हो गई। उसने कहा, नहीं, मुझे दीजिए। मेरी पाठशाला है।

उसका चेहरा तमतमा रहा है, होंठ फड़क रहे हैं। धीरानन्द बोला, यह तो मैं फेंक आऊँ। इसको लेकर खींचातानी करने से तो कोई फायदा नहीं। वही उसने किया, मैला फेंक आया और पंजा सीताराम के हाथ में देते हुए बोला, आपकी पाठशाला है, आप तो करेंगे ही, लीजिए।

सारी कीच मानो धीरानन्द ने पोंछ दी। फिर सारा-का-सारा साफ-सुथरा कर, नहा-धोकर जब वह देवस्थान में जाने के लिए तैयार हुआ तो उसका मन दिव्य प्रसन्नता से भर उठा था। सभी देवस्थानों में प्रणाम कर बूढ़ी काली माता को पूजा चढ़ाकर वह पाठशाला जा पहुँचा। उतनी देर में मुहल्ले के मातवर लोग बरामदे पर आ जमकर बैठ गए थे। ज्योतिष साहा ने किसी मजदूर से आम के पल्लव मूंज की सुतली में पिरोकर बरामदे के एक सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक टंगवा दिये हैं; दरवाजे के दोनों ओर दो जल-भरे कलशों के मुख पर भी आम्रपल्लव हैं। और इन दो कलशों के बगल में केले के दो छोटे-छोटे दरख्त।

आँगन में लड़कों की भीड़। वे शोरगुल कर रहे हैं। सीताराम प्रसादी निर्माल्य लेकर आँगन में ही खड़ा हो गया। उसे बड़ा अच्छा लगा। सुबह मन जितना दुःख से बोझिल हो गया था, क्षोभ से जहरीला हो उठा था, उससे कहीं ज्यादा सुख और आनन्द से उसका दिल भर उठा। दुनिया में बुरे आदमी जितने हैं, नेक आदमी उनसे कहीं ज्यादा हैं, पाप से पुण्य अधिक है। इसमें उसे आज कोई सन्देह नहीं। भगवान के सिरजे हुए जो हैं वे! इस क्षण भगवान का फिर एक बार स्मरण कर, प्रणाम कर, वह बरामदे पर उठ आया।

निर्माल्य बाँधना, नाम लिखना खत्म कर वह कुर्सी पर बैठ गया।

ज्योतिष बगल की कुर्सी पर बैठा। लो, भरती शुरू करो। मेरे बेटे का नाम लिखो पहले—सीतेश चन्द्र साहा। ओ बेटा सीतेश, मास्टरजी को प्रणाम कर। दे, भरती की फीस दे दे। हाँ। क्यों स्वर्णकार काका, तुम्हारा बेटा कहाँ है जी?

एक-एक कर सोलह लड़के भरती हुए। उसके प्रसन्न मन को यह सोलह संख्या भी बेहद भा गई। सोलह, शुभ संख्या है, पूर्णता का लक्षण।

तिपहर को चार बजे छुट्टी। छुट्टी दे, सबकुछ सहेज, दरवाजे पर ताला बन्द कर जब वह रास्ते पर निकल आया, थकान से वह चूर-चूर हो रहा था। चाबी साहा जी को देनी है, उन्होंने सोने के लिए एक आदमी की व्यवस्था की है।

एक भूल हो गयी है। टिफिन के वक्त भी याद पड़ी और छुट्टी के वक्त भी। एक घण्टा चाहिए। टन्न-टन्न ध्वनि के साथ स्कूल बैठेगा। टन्न-न-न-न शब्द के साथ स्कूल में छुट्टी होगी। उसे अपने पाठ्यजीवन की बातें याद हो आईं। स्कूल लगने का घंटा बजता मानो वह पुकारता रहता। फिर छुट्टी का घंटा। अहा! यह आवाज लड़कों के कानों में कितनी सुहावनी लगती। घंटा एक चाहिए ही।

एक अफसोस! धीराबाबू ने ऐसा बरताव किया, माँ ने इतना आशीर्वाद दिया, लेकिन श्यामू-देबू को उसकी पाठशाला में किसी तरह से भी भरती नहीं किया। उन्होंने कहा—कई तरह के सोहबत-संगत से बचने के लिए ही तो घर पर तुमको रखा है बेटा! तुम्हीं तो उनको पढ़ाओगे।

ट्रेन की सीटी बजी कहीं दूर, गाँव के स्टेशन पर, सीताराम चौंक पड़ा। पाँच बजे वाली ट्रेन से मनोरमा आएगी। जी में आया लपक कर जाय। अगले ही क्षण वह अपने से झेंप गया। आज नहीं, वह तो कल है। आज बृहस्पतिवार है।

●●

पाँच

वृहस्पतिवार को ही छुट्टी ली थी उसने बाबुओं की कोठी से। शुक्रवार सवेरे उसे ख्याल हुआ कि शुक्रवार की भी छुट्टी उसे लेनी चाहिए थी। आज मनोरमा को लेकर बाबा आएंगे। पाठशाला खोलने की तरह यह भी उसकी साध का एक दिन है। लेकिन मारे लाज के वह बता नहीं सका। मनोरमा के आने से पूर्व जो-जो काम उसने करने को सोच रखे थे उनमें प्रायः कुछ भी वह नहीं कर सका। कई रोज ये बातें सोचने का मौका ही उसे नहीं मिला; मौका क्यों, मानो ध्यान ही से उतर गयी थीं। कमरे को खेत-मजूर और उसकी बीवी ने खड़िया मिट्टी से पोत दिया है। बाबा ने बड़ा तख्तपोश मरम्मत के लिए भेज दिया था, मतिलाल बढ़ई ने उसे पहुँचा दिया है, लेकिन वह बाहर ही पड़ा है। बड़ा शेल्फ जो उसने बनवाया है, वह भी रत्नहाटा के सतीश मिस्त्री के घर से लाया नहीं गया। नायब जी अलगनी ले आए हैं, वह बाबुओं की कोठी में पड़ी है। ख्वाहिश थी चार-पाँच रुपए से एक टाइमपीस या पाकेट वाच खरीदने की, रुपए में कमी होने से नहीं खरीद सका। उसे याद आया, वहाँ एक दवा की दुकान से दो पैकिंग केस उसने और खरीदे हैं। पुराने कपड़े या रंगीन अंगोछे से ढाँप कर रखने से अच्छा दिखेगा। एक के ऊपर रहेगा मनोरमा का बक्सा। दूसरा तख्तपोश के बगल में रखने पर लालटेन, पानी का गिलास, पान-मसाला रखे जा सकेंगे। बिस्तर पर लेटे मनोरमा के न आने तक किताब-इताब पढ़ेगा वह, किताब रखी जा सकेगी। इच्छा है कि एक साप्ताहिक अखबार वह रखे। पाठशाला में टिफिन के वक्त कुछ पढ़ेगा, शेष रात को घर लौटकर पढ़ेगा, उसको भी उसी पर रखेगा। एक और इच्छा है उसकी, रात को घर लौटते समय बाबुओं की कोठी से कुछ फूल ले जाएगा वह। बाबुओं की कोठी में रजनीगन्धा, बेला, जूही फूल के कई पौधे हैं; और एक है मालती लता की बेल, अनगिनत फूलों से लदी रहती है, शाम को सारी कोठी मानो सुगन्ध से मतवाली बनी रहती। हर शाम कुछ फूल बाबुओं की कोठी का नौकर चुनकर धीराबाबू के पढ़ने के कमरे में दे आता है। कभी-कभी डंठल समेत रजनीगन्धा काट कर ले जाता है। फूलदान में पानी भर उसमें लगा देने से, कहते हैं, बहुत दिनों तक रहता है। रोजाना रात को वह फूल ले जाया करेगा। फूलों को काँसे की तश्तरी पर सजाकर उसी बक्से पर रखेगा। लेकिन दोनों पैकिंग केस रत्नहाटा में हैं—उसी दुकान में पड़े हैं। खड़िया मिट्टी से पुती हुई दीवार पर खिड़कियों-दरवाजे-ताखे के ऊपर गेरू मिट्टी से चन्द अल्पना अंकित करने की इच्छा थी—सो भी नहीं हो सका। कुछ चित्र उसके संग्रह में हैं, हुगली में पढ़ते वक्त मासिक-पत्र से काट-काट कर एक कापी में रख दिया है, उनमें से कुछ को दफ्ती पर गोंद से चिपकाकर उसके चारों ओर काले कागज की बारीक पट्टी जैसी लगाकर टाँगने की कल्पना भी उसकी है। लेकिन कुछ भी नहीं हुआ। न

हुआ हो, होगा। सबसे बड़ा काम तो हो गया है, पाठशाला तो खुल गयी है। यही उसका सबसे बड़ा आनन्द है। अब यह सब भी वह एक-एक करके कर डालेगा। जय भगवान—कहकर वह लेट गया।

सबेरे उठ कुरता, बनियान, लालटेन, लाठी, छाता लेकर निकलने के बाद भी गाँव के सिवान से वह लौट आया। किसी तरह से भी उसे जाने की इच्छा नही हुई। सबेरे से दस बजे तक सहेज लेने पर वह काफी कुछ सहेज लेगा।

खेत-मजूर को लेकर उसने पहले ही तख्तपोश को कमरे में लाकर रख दिया, कमरे के दक्षिण-पूर्व कोने मे। सिरहाने एक खिड़की और बगल में भी एक। खिड़की हालांकि नाम से ही, यों चौड़ाई मे एक हाथ और लम्बाई में बस डेढ़ हाथ। खैर जो है सो है। पुराने जमाने का घर है। छोटी है तो क्या, है तो खिड़की ही। फिर उसने खेत-मजूर से कहा, रतनहाटा चला जा तू। दौड़ते हुए जाना और आना पड़ेगा। पहले जाना बाबुओ की कोठी में। बताना, इस बेले मैं जा नहीं सका। अगर पूछें, क्यो ? तो बताना,—। वह चुप हो गया।

क्या बताऊं ?

बताना—। और भी कुछ देर सोचा, *मूठमूठ तबियत खराब होने की बात* बताते संकोच हुआ। सच्ची बात उम्दा ढग से कैसे बतायी जाय इसको सोच न पाने से उसने कहा, बताना, यह तो वे ही आकर बताएगे। हाँ, वहाँ जिस कमरे मे मैं रहता हूं उस कमरे मे एक नई अलगनी, लकड़ी की बनी अलगनी, नायब जी बर्धमान से खरीद लाये हैं, उसको ले लेना, कन्हाई राय से कहते ही वह निकाल देगा। यह रही कमरे की चाबी। दवा वाली दुकान में दो लकड़ी के बक्से खरीदे रखे हैं। बताना, सीताराम मास्टर का किसान हूं मैं, मुझे दे दें। हल्के बक्से हैं, उन दोनों को लेने के बाद सतीश बढई के पास जाना। वहाँ और एक लकड़ी का सामान है।—सतीश से कहना, लकड़ी वाली वह टाँड दे दो। वह भी बहुत हल्की है। एक के ऊपर दूसरा, दूसरे के ऊपर तीसरा—यों सजाकर सिर पर धरे सनसनाते हुए चले आना, समझे ? तेज चाल जाना और तेज चाल आना। इसके लिए तुझे दो आने पेशगी दे रहा हूं, जल्दी-जल्दी लौट आओ तो और दो आने मिलेंगे।

खेत-मजूर चला गया। खेत-मजूर की बीवी से कहा, कमरे की फर्श और आँगन को अच्छी तरह लीपपोत दो भौजाई। तुमको भी दो आने मिलेंगे।

किसान वधू कोई तरुणी नहीं है, अधेड़ उम्र की है, उसने सीताराम को किशोर वय मे देखा है, देवर का सम्बन्ध बनाकर बातचीत करती है, हँसकर बोली, आज पैसा नहीं लूँगी। आज तुम्हारी दुल्हन आएगी, आज जो कुछ भी कहोगे अच्छी तरह कर दूंगी। लेकिन दुर्गा-पूजा मे कपड़ा लूगी। क्यों, भागते क्यों जी ! ओ देवर !

अभी आया। सीताराम लपककर निकल गया। अच्छी जवाबदेही मिल गई उसे। खेत-मजूर को पुकार कर लौटाया और बोला, अगर बाबुओं की कोठी मे

पूछें क्यों नहीं आया तो बताना—

जी हां, कहूंगा, वह तो वे आकर बताएंगे।

नहीं। बताना—बाबा घर पर नहीं हैं, घर का कोई काम है, इसलिए इस वेले नहीं आ सके। सीधे पाठशाला आएंगे। क्यों ?

जी, ऐसा ही बताऊंगा।

यकायक ही सच्ची बात कितने बेहतरीन ढंग से उसे याद आ गयी है। बात बताकर खुश-खुश वह घर लौट आया। रास्ते में एक गली में घुसकर थोड़ा-सा जाते ही जुलाहों का घर है। दो बढ़िया रंगीन अंगोछे लाने हैं। ओफ ! बड़ी गलती हो गयी। कुछ छोटी कीलें लाने के लिए कह देता। उसने आकाश की ओर देखा। आंगन में छाया देखी। किसी जमाने में आंगन की छाया देखकर वह स्कूल जाया करता था। सावन के महीने में शायद यहां—सीढ़ी के बीच पूरब वाले घर की छाया आ पड़ने पर साढ़े नौ बजते थे और, और वे स्कूल जाते थे। अब भी काफी समय है। पाठशाला ग्यारह बजे है, वह यहां से दस बजे जाएगा। तन्तुवाय के घर से अंगोछा खरीद लाने के बाद उसने चित्र निकाले। गोंद तैयार कर वह चित्रों को तैयार करने लगा।

बाबुओं के साथ सम्पर्क करने में उसे मानो कोई संकोच है। हाथ का काम अधूरा छोड़ उसी समय वह बाबुओं की कोठी की ओर दौड़ पड़ा। ठीक वक्त पर ही वह पहुंचा—साढ़े दस से पांच मिनट पहले ही। इरादा था कि वहां नहाकर खाना खा लेगा, फिर पाठशाला जाएगा। लेकिन रत्नहाटा पहुंचने के बाद बाबुओं की कोठी के नजदीक आकर उसने एक संकोच का अनुभव किया। अगर न आने का कारण पूछ बैठें ? पूछें, कौन-सा ऐसा काम था जो ? तो वह क्या कहेगा ? आज मनोरमा आएगी, उसी के लिए घर-द्वार जरा सहेज कर रख रहा था—यह क्या कहा जा सकता है ? इसके अलावा, सीताराम का दिल धड़क उठा, अगर कहें—इस तरह नागा करने से क्या काम चलता है ? कहना कोई नामुमकिन तो नहीं है। मां शायद मधुर लहजे में कहेंगी, धीराबाबू घुमाफिरा कर। लेकिन वह भेंगा नायब जी शायद सीधे-सीधे ही कह डाले, यहां तक कि कन्हाई राय भी कह सकता है। उस मध्यपदलोपी कर्मधारय और उपपद इन दोनों पर क्रमशः मानो उसका मन विरूप होता जा रहा है। नायब का नाम रखा है उसने मध्यपदलोपी कर्मधारय, सभी कुछ में हैं, कोई भी नहीं हैं, लेकिन वे ही सबकुछ घटित कराते हैं। कन्हाई राय नितान्त अप्रधान होते हुए भी सभी बातों में हैं, अधिकार हो चाहे न हो, रोब झाड़ेगा ही, इसलिए उसका नाम रख छोड़ा है 'उपपद।' वे अगर जवाब तलब करें तो जवाब न देने से शायद उसकी इज्जत बरकरार रहेगी, लेकिन बिना काम किये खाने के लिए जा पहुंचने पर, अपमान उसका हो जायगा, खुद ही कर बैठेगा, इससे न जाना ही बेहतर है। वह लौटा। बिना नहाये, बिना खाये आकर पाठशाला खोलकर वह बैठ गया।

छुट्टी के बाद वह बाबुओं की कोठी गया। लेकिन इस बार भी उसकी शंका झूठी साबित हो गयी। नायब ने हँसकर कहा, क्यों पंडित, मिठाई कहाँ?

मिठाई?

कन्हाई ने हँसकर कहा, ससुराल की।

नायब बोला, दुल्हन आयी? अरे नहीं, शायद पाँच बजे वाली ट्रेन से आएगी!

सीताराम के कान शर्म से लाल हो उठे। वह समझ गया कि निगोड़े खेत-मजूर ने सबकुछ बता दिया है।

कन्हाई बोला, जाओ, कोठी के भीतर तो जाओ। श्यामू-देवू जिद पकड़े बैठे हैं, मास्टर जी की दुल्हन देखेंगे।

सीताराम आनन्द से उच्छ्वसित हो उठा और उस बेले के संकोच के लिए लज्जित अनुभव करने लगा। नायब और कन्हाई के प्रति विरूप मनोभाव के लिए ग्लानि भी कोई कम नहीं हुई। उसने निश्चय किया, ठगे जाना ही है अगर तो आदमी को नेक समझकर ठगे जाना ठीक है। बुरा सोचकर ठगे जाने से बढ़कर कोई अपराध नहीं, उसमें अपने ही निकट अपराधी बनना पड़ता है। इस क्षण उसने यही संकल्प लिया।

श्यामू और देवू लड़-झगड़ रहे थे। कोठी में कोई और नहीं। अकेले में द्वन्द्वयुद्ध काफी जोर पकड़े है, श्यामू बड़ा है, देवू उससे मुकाबला नहीं कर पा रहा है, जमीन पर गिर रहा है, मुँह लाल हुआ जा रहा है, लेकिन अजीब लड़का है, रो नहीं रहा है। सीताराम जरा हँसकर आगे बढ़ गया, छोड़ो, छोड़ दो श्यामू!

ऐसे ही समय माँ निकल आयीं। वे भी बोलीं, श्यामू! देवू!

सीताराम ने देखा, माँ के गले की आवाज से करिश्मा हो गया, श्यामू हट आया लेकिन देवू उठा नहीं, निश्चल-सा जमीन पर पड़ा रहा।

सीताराम ने सस्नेह उसे उठाना चाहा, लेकिन वह किसी कदर उठेगा नहीं। कोई अवलम्बन न मिलने से वह आँगन को ही नाखून से खरोचकर पकड़ना चाहता था। सीताराम ने हँसकर उसे गोद में उठा लिया। वह क्षण-भर में फफककर रो पड़ा और दोनों हाथों से पागल की तरह मास्टर के मुह पर घूंसा-चाँटा मारने लगा। सीताराम परेशान-सा हो उसे दोनों हाथों से झुलाये जरा दूर टांगे रहा। वह अब दोनों पैर फेंकने लगा। अपनी पराजय की लज्जा से वह बेहद अपमानित और क्षुब्ध हो उठा है।

माँ ने फिर एक बार कहा, देवू!

देवू के पैर निश्चल हो गए, दोनों हाथ शिथिल पड़ गये, सिर झुक गया, लकवा मारे मरीज की तरह।

माँ बोली, सीताराम, उसे उतार दो यहाँ—उतार दो।

सीताराम उस आदेश का उल्लंघन करने का साहस नहीं कर सका—उस कंठस्वर के आदेश का।

माँ ने कहा, देवू, तुम्हारे इस कसूर के लिए तुम स्टेशन नहीं जा सकोगे, मास्टर जी की दुल्हन देखने के लिए। श्यामू ! तुम कमीज पहन लो।

सीताराम चुप खड़ा रहा। बड़े लोगों के घरों का शासन भी अजीब है। उसे लगा, इस मामले में वह मानो बहुत छोटा हो गया है। उसे लगा, ऐसी शासन-पद्धति जिन लोगों की है, उनको पढ़ाने की योग्यता उसमें नहीं है। उसकी बड़ी इच्छा थी कि श्यामू का हाथ थामे और देवू को गोद में लेकर वह स्टेशन जाएगा। मनोरमा को दिखाएगा। दिखाएगा, उसके दो छात्र कैसे हैं। लेकिन इस घटना के बाद यह बात उठाने की हिम्मत नहीं पड़ रही है उसे।

माँ ने कहा, वहू को यहाँ नाश्ता-पानी करा ले जाने में क्या कोई असुविधा होगी बेटा ?

सीताराम बोला, और एक दिन आ जाएगी। आज—। रूठ करके ही उसने यह कहा। वर्ना इच्छा थी उसकी। पाठशाला भी दिखाने की इच्छा होती है; लेकिन कुछ खिन्न मन से श्यामू को लेकर वह स्टेशन गया।

मनोरमा ट्रेन से उतरी। ट्रेन के अन्दर ही घूंघट के भीतर से उसकी आँखों की काली पुतलियाँ सीताराम को दिखाई पड़ीं, उसी को देख रही थी वह। होंठों पर मुस्कान खिल आयी है। सीताराम लजा गया, वह बहुत ही व्यस्त होकर घुस्ती से सामान उतारने में लग गया।

बाबा बोले, तू इतना परेशान मत हो, कहीं चोटाय जाएगा। किसान को उतारने दे न।

वह खेत-मजूर आया, वही सब सामान ले जाएगा, उसकी बीबी भी आई है और उनका बारह-चौदह साल का बेटा भी। उन्हीं की तो मालकिन है। फिर पहली बार दुल्हन आ रही है तो सामान एक आदमी के लदान से भारी होगा, यह वे जानते हैं। श्वसुर ने काफी सामान दिया है।

सीताराम बोला, बाबुओं का मँझला बेटा, मेरा बड़ा छात्र देखने आया है।

बाबा बोले, कहां है ?

घूंघट के भीतर से मनोरमा की उत्सुक सवालिया आँखें सीताराम के मुख पर टिक गयीं। सीताराम ने हँसकर पीछे पलटकर देखा, श्यामू के बगल में कन्हाई राय देवू को भी गोद में लेकर जाने कब आकर खड़ा हो गया है। देवू शरारत से मुस्करा रहा है।

कन्हाई ने हँसकर कहा, माँ ने भेज दिया। वहू को नाश्ता-पानी करा ले जाने के लिए कहा है।

सीताराम ने देवू को गोद में लेकर कहा, तुम चलो रायकाका, मैं जरा आ रहा हूँ।

बाबा किसान के सिर पर सामान-वस्त लादने में व्यस्त हैं। सीताराम ने धीमी आवाज में देवू से कहा, यह लो देखो मास्टर की दुल्हन—तुम लोगों की मास्टरनी। जाओ गोद में जाओ। साथ ही साथ मनोरमा ने हाथ बढ़ाया।

दाँतों से होंठ दबाकर हँसी रोकते हुए देवू मास्टर से चिपक गया।

सीताराम ने हँसकर मनोरमा से कहा, बड़ा ही लजीला, और जिद्दी है। आज मुझे पीटा है। तुम श्यामू को गोद में ले लो।

मनोरमा ने श्यामू को गोद में उठा लिया। सीताराम बोला, आओ, रानी माँ ने कहा है, उनके घर में नाश्ता-पानी कर घर जा सकोगी। मेरे छात्र तो हैं ही—जमींदार की कोठी भी है—भेंट भी हो जाएगी।

●●

माँ बोली, अच्छी दुल्हन है। बेहतरीन लड़की है। दो रुपये देकर आशीर्वाद किया। बोली, खुद सुखी होओ, पति को सुखी बनाओ। सीताराम से बोली, तुम आज बहू को लेकर घर जाओ। श्यामू-देवू को आज छुट्टी दो, उनकी गुरु माँ आयी हैं।

बातें सुनकर सीताराम मुग्ध हो गया। ऐसी कुशलता से बातें करते किसी को उसने सुना नहीं था। श्यामू-देवू की छुट्टी उससे मंजूर करवाकर उसको छुट्टी दे रहे हैं। उसने कहा, नहीं। मैं पढ़ाकर खाना खाने के बाद जैसा जाया करता हूं वैसा ही जाऊँगा। नहीं, वह कर्तव्य की अवहेलना और नहीं करेगा।

शाम के बाद लड़कों को पढ़ाकर खाना खाकर जाते वक्त उसने सब के अनदेखे कुछ मालती फूल चुन लिये। दिन को चुन नहीं सका था मारे शर्म के। छुट्टी लेने में उसे एतराज नहीं था, लेकिन ये फूल चुनना रह गया होता।

मनोरमा खुश हुई। बोली, पंडित जो हो।

सीताराम हँसा। फिर बोला, घर-द्वार पसन्द आया?

मनोरमा बोली, मुझे तो लाज लग रही थी।

क्यों?

बाबा ने घर में घुसते ही कहा—वाह, यह कमरा तो सीताराम बड़ा बढ़िया बना रखा है! वाह, वाह, वाह! फिर बोले—बहू, सीता के साथ मेरा कमरा भी ऐसा ही बना देना बेटी। सुनकर मनोरमा को बड़ी लाज लगी।

सीताराम भी लजा गया। छी छी छी! केवल छी छी ही नहीं, बेजा काम हो गया है उससे। बाबा का कमरा उसे पहले सजाना चाहिए था। छी!

मनोरमा बोली, तभी से देख रही हूं और सोच रही हूं, हो तुम पंडित आदमी जी।

सीताराम ने उसे प्यार से सीने में खींच लिया।

कन्धे पर मुंह रखकर मनोरमा बोली, जब खबर पहुँची, तुम पास नहीं कर सके तो मुझे रोना आ गया था। छिपछिपकर रोयी थी मैं। लेकिन, अब मुझे कोई अफसोस नहीं। बाबुओं की कोठी में तुम्हारी खातिरदारी देखी, छात्र देखा, यही मेरे लिए काफी है।

आवेश से सीताराम का दिल भर आया। उसे लगा, उससे सुखी व्यक्ति और कोई नहीं।

छह

सुखी सीताराम। सुख-भरे जीवन में बरसात के कारण सतेज दरख्त की तरह वह बढ़ने लगा। स्वस्थ देह लिए सबल पदक्षेप से वह पथ पर चलता, उत्साह-दीप्त आंखों से छात्रों के मुख की ओर देख वह निष्ठा से पढ़ाता है। उनको अपने मनमाफिक गढ़ने के लिए वह भरसक प्रयत्न करता। दुलारता, डांटता, मारता भी। मनोरमा को सुखी करने की कोशिश करता, मनोरमा ने उसे सुखी बनाया है। बाबा की सेवा करता। लेकिन वहीं मानों अचानक एक कांटा-सा उभर आया है, दिनों-रात करक रहा है—निष्ठुर रूप से दुखदायी है उसका स्पर्श। समझ में नहीं आता—यह कांटा किस तरह कहां से उग आया।

न समझने पर भी सीताराम ने धीर भाव से इस दुःख को ग्रहण किया।

सुख और दुःख इन्हीं को लेकर जीवन है। प्रकाश और अन्धकार, दिन और रात—यही लेकर काल है। धरती की मिट्टी, जिस मिट्टी में फसल उगती है, जिस मिट्टी पर लेटने से लगता, मां की गोद में लेटा हूं, उसी मिट्टी में पत्थर है, यह पत्थर बदन को कोंचता है, नाखून को चोट पहुंचाता है, उस पर गिर कर आदमी मर भी जाता है। जल, जो जल अंग को शीतल करता, दिल को ठंडक पहुंचाता है वही जल कभी-कभी बाढ़ बनकर सबकुछ बहा ले जाता है—यह सबकुछ सीताराम जानता है। इसलिए छोटे-मोटे बाधा-विघ्न और दुःख के बावजूद वह अपने जीवन को सुख के जीवन के रूप में ही जानता है।

इस दुःख के बीच अचानक एक दिन पिता रमानाथ चल बसे। यह आघात उसके लिए भयंकर आघात था, मर्मान्तक हो उठा। चार साल की उम्र में वह मातृहीन हुआ था, उसी समय से ही बाबा उसके पिता-माता दोनों बन गये थे। मरते समय बाबा ने उससे कहा, रोना मत। मैं तो सुख का जाना जा रहा हूं रे। तूने मेरे वंश का मान बढ़ाया है, दस लोग तुझे पंडित कहकर खातिर कर रहे हैं, घर में लक्ष्मी के समान मेरी बहू है, मेरे जाने में खेद किस बात का? जरा-सी विषाद-भरी मुस्कान के साथ कहा था, एक ही खेद रह गया, तेरे बेटे को देखकर नहीं जा सका। खैर—मैं ही तेरा बेटा बनकर फिर आ जाऊंगा।

सीताराम पत्थर का बुत बना बैठा था। वह यदि चंचल हो जाये, उसकी आंखों में यदि आंसू देख लें तो शायद बाबा महायात्रा के समय चंचल होंगे। एक कहानी उसे बार-बार याद आ रही थी। वह शान्तिनिकेतन गया था। उस समय शान्तिनिकेतन में सर्वत्र एक विषाद-भरी छाया छायी हुई थी। इससे पूर्व जैसा देखा था गोया वैसा नहीं। पता लगा था, कविवर रवीन्द्र नाथ के बड़े भाई ऋषितुल्य द्विजेन्द्र नाथ के बेटे दीपेन्द्रनाथ का हाल में देहान्त हो गया था। वह खुद भी दुखी हुआ था। हाय, बुढ़ापे में यह कैसा शोक मिला उनको! इतना बड़ा आघात क्या कोई और हो सकता है? भगवान से कहा था, यह कैसा न्याय है तुम्हारा? लौटते वक्त द्विजेन्द्रनाथ के बंगले के बगल से ही वह लौटा था। एक

बार उनको देखने की इच्छा थी। द्विजेन्द्रनाथ के बंगले के सामने खुले बरामदे पर धोलपुर के वकील आकर बैठे हुए थे, हमदर्दी जताने आए थे। द्विजेन्द्रनाथ प्रशान्त चेहरा लिये उनसे बातें कर रहे थे, कुछ बातें उसके मन में अक्षय बनी हुई हैं। देह का लय है मृत्यु, यह तो अवश्यम्भावी है। उसके लिए शोक—! बात को पूरी न करके ही वे मुस्कराये थे। अनोखी मुस्कान थी वह। ऐसी मुस्कान सीताराम ने जीवन में और किसी के चेहरे पर नहीं देखी। इसके बाद वे दूसरी बातें करने लग गये। वकीलों में हर व्यक्ति का कुशल पूछने लगे।

वे अवश्य ही महापुरुष हैं, ऋषितुल्य मनुष्य, और वह है सामान्य जन। उनके साथ किसकी तुलना हो सकती है? लेकिन महाजनों का अनुसरण ही तो मनुष्य को करना चाहिए। वह रोया नहीं।

लोगों ने लेकिन दूसरी बातें कीं, उसकी जघन्य निन्दा की। बोले, कहावत है न—बाप मरा बला टली, सीताराम को वैसा ही हुआ है। बूढ़ा हर वक्त खिझाता रहता था, बूढ़ा मर गया, उसको भी मुक्ति मिली।

इन दिनों बाबा का रस कुछ ऐसा ही हो गया था। सुख के लिए जो गृहस्थी थी मानो उनके असुख का कारण बन गयी। सदा ही असन्तोष सताता रहता। कुछ भी पसन्द नहीं आता था। मनोरमा पर ही उनकी विरूपता सबसे अधिक थी, कोई भी सेवा करने जाती तो कहते, रहने दो बचवा, रहने दो। 'बचवा' कहते थे, 'बेटी' नहीं।

मनोरमा अपराधिन-सी स्तब्ध खड़ी रह जाती थी।

बाबा इस पर भी गुस्साने लगते थे, गुस्सा मानो बढ़ जाया करता था, कहते थे, जाओ न बचवा, कुछ कामकाज हो, करो जाकर। जाओ, देखो सीता क्या मांग रहा है।

आखिरी बात में व्यंग प्रच्छन्न रहता, राख की पतली तह से ढके अंगारे की नाईं। उत्ताप की ज्वाला फौरन महसूस हो जाती थी।

एक दिन बाबा ने खाने की थाली उठाकर फेंक दी थी। उनको अरुचि हो गयी थी। सीताराम ने ही कहा था, रात को जरा हलवा बना दिया करना, स्वाद भी आयगा, घी-दूध भी पेट में जाएगा। किसान के घर में लइया ही नाश्ता है, गुड़ ही मिठाई है, सूजी-चीनी का इन्तजाम नहीं था। घी हमेशा से ही है, दूध की साढ़ी जमाकर घी निकाला जाता, हालांकि बिक्री के लिए ही निकाला जाता। सूजी-चीनी सीताराम ने रतहाटा से ला दी थी। मनोरमा ने रात में हलवा की थाली उनके सामने रखी ही थी कि हाथ से कुरेद कर नाक से सूंघ कर, बत्ती को तेज कर देखने के बाद पूछा था, यह भला क्या है?

'आपके लिए जरा हलवा बनाया है।

हलवा? मोहन भोग?

जी! आप कुछ भी खा नहीं पा रहे हैं। खीर-दूध भी भला कितना खा सकते हैं? इसलिए—

छह

सुखी सीताराम। सुख-भरे जीवन में बरसात के कारण सतेज़ दरख्त की तरह वह बढ़ने लगा। स्वस्थ देह लिए सबल पदक्षेप से वह पथ पर चलता, उत्साह-दीप्त आँखों से छात्रों के मुख की ओर देख वह निष्ठा से पढ़ाता है। उनको अपने मनमाफ़िक गढ़ने के लिए वह भरसक प्रयत्न करता। दुलारता, डांटता, मारता भी। मनोरमा को सुखी करने की कोशिश करता, मनोरमा ने उसे सुखी बनाया है। बाबा की सेवा करता। लेकिन वहीं मानों अचानक एक कांटा-सा उभर आया है, दिनों-रात करक रहा है—निष्ठुर रूप से दुखदायी है उसका स्पर्श। समझ में नहीं आता—यह कांटा किस तरह कहाँ से उग आया।

न समझने पर भी सीताराम ने धीर भाव से इस दुःख को ग्रहण किया।

सुख और दुःख इन्हीं को लेकर जीवन है। प्रकाश और अन्धकार, दिन और रात—यही लेकर काल है। धरती की मिट्टी, जिस मिट्टी में फसल उगती है, जिस मिट्टी पर लेटने से लगता, माँ की गोद में लेटा हूँ, उसी मिट्टी में पत्थर है, वह पत्थर बदन को कोंचता है, नाखून को चोट पहुँचाता है, उस पर गिर कर आदमी मर भी जाता है। जल, जो जल अंग को शीतल करता, दिल को ठंडक पहुंचाता है वही जल कभी-कभी बाढ़ बनकर सबकुछ बहा ले जाता है—यह सबकुछ सीताराम जानता है। इसलिए छोटे-मोटे बाधा-विघ्न और दुःख के बावजूद वह अपने जीवन को सुख के जीवन के रूप में ही जानता है।

इस दुःख के बीच अचानक एक दिन पिता रमानाथ चल बसे। यह आघात उसके लिए भयंकर आघात था, मर्मान्तिक हो उठा। चार साल की उम्र में वह मातृहीन हुआ था, उसी समय से ही बाबा उसके पिता-माता दोनों बन गये थे। मरते समय बाबा ने उससे कहा, रोना मत। मैं तो सुख का जाना जा रहा हूं रे। तूने मेरे वंश का मान बढ़ाया है, दस लोग तुझे पंडित कहकर खातिर कर रहे हैं, घर में लक्ष्मी के समान मेरी बहू है, मेरे जाने में खेद किस बात का? जरा-सी विषाद-भरी मुस्कान के साथ कहा था, एक ही खेद रह गया, तेरे बेटे को देखकर नहीं जा सका। खैर—मैं ही तेरा बेटा बनकर फिर आ जाऊंगा।

सीताराम पत्थर का बुत बना बैठा था। वह यदि चंचल हो जाये, उसकी आँखों में यदि आंसू देख लें तो शायद बाबा महायात्रा के समय चंचल होंगे। एक कहानी उसे बार-बार याद आ रही थी। वह शान्तिनिकेतन गया था। उस समय शान्तिनिकेतन में सर्वत्र एक विषाद-भरी छाया छायी हुई थी। इससे पूर्व जैसा देखा था गोया वैसा नहीं। पता लगा था, कविवर रवीन्द्र नाथ के बड़े भाई ऋषितुल्य द्विजेन्द्र नाथ के बेटे दीपेन्द्रनाथ का हाल में देहान्त हो गया था। वह खुद भी दुखी हुआ था। हाय, बुढ़ापे में यह कैसा शोक मिला उनको! इतना बड़ा आघात क्या कोई और हो सकता है? भगवान से कहा था, यह कैसा न्याय है तुम्हारा? लौटते वक्त द्विजेन्द्रनाथ के बंगले के बगल से ही वह लौटा था। एक

बार उनको देखने की इच्छा थी। द्विजेन्द्रनाथ के बंगले के सामने खुले बरामदे पर बोलपुर के वकील आकर बैठे हुए थे, हमदर्दी जताने आए थे। द्विजेन्द्रनाथ प्रशान्त चेहरा लिये उनसे बातें कर रहे थे, कुछ बातें उसके मन में अक्षय बनी हुई हैं। देह का लय है मृत्यु, यह तो अवश्यम्भावी है। उसके लिए शोक—! बात को पूरी न करके ही वे मुस्कराये थे। अनोखी मुस्कान थी वह। ऐसी मुस्कान सीताराम ने जीवन में और किसी के चेहरे पर नहीं देखी। इसके बाद वे दूसरी बातें करने लग गये। वकीलों में हर व्यक्ति का कुशल पूछने लगे।

वे अवश्य ही महापुरुष हैं, ऋषितुल्य मनुष्य, और वह है सामान्य जन। उनके साथ किसकी तुलना हो सकती है? लेकिन महाजनों का अनुसरण ही तो मनुष्य को करना चाहिए। वह रोया नहीं।

लोगों ने लेकिन दूसरी बातें कीं, उसकी जघन्य निन्दा की। बोले, कहावत है न—बाप मरा बला टली, सीताराम को वैसा ही हुआ है। बूढ़ा हर वक्त चिढ़ाता रहता था, बूढ़ा मर गया, उसको भी मुक्ति मिली।

इन दिनों बाबा का रुख कुछ ऐसा ही हो गया था। सुख के लिए जो गृहस्थी थी मानो उनके असुख का कारण बन गयी। सदा ही असंतोष सताता रहता। कुछ भी पसन्द नहीं आता था। मनोरमा पर ही उनकी विरूपता सबसे अधिक थी, कोई भी सेवा करने जाती तो कहते, रहने दो बचवा, रहने दो। 'बचवा' कहते थे, 'बेटी' नहीं।

मनोरमा अपराधिन-सी स्तब्ध खड़ी रह जाती थी।

बाबा इस पर भी गुस्साने लगते थे, गुस्सा मानो बढ़ जाया करता था, कहते थे, जाओ न बचवा, कुछ कामकाज हो, करो जाकर। जाओ, देखो सीता क्या मांग रहा है।

आखिरी बात में व्यंग प्रच्छन्न रहता, राख की पतली तह से ढके अंगारे की नाईं। उत्ताप की ज्वाला फौरन महसूस हो जाती थी।

एक दिन बाबा ने खाने की थाली उठाकर फेंक दी थी। उनको अरुचि हो गयी थी। सीताराम ने ही कहा था, रात को जरा हलवा बना दिया करना, स्वाद भी आयगा, घी-दूध भी पेट में जाएगा। किसान के घर में लइया ही नाश्ता है, गुड़ ही मिठाई है, सूजी-चीनी का इन्तजाम नहीं था। घी हमेशा से ही है, दूध की साढ़ी जमाकर घी निकाला जाता, हालांकि बिक्री के लिए ही निकाला जाता। सूजी-चीनी सीताराम ने रत्नहाटा से ला दी थी। मनोरमा ने रात में हलवा की थाली उनके सामने रखी ही थी कि हाथ से कुरेद कर नाक से सूंघ कर, बत्ती को तेज कर देखने के बाद पूछा था, यह भला क्या है?

'आपके लिए जरा हलवा बनाया है।

हलवा? मोहन भोग?

जी! आप कुछ भी खा नहीं पा रहे हैं। खील-दूध भी भला .
सकते हैं? इसलिए—

इसलिए हलवा बना है ?

इस बार डर गई थी मनोरमा। जवाब न दे सकी।

चीनी क्या हमारे खेत में पैदा होती है ? या रवा ही हमारे खेत में होता है ? इसके बाद आकस्मिक विस्फोट-सा ही वे फट पड़े थे, मैं किसान का बेटा किसान हूं। नमक छोड़ कर खेत की उपज के अलावा और कुछ मैं तो मैं—मेरे चौदह पुश्तों में किसी ने खाया नहीं। मैं खाऊंगा हलवा ?—कहकर थाली फेंक वे उठ गये थे। उस वक्त भी उनका अफसोस जारी था—लक्ष्मी को भगाया, तुम्हीं ने मेरी लक्ष्मी को खदेड़ा है।

मुहल्ले-भर में वे यह बात कहते भी फिरते रहे। अलक्ष्मी बहू ने मेरी लक्ष्मी को भगा दिया।

सीताराम को भी वे बड़े रूखे ढंग से बेवजह ही बीच-बीच में डांटते-फटकारते थे। रविवार का दिन। वह अब दिन में भी घर में खाना खाता है, सुबह बाबुओं की कोठी में जाकर लड़कों को पढ़ाकर साढ़े दस बजे घर लौटता है, दिनभर घर ही पर रहता, शाम को फिर जाता, रात को रोजाना की तरह लौट आता। इसी रविवार को बाबा खेत से थके-माँदे लौटे थे, सीताराम पंखा झलने गया था। हाथ से पंखा छीनकर उन्होंने कहा था, रहने दो बेटा, रहने दो, मैं किसान का बेटा किसान हूं, धूप-पानी में खेतों में खट कर ही जिन्दगी बीत गई, बीत जाएगी भी। हम लोग कुर्सी पर बैठे पंडिताई नहीं करते। पंखे की हवा खाने के हम आदी नहीं।

सीताराम स्तम्भित रह गया था।

बाबा फिर भी रुके नहीं थे, बड़े ही मीठे स्वर में बोले थे, रविवार छुट्टी का दिन है, आज थोड़ा ऐश-मौज करो जाकर।

इसलिए सीताराम जरा दूर-दूर ही रहा करता था। मनोरमा के लिए यह उपाय नहीं था, इसलिए वह मनोरमा को कभी-कभी दिलासा देने की कोशिश करता था। लेकिन मनोरमा भी बड़ी अद्भुत लड़की थी, वह हँस कर कहती थी, तुम्हारे ही बाबा हैं वे, मेरा कुछ भी नहीं ?

फिर भी लोगों ने ऐसी बातें कीं। कहने दो, उसके लिए सीताराम को कोई अफसोस नहीं। वह केवल बीच-बीच में सोच कर देखने लगता है, पिता की सेवा में उसने कोई त्रुटि की है या नहीं।

कभी-कभी गहरी चिन्ता में तल्लीन होकर वह इसका हिसाब लगाता रहता है।

पाठशाला के लड़के भी उसकी अन्यमनस्कता और उदासीनता पर गौर करते हैं; एकदूसरे को इशारे से दिखाता है। बड़े लड़के कानाफूसियों में गवेषणा करते रहते हैं।

पण्डित जाने कैसा हो गया है !

हां भाई।

बाप मर गया है जो।

हाँ।

जान बची। अब और मारता नहीं। आकू नाम का लड़का खू खू कर हँसने लगता। छोटे लड़के गवेषणा नहीं करते, वे आश्चर्य करने लगते। मास्टर अब और मारता क्यों नहीं भाई ?

बाबा की मृत्यु के बहाने सीताराम को एक अनोखा अनुभव प्राप्त हुआ है जिस कारण उसने तय किया है कि लड़कों को वह मारेगा नहीं, कम-से-कम बहुत संगीन अपराध न करने पर मारेगा नहीं। वह भी एक अनोखा अनुभव है।

बाबा की बीमारी का पहला चरण था उस वक्त। उसी दिन सवेरे बीमारी की गम्भीरता महसूस कर उसने डाक्टर बुलावा था। डाक्टर को दिखला कर वह उसके साथ ही रत्नहाटा आ गया, उस वक्त केवल साढ़े दस बजे थे। लड़के पाठशाला में आकर शोरगुल मचा रहे थे, वह पाठशाला में जाकर उन लोगों से बोला, तुम लोग खुद बैठे-बैठे पढ़ो। मैं एक बार डाक्टर साहब के दवाखाना जा रहा हूँ, दवा लेकर जल्दी ही आऊँगा मैं, समझे ?

डाक्टर से दवा लेकर खेत-मजूर के हाथ भिजवा देने को सोचा था उसने। लेकिन डाक्टर ने कहा, आप खुद ले जाइए। यह बतलाने में गड़बड़ा देगा। पहले परगेटिव, फिर एक पौडर, उसके बाद मिक्शचर दो निशान, एक के बाद एक, तिपहर को फिर एक पौडर, यह यह समझेगा भी नहीं और न समझा ही सकेगा।

सीताराम बोला, जी हाँ, यह तो ठीक ही कह रहे हैं। वह फिर घर लौट आया। लौटते वक्त पाठशाला में बता गया, पढ़ो तुम लोग, मैं आ रहा हूं। मेरे बाबा बीमार हैं, दवा देकर जल्दी ही लौट रहा हूं।

एक बार मन हुआ कि छुट्टी दे दें। लेकिन हौसला न पड़ा। रत्नहाटा बड़ी वाहियात जगह है। यहां दस दिन की सेवा के बाद एक दिन के चूक के लिए माफी नहीं। उधर बड़े स्कूल की पाठशाला की सजग दृष्टि उसी की त्रुटि की ओर है। इसलिए दवा देकर लौट आने का ही निश्चय किया उसने। घड़ी की ओर देखा, सवा ग्यारह बजे थे। दो मील का रास्ता, आने-जाने में चार मील। एक बजे के अन्दर ही वह लौट सकेगा। टिफिन के बाद से पढ़ाई होगी। लेकिन घर जाकर देर हो गयी। खाया नहीं था, मनोरमा ने बिना खिलाये छोड़ा नहीं। पाठशाला लौटने में दो बज गए। पाठशाला के बाहर दरवाजे के पास आकर वह ठिठक गया। सोच रहा था, पैर धोकर ही अन्दर जाना चाहिए। भीतर लड़के कलरव कर रहे थे, अचानक भीतर से उसे सुनाई पड़ा—कोई कह रहा है :

चल रे चल, आज और आएगा नहीं। वक्ता था आकू। आकू बाबुओं के टोले का एक विचित्र जन्तु है, मूर्तिमन्त विघ्नराज। सीताराम उसे 'आकू' कहकर नहीं बुलाता, 'अक्रूर' कहता था। अक्रूर की बात सुनकर सीताराम को

हँसी आई; वे निकल आएँगे इस प्रत्याशा में वह दरवाजे के बाहर ही खड़ा हुआ, आकर ही ठिठक जाएँगे वे लोग। सुनाई पड़ा, ज्योतिष का भतीजा सीतेश बोल रहा है, नहीं भाई, अगर आ ही जाए।

कभी नहीं। मैं कह रहा हूं। मुझे ठीक-ठीक मालूम हो जाया करता है। मास्टर घर गया है और उसका बाप भी मर गया है। बस। अब एक महीने तक नहीं आएगा। एक महीने तक सूतक है। बड़ा मजा आएगा, एक महीना अब चोटे-मुक्कों से छुट्टी!

सीताराम एड़ी से चोटी तक झन्ना उठा। गुस्से से भीतर गरज उठा।

एक ने कहा, उसके बाद तो आएगा, तब सूद-असल मिलाकर बकाया पूरा करेगा, लागू धमाधम्। लागू धमाधम्! बाप रे! वह लड़का मानों सिहर उठा।

आकू बोला, ठहर, मैं जरा ध्यान लगाकर देख लूँ। हाँ। सुन, ठीक उसी वक्त मास्टर की बीबी मर जायगी। बस, फिर एक महीना। उसके बाद सूतक जैसे ही खत्म होगा बस मास्टर खुद मर जाएगा। बस।

सीतेश बोला, ना भाई! हाय, पंडित ने कौन-सा कसूर किया है जो उसे मरने को कह रहे हो?

बहुत मारता है भाई। बाप रे! मुझ ही को ज्यादा मारता है। कभी-कभी तो लगता, इस बार मैं मर ही जाऊँगा।

सीताराम भीतर आया। पैर धोना वह भूल गया। चुपचाप अपनी कुर्सी पर जाकर बैठ गया। बहुत देर तक खामोश सोचता रहा। अचानक उसकी आँखों में आँसू आ गए। छोटे-नन्हे शरीर में बहुत लगता है, बड़ी तकलीफ होती है उनको, उनको लगता है, मर जाएँगे। नहीं, उन लोगों का कोई दोष नहीं। दोष उसी का है। नहीं, अब वह उनको नहीं मारेगा।

••

बाबा की मृत्यु के दो महीने के बाद उन बातों को वही सोच रहा था। आज भी लम्बी साँस लेकर वह सोच रहा था, इन्हीं के दीर्घनिश्वास के उत्ताप से शायद उसने अपने बाबा को खो दिया है। आज भी वह बाबा के बारे में सोच रहा था।

बाबा नहीं रहे। संसार भांय-भांय कर रहा है। अशान्ति थी, इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता, लेकिन बाबा का कितना रोब-दाब था। बातों का डंक अगर छोड़ दो तो लाड़ले बच्चे और बाबा में कोई फर्क नहीं था। दूसरी ओर भी एक असुविधा आ पड़ी है—खेतीबारी की जिम्मेदारी उस पर आ पड़ी है। हालांकि मनोरमा बड़ी विचक्षण औरत है, खेतीबारी के सारे कामों से वाकिफ है। किसमें क्या लगता है, कितना लगता है—सब जानती है। लेकिन खेत का हालचाल दुल्हन होकर वह देखने नहीं जा सकती। सीताराम को ही अब जरा ज्यादा तड़के उठना पड़ता है। घर से निकलकर खेतों में चक्कर लगाते वह रत्नहाटा चला जाता है। भरपूर खेती के समय वह झरने के किनारे नहीं

बैठता, घर आता, खेत देखता है। इसके बावजूद खेती में कुछ गिराव आ गया है। उसका फिर चारा क्या ? यह बाबा कहा करते थे।

कभी-कभी बाबुओं की कोठी वाली नौकरी छोड़ देने की सोचता। लेकिन श्यामू-देबू से बड़ी ममता हो गयी है। इसके अलावा माँ का स्नेह, धीराबाबू का स्नेह, वह भी उसके जीवन की बहुत बड़ी सम्पदा है। धीराबाबू अब कलकत्ते में पढ़ रहे हैं, अपने पढ़ने के कमरे की किताबों का जिम्मा वे उस पर छोड़ गए हैं। सीताराम जब उस कमरे में प्रवेश करता है, उसे लगता है कि एक नया राज्य है। किताबें पढ़ता। किताबें घर ले जाता। किताब ले जाने की मनाही है धीराबाबू की। कहा है, कमरे में बैठकर पढ़ेंगे, लेकिन बाहर नहीं जाएँगे। हालांकि आप पर मैं अविश्वास नहीं करता, लेकिन यह मैं पसन्द नहीं करता। सीताराम कपड़े में छिपाकर किताब ले जाता है, फिर लौटा लाता, रख देता। आज अचानक याद पड़ गया, सारी किताबें लौटाई नहीं गयीं।

ए, ए, क्या हो रहा है ?

पाठशाला के लड़के हिसाब लगा रहे थे, चौंक पड़े। अच्छे लड़के स्लेट लेकर और भी सावधान होकर बैठे। कोई देख रहा है, नकल कर रहा है। जो देख रहे थे वे अपने स्लेट की ओर मनोयोगी बन गए। एकाध ऊँघ रहे थे, वे जाग कर हिल-डुल कर बैठ गए। लेकिन सीताराम शर्मा गया,—छी-छी ! अनमने हो उसने एक धमकी दे डाली है। मामले को सहज बनाने के लिए उसने सजीदेपन से कहा, हिसाब लगाओ। हो गया सबका ? खत्म करो। चुप हो गया वह। पुरानी बात फिर याद आ गई। बड़ा बेजा काम हो गया है, कई किताबें लम्बे अरसे से उसके घर पर पड़ी हैं। ये किताबें उसे अच्छी लग गई थीं, इसलिए एकाध बार और पढ़ने के लिए रख छोड़ी थी।

अब फिर सजग होकर पढ़ाने लगा।

बाहर रास्ते पर कोई जोरदार आवाज में बोल पड़ा, क्यों रे अर्वाचीन, आँचल में लइया लिए क्यों खा रहा है, आँचल जूठ जो हो जाएगा।

सीताराम के चेहरे पर मुस्कान खेल गई। उसी को व्यंग्य करता हुआ कोई गया। वह पंडित है, शिक्षक है, इसलिए भरसक शुद्ध उच्चारण करने की कोशिश करता है, फिर भी अपने अनजाने ही बचपन में सीखे उनके देहाती खेतिहर समाज की एकाध बातें मुँह से निकल ही जाया करती हैं और उसमें भाषा का गुरु-लघु दोष आ ही जाता है। एक दिन एक लड़के को आँचल में लइया खाते देखकर, आँचल उच्छिष्ट हो रहा है इस विषय में उसे सचेतन करने में जूठा के बदले देहाती 'जूठ' शब्द ही सचमुच मुँह से निकला था। रत्नहाटा के उच्चनासा लोगों को जाने कैसे यह मालूम हो गया और इसको लेकर वे व्यंग करते हैं। शुरू में 'क्यों' के शहरिया लहजे पर जोर डालकर बाद में ग्राम्य शब्द 'जूठ' पर जोर डालकर व्यंग को प्रकट और प्रखर बना देते हैं वे, और इसकी जड़ में है शिवकिंकर।

उसके पाठशाला के छात्र ने ही यह वात पहले-पहल कहना शुरू कर दिया। यहाँ तक कि तनज़िया लहजा भी जोड़ा है उसने और वह लड़का है चिरंजीव आकू। उसी से सुनकर शिवकिंकर ने हाट-वाजार में इसे फैलाया है। आजकल उसकी पाठशाला में वावुओं के भी कुछ लड़के आ रहे हैं। ज्यादा फीस और फीस देने की समस्या से वड़े स्कूल की पाठशाला में उनका पढ़ना असम्भव हो उठा है। यहाँ लड़कों को पढ़ाना अभिभावकों के लिए वहुत सुविधाजनक लगा है। इसके अलावा ये लड़के भी वड़े ही नटखट स्वभाव के हैं इसलिए वड़े स्कूल की पाठशाला के मास्टरों ने फीस के लिए कड़े तकाज़े के वहाने कठोर अनुशासन दिखाकर उनको भगा दिया है। वहाँ के पंडितों ने वता भी दिया है, जाओ न वेटा, रत्नहाटा में रत्न वनाने का अखाड़ा सीताराम की पाठशाला है। यहाँ क्यों ? मजवूर होकर ही वे यहाँ आए हैं।

वड़े स्कूल की इस प्रकार की वातों और वरताव से सीताराम को अफसोस होता। वुरे छात्रों को देकर उसकी पाठशाला से अच्छे छात्रों को वे वहका ले जाते हैं। छह महीने कोशिश करने के वाद पाठशाला को सरकारी ग्रान्ट मिली है मासिक चार रुपए। लेकिन वह ग्रान्ट रखना एक मुसीवत वन गया है। आज तक उसके एक भी छात्र को वृत्ति नहीं मिली। पिछली वार केवटों के एक लड़के पर उसका वड़ा भरोसा था। वृत्ति भी उसे मिली है। किन्तु उसकी पाठशाला से उसके छात्र के रूप में नहीं, स्कूल वाली पाठशाला के मास्टर उसको वहका ले गए थे। वहीं से उसे वृत्ति मिली है।

लड़कों में एक ने सवाल लगाकर स्लेट लाकर सामने रखा। सवसे अच्छा लड़का है यह। इसी पर उसे अव भरोसा है। आगामी वर्ष इस लड़के को अवश्य ही वृत्ति मिलेगी। इसको वड़ा स्कूल वहका नहीं सकेगा। यह लड़का ज्योतिष साहा का भानजा है। सीताराम ने स्लेट उठा लिया।

वाह-वाह-वाह ! राइट। राइट। यह भी राइट। यह—यह क्या कर डाला रे ? किसने दिमाग खा लिया तेरा, अँय ? हाँ, क्यों फादर मणि मेरे, वावामणि, यह क्या कर डाला माणिक, अँय ? पाँच-सत्ते कितना होता वेटा, कितना होता ?

पैंतीस जी।

पैंतीस का कितना वनेगा ? पाँच या सिफर ?

पाँच। पाँच ही तो लिखा है मास्साव।

यह रहा पाँच, जोड़ते वक्त क्या कर डाला ? खुद ही तुमने सिफर मान लिया है वेटा। वताता हूं, वार-वार तुमको वताता हूं मानिकचांद कि पाँच की गिनती ठीक-ठीक लिखना शुरू करो। सो तो करोगे नहीं। अव उसका नतीजा देखो। घड़े-भर दूध में वूंद-भर गोमूत्र। सारा-का-सारा वरवाद ! लेकिन प्रोसेस राइट है। खैर। जाओ, टिफन लेने घर जाना चाहते हो तो चले जाओ। पाँच मिनट वाकी हैं।

और एक आकर खड़ा हो गया। वावुओं का वेटा आकू, जिसने उसकी

बातों का विकृत प्रचार किया वही नौनिहाल। सीताराम जानता है, उसका कोई भी सवाल सही नहीं होगा। फिर भी आशा है, स्लेट देकर ही वह टिफिन की छुट्टी पाँच मिनट बढ़वा लेगा। वक्र हँसी हँसते हुए बोला, क्यों, अक्रूर के सारे सवाल हो गए हैं ? बलिहारी-बलिहारी, लाओ देखें। निर्लज्ज लड़का स्लेट के पीछे मुँह छिपाए हँस रहा है। उसने हाथ बढ़ाकर स्लेट ले लिया।

अँय-अँय ! अरे देखें-देखें। शो मी योर टीथ। दाँत दिखाओ, देखें। स्लेट रखकर सीताराम उठा और दोनों हाथ से उसके होंठ फैलाकर दाँतों को प्रकट कर डाला।

देखो, देखो तुम लोग। इसने दाँत नहीं माँजा है, देख लो तुम लोग।

वह लड़का फिर भी हँसता रहा। अजीब बेहया लड़का है। होंठ छोड़ उसने उसके कान पकड़ लिए। फिर भी वह हँसता रहा। जाओ, जाओ, दाँत माँज कर आओ, जाओ।

वह लड़का मुख में कपड़ा डालकर बोला, आज अभी तक खाना नहीं खाया है सर, लगे हाथ दाँत माँजकर खाना खा आऊँगा।

बाबुओं के लड़कों की पढ़ाई का भाग्य जो कुछ भी हो, चाल बदस्तूर वही है। वे 'मास्साब' नहीं कहते, 'सर' कहते हैं। मारपीट करने से भी कोई फायदा नहीं; मार खाते-खाते उनकी पीठ पर घट्टे पड़ गए हैं। नित्यानन्द सा मार खाकर भी वे हँसते हैं। सीताराम उसे अक्रूर कहता है—फिर कहता है नियति-ने सिद्ध।

टन्न से एक बजा। टिफिन की छुट्टी हो गयी।

घड़ी में इसी बीच एक खराबी आ गयी है, बड़ी सूई बारह के घरपर पहुँचने के दो मिनट बाद टन्कोर बजने लगते हैं। लड़के स्लेट लाकर रख गए। टिफिन की छुट्टी में बैठे सीताराम स्लेट देखेगा। लड़कों में कुछ खाना खाने जाएँगे तो कुछ खेलेंगे। छोटे बच्चों ने कंचा खेलने के लिए आँगनभर में गड्ढे खोद डाले हैं। रोजाना प्रत्येक दल में एक झगड़ा होता है, एक दल टूटकर नया दल बनता, नया गुच्चू बनाता। बनाने दो, रास्ते की धूल फाँकने से यही बेहतर। उन्हीं के लिए तो यह आँगन है। आँगन क्यों सभी कुछ तो उन्हीं के लिए है।

फिर घंटा बजा, टिफिन खत्म हुआ। घंटा एक खरीदा है उसने। और भी बहुत-सी चीजें खरीदी हैं। दो मैप, एक ग्लोब, कलकत्ते से खरीदा हुआ एक बढ़िया ब्लैकबोर्ड; दो कुर्सियाँ। बाबुओं की कुर्सी और साहा की कुर्सी उसने लौटा दी है। घंटा बजते ही टिफिन के अन्त में लड़के आकर सब बैठ गए। लेकिन आकू ? कहाँ है वह ? 'दाँत माँजकर खाना खा आऊँ' कहकर गया और अभी तक लौट नहीं आया। टिफिन की छुट्टी खत्म हो चुकी है। आधा घंटा हो गया। इन सब लड़कों से जब सरोकार पड़ता तो न मारने का संकल्प करके उसकी रक्षा नहीं की जा सकती। उसे लगा, ऐसा संकल्प करना ठीक नहीं। मार बन्द कर देने से आकू और भी पाजी हो गया है। राजा विक्रमादित्य को

एक कथा है। एक वन्दर उनकी सभा में रोज सवेरे आ पहुँचता था, राजा को एक अशर्फी देकर पैरों के पास वैठ जाता था। राजा अपनी छड़ी से उसकी पीठ पर कई वार सटकारते थे। वन्दर चुपचाप वहाँ से चला जाता था। एक दिन मन्त्री ने सविनय प्रतिवाद किया, महाराज, यह कोई न्याय नहीं। वन्दर अशर्फी भेंट करता है और महाराज उसको मारते हैं।

राजा ने हँसकर कहा, भली ! कल से नहीं मारूँगा।

अगले दिन वन्दर आया, अशर्फी दी लेकिन राजा ने रोज की तरह उसको मारा नहीं। वन्दर कुछ देर प्रतीक्षा करने के वाद दाँत दिखाकर चला गया। अगले दिन भी उन्होंने प्रहार नहीं किया। उस दिन वन्दर ने राजा का कपड़ा पकड़कर खींचा। उससे अगले दिन प्रहार की प्रतीक्षा कर अचानक ही उछल कर सिंहासन के हत्थे पर वैठ गया। उसके वाद वाले दिन राजा की गर्दन पर जा वैठा। राजा ने उस दिन वन्दर को नीचे उतारकर हिसाव लगाकर सारे दिनों का वकाया सटकार उसकी पीठ पर अदा कर दिया। वन्दर फिर पहले की तरह चुपचाप चला गया। आज आकू को उसका पावना वकाया सारा चुका देना है। सीताराम ने हरिसाधन को वुलाया, साधन !

साधन लड़कों के वीच वयस्क लड़का है, पढ़ाई में कोई अच्छा नहीं, लेकिन फिर भी नेक लड़का है, निष्ठा है, कोई दुर्गुण वाली वुद्धि नहीं उसमें। साधन को देखते उसे अपनी वात याद आ जाती। खुद भी वह उसी ढंग का लड़का था। साधन आकर खड़ा हो गया। सीताराम वोला, तू एक वार आकू के घर चला जा। जाकर उसे वुलाना, कहना—मास्टर जी वुला रहे हैं। यदि घर पर न हो तो उसकी माँ या जिस किसी से भेंट हो जाय, वता देना—आकू टिफिन से पहले निकलकर अभी तक पाठशाला नहीं आया है। वह अक्सर ऐसा करता है। आज दो महीने से फीस नहीं दी है उसने। फीस कल भिजवा दीजिएगा वर्ना उसे पाठशाला और मत भेजिएगा। समझ गए न ?

जी।

अच्छा, क्या वताएगा, वताना तो जरा।

साधन तोता-जैसा वोलता गया। सीताराम खुश होकर वोला, ठीक। चला जा तू। साधन जाते-जाते पाठशाला के दरवाजे पर ही खड़ा हो गया। वोला, वह आ रहा है मास्सा।

आ रहा है ? ठीक है। नेपला, एक सन्टी तो काट ला।

नेपला सन्टी काटने में माहिर है। खुद मार खाने पर रोता नहीं; दूसरा कोई पीटा जाता तो उसे वड़ी खुशी होती, हँसता है। सन्टी काटने में उसे वेहद उत्साह है।

आज वहुत दिनों के वाद पिटन्नस होगी; उसने पूछ लिया, वाँस की कमाची या और किसी पेड़ की टहनी मास्सा ?

उससे पूर्व ही आकू चेहरा लटकाए उसकी मेज के पास आ खड़ा हो गया

और उदास स्वर में बोला, कलकत्ते में धीरानन्दबाबू को पुलिस ने बन्द कर लिया है सर, उनके घर चिट्ठी आई है। श्यामू-देबू खड़े हैं। रो रहे हैं।

धीरा बाबू को पुलिस ने गिरफ्तार किया है ?

नहीं सर। गिरफ्तार नहीं किया, बन्दी किया है—राजबन्दी !

सीताराम के सारे अंग में रोमांच हो उठा। राजबन्दी।

जी सर, महात्मा गाँधी के असहयोग आन्दोलन में योगदान जो किया है।

सन उन्नीस सौ इक्कीस। देश में असहयोग आन्दोलन चल रहा है। सीताराम के पास साप्ताहिक पत्रिका आती, उसके मारे-के-मारे पन्नों में यही सब खबरें होतीं—देशवरेण्य उन नेताओं के चित्र भी। धीरा बाबू के कमरे में उसे एक किताब मिली है—किताब का नाम है—'लाछिंतेर सम्मान।' सन उन्नीस सौ पाँच के आन्दोलन में जो लोग निर्वासित हुए थे, उन्हीं की कहानी और उन सब के चित्र भी हैं उसमें। 'लांछितेर सम्मान' बड़ा योग्य नाम है। लांछन सम्मान बन जाता है उन्हीं की साधना से, माथे के गुण से ही पंकतिलक चन्दनतिलक से भी अधिक सहनीय होता है। धीरा बाबू योग्य व्यक्ति है। अब धीराबाबू की तसवीर अखबार में छपेगी, इस किताब के दूसरे खण्ड में उनकी जीवन-कथा होगी, चित्र भी।

वयस्क-सा, विज्ञ-सा आकू बोला, धीरा बाबू की माँ, सर बैठी हैं, मुह में कोई बात नहीं, बस आँखों से टप्पटप्प आँसू टपक रहे हैं।

सीताराम उठकर खड़ा हो गया। बोला, छुट्टी, आज तुम लोगों की छुट्टी है।

खुद ही उसने टन्न-टन्न घंटा बजा दिया।

पाठशाला बन्द कर जमीन पर नजर गड़ाये वह तेज चाल बाबुओं की कोठी कीओर चल पड़ा। उसके दिल में उथल-पुथल मची हुई थी।

माँ की मूर्ति देखकर वह स्तब्ध रह गया। वह समझ न सका, यह उनका सुख का रोदन है या दुख का। उसके मन में भी मानो ऐसा ही द्वन्द्व चल रहा है।

अपराह्न में झरने के किनारे जाकर वह उदास-सा बैठा रहा। यहाँ छोटे-छोटे बन-फूलों की झाड़ियाँ हैं, उनमें तीतरों के घोसले है। तीतर सांझबेले बाहर निकल भागते फिरते, कलरव करते, कीड़े पकड़कर खाते, दीमकों के विमोट पर धावा बोलते। थोड़ी ही दूरी पर रतनहाटा के एक बाबू का एक बगीचा है, बगीचे के चारों ओर ताड़ के पेड़ों की पाँत। शाम को ताड़ के सिर पर सूरज का सुर्ख प्रकाश आ पड़ता है, फाख्ता घुघुआते हैं। इसी बीच वह बड़े मजे में रहता मानो ध्यानस्थ बना रहता। आज उन सबकी ओर उसकी निगाह नहीं पड़ी। एक बार के लिए भी नहीं। कुछ सोचता रहा हो, ऐसी बात भी नहीं केवल उसकी आँखों के सम्मुख निरन्तर धीरा बाबू के कितने ही चित्र तिरते रहे।

शाम को श्यामू-देवू को लेकर वह बैठा।

श्यामू विषाद में भी गम्भीर बना हुआ है। देवू उसकी गोद में मुँह छिपाकर फफक फफककर रोता रहा। उसके मुख पर जो हँसी दिगन्त के मेघ की गोद में विद्युत्-चमक जैसी क्षण-क्षण निःशब्द कौतुक में दीप्त हो उठती है, आज वह हँसी उसके चेहरे पर एक बार भी क्षीण आभास तक न दे सकी। वह मुख मानो आज वर्षामुखर श्रावण रात्रि के मेघ से ढक गया है।

वह उन लोगों को दिलासा देते हुए बोला, जानते हो, दादा ने कितना बड़ा काम किया है?

श्यामू ने सिर हिलाकर बताया, जानता हूँ।

देवू, जानते हो तुम?

देवू ने कोई जवाब नहीं दिया। वह रो रहा है।

रोओ मत। छी! सिर पर हाथ सहलाया उसने। फिर बोला, बड़े होकर तुम लोगों को भी दादा के साथ देश का काम जो करना है। जानते हो न—

महाज्ञानी महाजन जिस पथ पर कर संचरण
हो गए हैं प्रातः स्मरणीय
उसी पथ को लक्ष्य कर स्वीय कीर्तिध्वजा थाम
हम लोग भी होंगे वरणीय।

बाहर से नायब जी ने कहा, मास्टर, रहने दो। इन लोगों को इसकी सीख अभी से मत देने लगो।

कन्हाई राय ने हामी भरी, हां। कुछ देर चुप रहकर उसने कहा, इतने में ही धक्का सँभालना मुश्किल हो जायेगा। बाद में समझोगे।

उपपद तत्पुरुष नाम उसका झूठा नहीं पड़ा। मध्यपदलोपी को फिर भी सहन किया जा सकता है।

रात को मनोरमा ने सबकुछ सुना, वह भी उदास हो गयी। सीताराम के स्पर्श को अद्‌भुत ढंग से ग्रहण कर पाती है, धरती का धूपस्पर्श करने जैसा ही। उसका उदास भाव देख सीताराम ने कहा, बात दरअसल अफसोस करने वाली नहीं है मनु! हम लोग नान्ह लोग हैं, हम समझ नहीं पाते।

मनोरमा बोली, हाय कितने बड़े घर का लड़का है, कितना सुख का शरीर है, जेल की तकलीफ और मान-सम्मान—

सीताराम उसे समझाने बैठ गया, यह देशसेवा के कारण कारावरण है, यह है परम गौरव की बात। होने दो न सुख की देह, लेकिन मन की दृढ़ता से असंभव सम्भव हो जाता है, बन्दूक के सामने सीना तानकर खड़ा हुआ जा सकता है।

अचम्भे से आँखें फाड़-फाड़कर मनोरमा अपने पति के मुख की ओर देखने लगी।

सीताराम बोला, हम लोग भला क्या कुछ कर सकेंगे? क्षमता भी भला कितनी है? जितना भर हो सके उतना भर तो करना ही पड़ेगा। चरखा खरीद

लाऊंगा। पुराने जमाने वाला चरखा तो टूट ही गया है। चरखा कातूंगा। अपने धागे से हम लोगों का कपड़ा बनेगा। समझी ? और रामकपास का बीज लाऊंगा, चारों ओर लगा दूंगा।

अचानक ही मनोरमा बोली, तुम्हारा धीराबाबू कैसा है, एक बार भी देख न सकी।

सीताराम ने कहा, बिल्कुल श्यामू जैसा। उठकर शेल्फ के पास चला गया। 'लांछितेर सम्मान' नामक किताब ऊपर ही थी। उसी को अन्यमनस्क भाव से खोला। अचानक एक बात उसके मन में आ गई। मनोरमा के हाथ में देकर वह बोला, इस किताब के चित्रों को रोजाना देखना, प्रणाम करना।

इस बार मनोरमा माँ होगी। उसका घर भी अब बच्चे की किलकारी से आलोकित होगा। शिशु का हास्य स्वर्गीय वस्तु है। शिशु देवदूत होते हैं। कितनी ही किताबों में उसने पढ़ा है। और यह सत्य है, यह वह भलीभाँति समझता है। लेकिन ज्यों-ज्यों वह बड़ा होता जाता गड़बड़ी होने लगती। शैतान आकर उसकी गर्दन पर सवार हो जाता है। लड़कों को वह दो हिस्सों में बाँटता है। एक होता है—कुत्ते की जाति का, बचपन में बड़ा ही सुन्दर होगा, ज्यों-ज्यों बड़ा होगा खोरहा होता जाएगा। और एक है मोर की जाति का, जितना ही बड़ा होता जाएगा उतना ही विचित्र वर्ण के पंखों से सज्जित होता रहेगा, हर पंख पर आकाश का फन्दा आ फँसेगा। यह जाति बड़ी दुर्लभ होती है। धीरानन्द का ध्यान आया। श्यामू-देवू जाने कैसे होंगे। हाँ, बिल्कुल खराब नहीं होंगे। कहावत है, सामने का हल जिस ओर जाय पीछे का हल भी उसी ओर जाए। वे धीराबाबू जैसे न भी हों, उसके नजदीक तो पहुँचेंगे ही।

अपने बच्चे के बारे में भी वह बहुत-सी गुप्त आशाओं को सजोये है। तभी तो वह किताब मनोरमा को देकर चित्रों को प्रणाम करने की बात कही उसने। उसने सुना है, इसका फल अच्छा होता है। महात्माओं का प्रभाव गर्भस्थ भ्रूण में संचरित हो जाता है।

कई क्षण के बाद वह एकाएक चंचल हो उठा। बड़ा बेजा काम हो रहा है, धीरा बाबू की किताब आज तक लौटाई नहीं।

••

सात

चन्द दिनों के बाद सीताराम का ताऊजाद भाई सीताराम को ढूंढ गया। तीन-तीन बार।

सीताराम का ताऊजाद भाई पंडित-दादा बड़ा भला आदमी है

सीधासादा आदमी, गाँव में ही पाठशाला चलाता, गाँव की चिट्ठी-पत्री दस्तावेज लिखा करता और इसके अलावा जप-तप करता है। पंडित दादा पाठशाला लेकर ही मगन है। गाँव में कहीं भी रार-तकरार हो, समझौता करने के लिए खुद ही जाकर दोनों पक्षों से अनुरोध करता है। जमींदार की लगान-वसूली के वक्त गुमाश्ते की बैठक में भी खुद ही चला जाता है, लोगों का बाकी-बकाया का हिसाब देख देता, लोगों को लगान बकाया रखने के लिए डाँट-फटकार बताता, सूद-ब्याज माफ करने के लिए गुमाश्ते से भी अनुरोध करता।

उस दिन शाम के बाद तीन बार आकर उसने सीताराम की खोज की। सीताराम उस वक्त रत्नहाटा से लौटा नहीं था। खाना-वाना बना लेने के बाद मनोरमा ओसारे बैठी चरखे के लिए रुई बट रही थी। किसान-बहू जरा दूर बैठी किसी काम के अभाव में अपने ही पैरों पर हाथ फेर रही थी; बीच-बीच में कह रही थी, जाने तुम लोगों की खब्त कैसी है, सनक हुई सवार चल मक्का के पार। दिनोरात चरखा और चरखा। इससे बेहतर है कि पैर में जरा एल-तेल लगाओ, मच्छर नहीं काटेंगे, सरदी नहीं लगेगी। जब तक सीताराम लौट नहीं आता—किसान-बहू घर पर ही रहती है। बैठे-बैठे अपने ही तरंग में वह बड़बड़ा रही थी लेकिन मनोरमा के कानों में कुछ भी पहुँच नहीं रहा था, वह जरा चिन्तित हो गयी है। पंडित जेठ तीन-तीन बार क्यों आए ? यूँ तो पंडित-जेठ आते नहीं !

किसान-बहू बोल पड़ी, इसमें होना-ओना क्या ! अरे अगान-लगान बाकी-आकी पड़ गया हो तो मुच्छैल गुमाश्ते ने कुछ कहा-अहा होगा। बस तड़-फड़ भागते चले आये पंडित-मंडित।

मनोरमा लिख-पढ़ नहीं पाती, लेकिन इस बार भी सीताराम ने लगान चुकाकर रसीद ला उसे रखने को दी है। उसको खूब याद है। घुमा-फिराकर देखने के बाद उसने बक्से में रख दी है। बेशक लगान के बारे में कुछ नहीं। तो क्या ?

किसान-बहू ने उसका भी फैसला कर दिया, तो फिर गाँव के काइयाँ-कमीने कुछ साजिश-आजिश रच-बच रहे होंगे।

यह मुमकिन है। मुमकिन क्यों, बेशक यही बात होगी। उसके पति को कोई अच्छी निगाह नहीं देखता। सभी कहते हैं, फेल करके जिसकी गर्दन पर घट्टे पड़ गए, वही आखिरकार पंडित बन गया ! बहुत-से लोग कहते हैं, मैंने बड़े अच्छे आदमी से सुना है कि बाबुओं की कोठी में उसे वेतन-एतन कुछ भी नहीं मिलता, बस खुराकी-भर मिलती है। बहुत से लोग बिला-वजह लानत-मलामत करते हैं, कहते हैं, ज्यादा मत बढ़ो, आँधी में गिर जाओगे—गिरेगा, जल्दी ही गिरेगा, देखते भी रहो।

किसान-बहू ओसारे के एक छोर पर बैठी थी, धप से लेटकर बोली, तनिक लेट लो न।

उसके बारे में सोच-ओच मत करो। वह सब सफाचट हो जाएगा। कौन

क्या बिगाड़ सकता ? हजार हो आठ आने जमीदार की कोठी में मास्टरी-फास्टरी कर रहा है ।—लो तनिक लेट लो । मालिश-फालिश कर लो तनिक। हाँ तो नही ?

नही । तू लेटी रह । मैं आई । बस आ ही जाती हूं ।

जल्दी आना बचवा । अगर कहीं मैं सो-सो गई तो इल्ली-बिल्ली आकर असोई-रसोई चाट जाएगी । दूध उध सभाल के रख जाना जी ।

बाहर के दहलीज पर आकर मनोरमा फिर ठिठककर खडी हो गई । वह ताऊ के घर जा रही थी । किसी की मार्फत पंडित-जेठ से पूछ लेगी कि मामला क्या है । लेकिन उसे याद आ गया, उसके जाकर खड़े होते ही उस घर की ननद बाँकी हँसी हँसकर बोलेगी, आओ मास्टरनी आओ ।

स्टेशन पर सीताराम ने श्यामू-देवू से कहा था, 'मास्टर की दुल्हन—मास्टरनी ।' वही बात गाँव-भर में फैल गई है । या तो किसान-बहू ने यह प्रचारित किया है या तो उस लड़के ने । उन्ही लोगो ने सुनी थी यह बात । इसके अलावा, मनोरमा को भी ये कोई अच्छी निगाहो से नही देखते । कहते है, घमंडी है । वह कौन-सा घमंड दिखाती है, मनोरमा की समझ में नही आता ।

दरवाजे पर खड़ी वह निरुत्साह हो गयी । इसी कारण शायद उसे घर की याद आई, किसान-बहू की कुछ चोरी करने की आदत है । लकड़ी अकड़ी, फूस-पुआल खपचियाँ तो वह नियमित लेती ही है, तिस पर छोटी-मोटी चीजें पल्लू में छिपा लेती है । पकड़े जाने पर भी शरमाती नही, शरमाना तो दरकिनार, ऊपर से झिड़क उठती, घर से लूगी-ऊगी नही तो क्या कल्लू-जगधर के घर से लूंगी ? इसमे अजर-नजर मत डालो बचवा । हाँ, तीन पीढ़ी से तुम्हारे यहाँ खट-अट रहे है ।

इसके अलावा उसके पाँव भारी हैं, प्राय: आसन्न-प्रसवा है । तबीयत कोई ठीक नहीं । रात को घर से निकलना भी ठीक नही होगा । अब तो घर के आँगन में उतरती है औरतें, सुनत हैं पहले रात को घर में भी अनछायी जगह में कोई निकलती नही थी । वह लौट आई । इसी बीच किसान-बहू की नाक बोलने लगी है । फिक्र में भी उसे हँसी आ गयी । भला नाक बोलने की आवाज तो देखो ? फर्र —फर्र । फिर फर्रफरत् भी बीच-बीच में । वह रूई लेकर बैठ गई । लेकिन वह भी सुहाया नही ।

उल्लू घुघुआ रहा है । बेशक काला उल्लू होगा । कै बज गए ? ऊपर घड़ी देखने के लिए वह उठी । सीताराम ने घर के लिए एक टाइम-पीस खरीदी है । मनोरमा को कई बार उसने घड़ी देखना सिखाया है । मनोरमा की अक्ल मोटी है, यह मनोरमा खुद ही समझ पाती है ।

सीताराम कहता, लोगो के दिमाग में गाय का गोबर भरा होता है और तुम्हारे दिमाग मे गधे का गोबर भरा है ।

गधे का कहो गोबर होता है ! याद आते ही मनोरमा को हंसी आ जाती ।

पंडित लोग कितनी ही उद्भट बातें करते हैं।

ऊपर उसे नहीं जाना पड़ा। सीताराम की आवाज सुनाई पड़ी। पंडित-जेठ से ही बातें कर रहा है, मुझे शाम से तुमने तीन बार ढूंढ़ा ? मैं तो अभी चला आ रहा हूँ। लेकिन खोज क्यों रहे थे ?

स्वाभाविक शान्त स्वर में पंडित, जेठ ने कहा, चल, तेरे घर ही चल।

घर पर आकर जेठ ने कहा, ऊपर चल।

ऊपर ? क्यों जी ? ऐसी क्या बात है ? सीताराम भी उत्कंठित हो उठा।

चल, बता रहा हूं। नीचे वह किसान-बहू जो है।

ऊपर जाकर दोनों बैठ गये। मनोरमा से सीढ़ी पर खड़े हुए बिना रहा नहीं गया। उसका दिल धड़क रहा है। पंडित दादा ने कहा, धीराबाबू के जेल जाने की खबर जिस दिन आई उस दिन क्या तूने पाठशाला में छुट्टी दे दी थी ?

सीताराम चौंक पड़ा। इस बात को उसने इस नजरिए से कभी सोचा नहीं था। उसने कहा, हाँ खबर सुनी। सुना, बाबुओं की कोठी में चिट्ठी आई है, माँ रो रही हैं, श्यामू-देवू रो रहे हैं। उनके घर में पढ़ाता हूं, वे जमींदार हैं, वह रिश्ता भी एक है। मुझसे रहा नहीं गया, भागता गया। जाते वक्त छुट्टी दे गया।

पंडितदादा बोले, छुट्टी न भी देता तू। तेरे न रहने पर सभी लड़के अपने आप ही भाग गये होते।

वह भी तो एक ही बात हुई। सीताराम हँसा।

नहीं। एक बात नहीं। वहां के लोगों ने सब-इन्सपेक्टर के पास दरख्वास्त भेजी है।

दरख्वास्त भेजी है ? उसका दिल धक-सा हो रह गया।

हां। मैं आज एक सफाई दाखिल करने गया था। तो उन्होंने मुझे चुपके से यह बात बताई। रत्नहाटा के किसी ने दरख्वास्त में लिखा है, पाठशाला में तू असहयोग का प्रचार भी करता है। धीराबाबू के जेल की खबर आते ही तूने उसके सम्मान में फौरन पाठशाला बन्द कर दी। घर में भी चरखा कातता है। तू क्या चरखा कातता है ?

कातता हूं। सीताराम ने इतनी देर में अपने को संयत कर लिया था।

तब तो पंडित दादा के समूचे सिर पर खल्वट। गंजे सिर पर हाथ फेरना उनकी आदत में शुमार है—खासतौर से समस्या बोझिल होने के समयों पर। पंडित दादा खल्वट पर हाथ फेरने लगे।

सीताराम ने कहा, किया होगा तो शिवकिंकर वगैरा ने किया होगा। करने दो। फिर थोड़ी देर बाद बोला, कुछ बेजा काम तो किया नहीं। जो कुछ होना है, होगा।

केवल शिवकिंकर या उसका गुट ही नहीं, सीताराम दंग रह गया, करीब-करीब सारे भद्र लोग ही मानों उत्तेजित हो उठे हैं और इस दरख्वास्त में बहुतों की ही प्रेरणा है। इसका प्रमाण उसे अगले दिन सवेरे ही मिल गया।

रत्नहाटा में प्रवेश करते ही मणिलाल बाबू से भेंट हो गई। मणिलालबाबू अपनी आदत के मुताबिक मूँछों पर ताव दे रहे थे। जरा झुककर नमस्कार करते हुए सीताराम चला आ रहा था। मणिबाबू ने कहा, क्यों जी, सुना तुमने अपने जमींदार बाबू के जेल जाने के ऑनर में पाठशाला बन्द कर दी थी ?

थोड़ी देर चुप रहने के बाद सीताराम ने अपने को काफी मजबूत कर लिया। शुरू में दिमाग में दन्न-से आग की लौ की तरह गुस्सा लपलपा उठा था, अपने को संभालकर सविनय मुस्करा कर बोला, जी हाँ, सो तो बन्द कर दी थी। लेकिन इसलिए नहीं कि वे जमींदार बाबू हैं हमारे, बल्कि जो भी ऐसे गौरव का कार्य करेंगे उन्हीं के लिए करूंगा। आपका बेटा भी तो धीराबाबू का हमउम्र है, वे जायें तो उनके ऑनर में भी दूंगा।

मणिबाबू ने ऐसे उत्तर की प्रत्याशा नहीं की थी। चन्द लमहे ठहरकर सीताराम मणिबाबू को पारकर चला गया।

रत्नहाटा के इन सब बाबुओं को देखकर उसके मन में पहले की तरह विस्मय नहीं जाग उठता। उस विस्मय और भय में कोई फर्क नहीं। उसने सोचकर देखा है, भक्ति और भय मिलकर ऐसा होता है। जमींदार बाबू लोग, पक्की कोठियां, धन-दौलत—यह धारणा किसान रिआया का बेटा होने की वजह से उसको भक्तिमान बना देती थी। पाठशाला में उसने देखा है, खाते-पीते घर के लड़के जो अच्छे कपड़े-लत्ते पहनकर आते हैं, नए किस्म की पेन्सिल, लकदक नई किताबें, रंगीन कंघे जिनके पास होते, लाल-नीले कम्पट जेब में लेकर जो लोग पाठशाला में आते हैं उनका प्रेम-पात्र बनने के लिए यहाँ तक कि केवल उनसे सटकर खड़े होने-भर के लिए दूसरे लड़के लालायित हो उठते हैं। जो लोग कतई गरीब हैं, वे नजदीक आकर भी जरा फासला बनाये रख आँखें फाड़-फाड़ कर देखा करते हैं। अमीर लड़के की कोई चीज जमीन पर गिर जाये तो वे झट झुक उसे उठाकर उसके हाथों में देकर कृतार्थ-से हो जाते हैं। बाबुओं के प्रति भक्ति भी एक ही बात हुई—कोई फर्क नहीं।

और भय ? किस बात का भय ! अब उसे भय भी नहीं होता। एक बात वह समझ गया है। ये लोग हुंकार भरेंगे ही, इसकी आदत जो पड़ गयी है उनको। हुंकार के पीछे दो-चार चपरासी होते हैं। हिम्मत से अगर इस हुंकार की उपेक्षा कर खड़े हो जाओ तो वे हक्काबक्का रह जाते हैं। और वह डरेगा भी क्यों, वे भी इन्सान है और सभी लोग इन्सान है।

यकायक पीछे से मणिबाबू ने पुकारा, सुनो, सुनो ऐ छोकरे !

साथ ही साथ बाबू का चपरासी सआदत शेख भागते हुए आकर उसके सामने खड़ा हो गया, तुम्हें बुला रहे हैं बाबू।

सीताराम ने स्थिर दृष्टि से उसके मुख की ओर देखकर कहा, मुझे इस वक्त फुरसत नहीं। बाबू से जाकर बता दे।

फुर्सत नहीं ! सआदत दंग रह गया।

पंडित लोग कितनी ही उद्भट बातें करते हैं।

ऊपर उसे नहीं जाना पड़ा। सीताराम की आवाज़ सुनाई पड़ी। पंडित-जेठ से ही बातें कर रहा हैं, मुझे शाम से तुमने तीन बार ढूंढ़ा ? मैं तो अभी चला आ रहा हूँ। लेकिन खोज क्यों रहे थे ?

स्वाभाविक शान्त स्वर में पंडित, जेठ ने कहा, चल, तेरे घर ही चल।

घर पर आकर जेठ ने कहा, ऊपर चल।

ऊपर ? क्यों जी ? ऐसी क्या बात है ? सीताराम भी उत्कंठित हो उठा।

चल, बता रहा हूं। नीचे वह किसान-बहू जो है।

ऊपर जाकर दोनों बैठ गये। मनोरमा से सीढ़ी पर खड़े हुए बिना रहा नहीं गया। उसका दिल धड़क रहा है। पंडित दादा ने कहा, धीराबाबू के जेल जाने की खबर जिस दिन आई उस दिन क्या तूने पाठशाला में छुट्टी दे दी थी ?

सीताराम चौंक पड़ा। इस बात को उसने इस नजरिए से कभी सोचा नहीं था। उसने कहा, हाँ खबर सुनी। सुना, बाबुओं की कोठी में चिट्ठी आई है, माँ रो रही हैं, श्यामू-देबू रो रहे हैं। उनके घर में पढ़ाता हूं, वे जमींदार हैं, वह रिश्ता भी एक है। मुझसे रहा नहीं गया, भागता गया। जाते वक्त छुट्टी दे गया।

पंडितदादा बोले, छुट्टी न भी देता तू। तेरे न रहने पर सभी लड़के अपने आप ही भाग गये होते।

वह भी तो एक ही बात हुई। सीताराम हँसा।

नहीं। एक बात नहीं। वहाँ के लोगों ने सब-इन्सपेक्टर के पास दरख्वास्त भेजी है।

दरख्वास्त भेजी है ? उसका दिल धक-सा हो रह गया।

हाँ। मैं आज एक सफाई दाखिल करने गया था। तो उन्होंने मुझे चुपके से यह बात बताई। रत्नहाटा के किसी ने दरख्वास्त में लिखा है, पाठशाला में तू असहयोग का प्रचार भी करता है। धीराबाबू के जेल की खबर आते ही तूने उसके सम्मान में फौरन पाठशाला बन्द कर दी। घर में भी चरखा कातता है। तू क्या चरखा कातता है ?

कातता हूं। सीताराम ने इतनी देर में अपने को संयत कर लिया था।

तब तो पंडित दादा के समूचे सिर पर खल्वट। गंजे सिर पर हाथ फेरना उनकी आदत में शुमार है—खासतौर से समस्या बोझिल होने के समयों पर। पंडित दादा खल्वट पर हाथ फेरने लगे।

सीताराम ने कहा, किया होगा तो शिवकिंकर वगैरा ने किया होगा। करने दो। फिर थोड़ी देर बाद बोला, कुछ बेजा काम तो किया नहीं। जो कुछ होना है, होगा।

केवल शिवकिंकर या उसका गुट ही नहीं, सीताराम दंग रह गया, करीब-करीब सारे भद्र लोग ही मानों उत्तेजित हो उठे हैं और इस दरख्वास्त में बहुतों की ही प्रेरणा है। इसका प्रमाण उसे अगले दिन सवेरे ही मिल गया।

बार हो आओ।

सीताराम बोला, माहा जी, अगर स्कूल का एड देना वह बन्द कर दे ता आप लोग —तो क्या आप लोग भी पाठशाला—

माहा ने बीच में टोकते हुए कहा, पहले से ही इतना सब सोच रहे हो पण्डित ? एक सफ़ाई देते ही सबकुछ निबट जाएगा। यह मुझे सब-इन्सपेक्टर साहब ने कहा है। इसके अलावा इन्सपेक्टर रजनीबाबू भले आदमी, धार्मिक और महाशय व्यक्ति हैं। जाओ, तुम एकबार चक्कर लगा आओ।

स्कूल सब-इन्सपेक्टर रजनीबाबू सचमुच बड़े नेक हैं। जरा ज्यादा मात्रा में ही भलेमानुस हैं। रामकृष्ण देव के भक्त हैं, किसी प्रकार से भी झूठ नहीं बोलते, किसी भी पण्डित से जरा भर चीज भी स्वीकारते नहीं। सिर्फ दो शब्द हैं उनके। सज्जन होम्योपैथी का इलाज करते हैं, बीमार-शीमार पड़ने पर उनकी दवा सेवन करने पर वे खुश होते हैं और रामकृष्णदेव, श्री श्रीमाँ व विवेकानन्द का आविर्भाव या तिरोधान उत्सव मनाने पर रजनीबाबू उसे हृदय से स्नेह किए बिना रह नहीं पाते।

सीताराम का दुर्भाग्य है कि उसकी तन्दुरुस्ती बहुत अच्छी है, उसने कभी रजनी बाबू की दवा नहीं ली। और रत्नहाटा गाँव रत्नों का ही हाट है, यहाँ मणिलाल और शिवशिंकर जैसे रत्न इतने प्रबल हैं कि रामकृष्ण देव का जन्मोत्सव करना यहाँ आज तक सम्भव नहीं हो सका है। एकबार आयोजन हुआ था, धीरानन्द के हम-उम्र और उसी के कुछ मित्रों ने प्रयत्न किया था लेकिन शिवशिंकर दल ने उसको चौपट कर दिया था। उन लोगों ने सलाह की थी, उत्सव होने पर एक बकरा लाकर वे उसका उत्सव क्षेत्र में बलिदान करेंगे।

मणिलाल बाबू की चाल कुछ स्वतन्त्र किस्म की है। जमींदारी कूटचाल। उन्होंने रजनी बाबू को कहला भेजा था, हाल में उनको सुनाई पड़ा है, रजनीबाबू आजकल कुछ नाबालिग लड़कों के सहारे गाँव के भीतर आ-जा रहे हैं। वे अर्थात् मणिलालबाबू विश्वास करते हैं कि रजनीबाबू ईमानदार और भद्र व्यक्ति हैं, उनका कोई बुरा अभिप्राय नहीं है या हो नहीं सकता, लेकिन चूँकि उनके आने-जाने के कारण गाँव की बहू-बेटियों को असुविधा होती है, इसलिए वे सविनय प्रतिवाद कर रहे हैं। दस्तावेज के मसौदे जैसी पक्की और पेचीदा भाषा की यह उक्ति सुनकर रजनीबाबू के हाथ-पाँव और उंगलियों के सिरे सचमुच ठण्डे पड़ गए थे। उन्होंने सारा आयोजन बन्द कर दिया था। अगले वर्ष से वे बड़े स्कूल के बोर्डिंग में, वहाँ के छात्र और शिक्षकों को लेकर इन पावन दिवसों का पालन किया करते हैं। हफ्ते में एक दिन शाम को बोर्डिंग के छात्रों को लेकर आधा घण्टा रिलिजियस क्लास लगाते हैं, गाना होता—

"माँ, मुझे कृपा कर बच्चा-सा बनाए रखना, शरीर चाहे बढ़ता रहे कोई नुकसान नहीं पर दिल बच्चा जैसा ही बना रहे।"

लेकिन सीताराम ने इनमें से किसी में भी योगदान नहीं किया। उसका

नहीं। उसी स्थिर दृष्टि से वह उसकी ओर देखता रहा।

सआदत ने कहा, चले चलो भाई एकबार। क्यों हम से हंगामा-हुज्जत कराओगे ?

हाथ की लालटेन, छाता, लाठी, कन्धे का कुरता यह सब सीताराम ने रास्ते पर रख दिया। सआदत ने कहा, साथ ही ले चलो पण्डित। वे कोई भारी थोड़े ही हैं ?

सीताराम जवाब में सीना तान कर खड़ा हो गया और बोला, हाथापाई-हंगामा करोगे ? या लाठी लोगे ? कहो तो लाठी उठा लूं।

किसान का बेटा, बचपन से ही मेहनत-मशक्कत करके उनको बड़ा होना पड़ता है, तिसपर जन्म से ही उसका कदकाठ बलिष्ठ है। लेकिन इस ढंग से जिन्दगी में वह कभी खड़ा नहीं हुआ था। कभी-कभार अन्याय का विरोध करता रहा है लेकिन उसमें और इसमें बड़ा फर्क है। आज उसे लगा कि आज खून हो जाने को भी वह तैयार है। उद्धत अपमान को वह बरदाश्त नहीं करेगा।

बलिष्ठ देह लेकर उसका इस तरह खड़ा होना बेतुका नहीं लगा, सआदत भी चौकन्ना हो गया। अगर व्यक्तिगत मामला होता तो फौरन हंगामा छिड़ गया होता। सआदत भी ताकतवर है, लेकिन सआदत की ओर से यह मालिक का काम है, हुक्म के मुताबिक करना होगा, खासतौर से मालिक जब वहीं खड़े हैं। उसने हाँक लगाकर कहा, पण्डित कह रहा है, उसको इस वक्त फुरसत नहीं।

मणिबाबू की कचहरी थोड़ी ही दूरी पर थी, वे अपनी आंखों से ही सबकुछ देख रहे थे। वे बोले, रहने दो। तुम चले आओ।

सआदत बोला, तुम्हारे साथ मारपीट करने मैं नहीं आया था पण्डित भाई। मुझ पर तुम नाराज मत होना। भला बताओ, मैं करूँ तो क्या करूँ ? गरीबगुर्बा जाहिल मनई, इसी तरह खट कर खाता हूं। वह चला गया।

सीताराम जरा लज्जित हुआ। वाकई, सआदत पर इतना गुस्सा करना वाजिब नहीं था। सआदत का क्या कसूर ? लेकिन यह मणिलाल बाबू ? ये लोग भी क्या हैं ? छाता, लाठी, लालटेन, कुरता उठाकर वह बाबुओं की कोठी में दाखिल हुआ।

पाठशाला के दरवाजे पर ही ज्योतिष साहा खड़ा था। साहा बोला, पण्डित, उस दिन का काम कोई ठीक नहीं हुआ।

साहा के वक्तव्य का मतलब क्षणभर में सीताराम समझ गया। फिर वह सवालिया निगाह से देखता रहा।

धीराबाबू के जेल की खबर सुनकर पाठशाला में छुट्टी देना कोई ठीक काम नहीं हुआ।

सीताराम जमीन की ओर नजर गड़ाए सोचता रहा।

स्कूल सब-इन्सपेक्टर साहब ने तुमको एक बार बुलवा भेजा है। एक

बार हो आओ।

सीताराम बोला, साहा जी, अगर स्कूल का एड देना वह बन्द कर दे तो आप लोग —तो क्या आप लोग भी पाठशाला—

साहा ने बीच में टोकते हुए कहा, पहले से ही इतना सब सोच रहे हो पण्डित? एक सफाई देते ही सबकुछ निबट जाएगा। यह मुझे सब-इन्सपेक्टर साहब ने कहा है। इसके अलावा इन्सपेक्टर रजनीबाबू भले आदमी, धार्मिक और महाशय व्यक्ति हैं। जाओ, तुम एकबार चक्कर लगा आओ।

स्कूल सब-इन्सपेक्टर रजनीबाबू सचमुच बड़े नेक हैं। जरा ज्यादा मात्रा में ही भलेमानुस हैं। रामकृष्ण देव के भक्त हैं, किसी प्रकार से भी झूठ नहीं बोलते, किसी भी पण्डित से जर्रा भर चीज भी स्वीकारते नहीं। सिर्फ दो नशा हैं उनके। मज्जन होम्योपैथी का इलाज करते हैं, बीमार-बीमार पड़ने पर उनको दवा सेवन करने पर वे खुश होते हैं और रामकृष्णदेव, श्री श्रीमाँ व विवेकानन्द का आविर्भाव या तिरोधान उत्सव मनाने पर रजनीबाबू उसे हृदय से स्नेह किए बिना रह नहीं पाते।

सीताराम का दुर्भाग्य है कि उसकी तन्दुरुस्ती बहुत अच्छी है, उसने कभी रजनी बाबू की दवा नहीं ली। और रत्नहाटा गांव रत्नों का ही हाट है, यहाँ मणिलाल और शिवशंकर जैसे रत्न इतने प्रबल हैं कि रामकृष्ण देव का जन्मोत्सव करना यहाँ आज तक सम्भव नहीं हो सका है। एकबार आयोजन हुआ था, धीरानन्द के हम-उम्र और उसी के कुछ मित्रों ने प्रयत्न किया था लेकिन शिवशंकर दल ने उसको चौपट कर दिया था। उन लोगों ने सलाह की थी, उत्सव होने पर एक बकरा लाकर वे उसका उत्सव-क्षेत्र में बलिदान करेंगे।

मणिलाल बाबू की चाल कुछ स्वतन्त्र किस्म की है। जमींदारी कूटचाल। उन्होंने रजनी बाबू को कहला भेजा था, हाल में उनको सुनाई पड़ा है, रजनीबाबू आजकल कुछ नाबालिग लड़कों के सहारे गाँव के भीतर आ-जा रहे हैं। वे अर्थात् मणिलालबाबू विश्वास करते हैं कि रजनीबाबू ईमानदार और भद्र व्यक्ति हैं, उनका कोई बुरा अभिप्राय नहीं है या हो नहीं सकता, लेकिन चूंकि उनके आने-जाने के कारण गाँव की बहू-बेटियों को असुविधा होती है, इसलिए वे सविनय प्रतिवाद कर रहे हैं। दस्तावेज के मसौदे जैसी पक्की और पेचीदा भाषा की यह उक्ति सुनकर रजनीबाबू के हाथ-पाँव और उंगलियों के सिरे सचमुच ठण्डे पड़ गए थे। उन्होंने सारा आयोजन बन्द कर दिया था। अगले वर्ष से वे बड़े स्कूल के बोर्डिंग में, वहाँ के छात्र और शिक्षकों को लेकर इन पावन दिवसों का पालन किया करते हैं। हफ्ते में एक दिन शाम को बोर्डिंग के छात्रों को लेकर आधा घण्टा रिलिजियस क्लास लगाते हैं, गाना होता—

"माँ, मुझे कृपा कर बच्चा-सा बनाए रखना, शरीर चाहे बढ़ता रहे कोई नुकसान नहीं पर दिल बच्चा जैसा ही बना रहे।"

लेकिन सीताराम ने इनमें से किसी में भी योगदान नहीं किया। उसका

कारण यह नहीं कि सीताराम में भक्ति की कमी या अविश्वास हो। उसका कारण यह है कि उस बड़े स्कूल के किसी आयोजन में वह किसी प्रकार भी जाना नहीं चाहता है, जा नहीं सकता। बड़े स्कूल के हेडमास्टर की पहले दिन वाली स्नेहशून्य और सहानुभूतिशून्य बातें उसे हमेशा याद आती रहती हैं। हेडमास्टर ने श्लेष के स्वर में ही कहा था, साहा-केवट इन्हीं को लेकर तुम पाठशाला करो। पुण्य भी होगा—अंधेरे से उनको प्रकाश में भी लाना होगा। वही वह कर रहा है। फिर भी उसका एक निगूढ़ अभिमान है। इसके अलावा, स्कूल के किसी भी उत्सव में वे उसे निमन्त्रण भी नहीं भेजते। दूसरे मास्टर भी उससे घृणा करते हैं। यहाँ तक कि, शिवकिंकर-आविष्कृत 'अंचरे में लइया क्यों खा रहा है, आँचर जूठ हो जाएगा'—इस वाक्य को लेकर भी ठिठोली किया करते करते हैं। हालांकि सीताराम अगर चाहे तो इस व्यंग के उत्तर में व्यंग कर सकता है। उस स्कूल के मास्टरों में बहुत से लोगों का उच्चारण खराब है, कोई 'एवम्' और 'केवल' का उच्चारण करते हैं 'अयवम्' और 'कैवल'। कोई 'आमेन' को कहते हैं 'एमीन'। कोई 'कर्त्तव्य' को कहते हैं—कोरतव्य। यह सब लेकर व्यंग कर सकता है, लेकिन वह ऐसा करता नहीं। बल्कि उनके संसर्ग से वह कतरा कर चलता है। इसलिए रजनीबाबू को खुश करने के सुयोग की उपेक्षा करके भी बड़े स्कूल की धर्मसभा में वह योगदान करने नहीं जाता।

वहाँ जाने की बात ख्याल में आते ही उसे एक कथा याद आ जाती है। नदी में एक स्वर्णकुम्भ और एक मृतकुम्भ बहते चले जा रहे थे। स्वर्णकुम्भ ने मृतकुम्भ को बुलाकर कहा था, हम दोनों ही जब कुम्भ हैं, चलो एक ही साथ चलें। नजदीक आ जाओ। मृतकुम्भ ने नमस्कार करते हुए कहा था, हे मूल्यवान स्वर्णकुम्भ, तुम को धन्यवाद। लेकिन तुम्हारी अनमोल उदारता की झंकार सहन करने की शक्ति मुझमें नहीं है। मेरा दूर रहना बेहतर है। इसलिए वह दूर ही रहता है। रजनीबाबू इसको बुरा मानते हैं या नहीं, उसे नहीं मालूम। लेकिन भरोसा यही है कि रजनीबाबू अन्याय करने वाले व्यक्ति नहीं हैं। अन्याय वे नहीं करेंगे—इसका विश्वास सीताराम को है। फिर भी आज चिन्तित-सा सविनय नमस्कार कर सामने जा खड़ा हो गया। रजनीबाबू बोले, तनिक बैठो। बैठना पड़ेगा। इन लोगों का काम निबटा दूं।

स्कूल सब-इन्सपेक्टर का दरबार। इस सर्कल की पाठशालाओं के पण्डितों में दो-चार जने रोजाना ही आते हैं। वेशभूषा में गरीबी की छाप, चेहरे पर शीर्णता, विनीत दृष्टि, सब-इन्सपेक्टर के चबूतरे पर बही-खाता लेकर बैठे रहते हैं। रत्नहाटा के बाबू लोग सिगरेट का धुंआ उड़ाते लकदक पोशाक पहने चले जाते हैं, वे वाक्शून्य देखते रहते हैं। शायद ही कभी पुराने जमाने के बूढ़े पण्डित यहाँ के बाबुओं के किसी लड़के को अकेला पा बुलाकर उससे बातें करते हैं। फिर अकस्मात् ही कठिन हिज्जा, जटिल मानस-गणित पूछने लगते, बाबुओं के लड़कों के लाजवाब हो जाने पर खुश होते, चेहरे पर सन्तोष की मुस्कान झाँकने लगती। लेकिन दो-एक लड़के ऐसे भी हैं, जो लोग यहाँ के भावी

सिर खुजलाते हुए लज्जा प्रगट करते हुए बोले, तमाकू पीता हूं हुजूर—तो यह लड़का तमाकू-कोयला कुछ भी शेष नहीं रखता। तिस पर किसी को मार रहा है तो किसी को पीट रहा है। किसी की किताब फाड़ रहा है। उस दिन एक का कान दांतों से काट लिया—मार लहूलुहान मामला। कान उमेठा तो आंखें लाल-लाल कर कहने लगा—खबरदार, कायस्थ होकर मेरा कान मत छुओ। ये कान मेरे गुरु के हैं, मैं मन्त्र ले चुका हूं।

रजनीबाबू बिगड़ पड़े—सन्टी ? सन्टी क्या हुई आपकी ? सन्टी से पीटा क्यों नहीं आपने उसको ? बहुत अयोग्य व्यक्ति हैं आप !

पंडित बोला, तो फिर किसी दिन अन्धेरे में अचानक ही किसी ढेले से मेरा सिर फूट जाएगा हुजूर। ब्राह्मण नहीं हूं, निरीह शिक्षक हूं—वह तो, गोवध हो जाएगा साहब।

रजनीबाबू इस बार हँस पड़े—क्या मुसीबत ! तो फिर करेंगे क्या आप ? मैं भी भला लिखूंगा क्या ? जरा सोच कर बोले—अच्छी बात। फिर कभी ऐसी बातें न करिएगा।

जी नहीं, फिर कभी नहीं कहूंगा हुजूर। इसके बाद उसने कहा, जी साहब रामकृष्ण-कथामृत का दाम क्या है ? मैं एक मंगवाना चाहता हूं, दुकान का पता अगर लिख दें। कायस्थ की अक्ल बड़ी तेज होती है, चिन्ता में होते हुए भी सीताराम ने तारीफ की। कायस्थ-पंडित ने बड़े कायदे से रामकृष्ण-कथामृत का प्रसंग छेड़ दिया है।

इसके बाद पलाशबुनी के वृद्ध पंडित की बारी आई। इसी पंडित जी के साथ सीताराम इतनी देर से बातें कर रहा था। पंडित अपना दुखड़ा सुना रहे थे। जिस गांव में पाठशाला खोली है वहां पाठशाला खोलने की सम्मति प्राप्त करने के लिए जमींदार की कचहरी में रसोइए का काम स्वीकार करना पड़ा था। उन दिनों जमींदार के इस इलाके में आने पर उनका खाना बनाना पड़ता था। जमींदार के ग्राम्यदेवता की पूजा करनी पड़ती थी। इसमें हालांकि फायदा था। इस कारण ग्राम्य-पुरोहित का पद उनको मिल गया था। ईख पेरते वक्त शालपूजा कर गुड़ पाते थे, इतूपूजा करके ऊड़द पाते थे। लेकिन पंडित ने हँस कर कहा, बेटा, सबेरे से डेढ़ पहर दिन तक पाठशाला, फिर स्नान, फिर पूजा। इसका मतलब, दिन के तीन पहर तक बिना खाए गुजारना पड़ता था। खाना हालांकि उतना बच जाता था, लेकिन उसके फलस्वरूप अब बीमारी आ जुटी है, तिस पर यह कन्यादाय भी है। जिन्दगी खत्म हो गई। बस दो-एक वर्ष रह गए। थोड़ा चुप रहने के बाद बोले, तुम लोगों का जमाना तो सुनहरा जमाना है बेटा। गृहस्थों के घर लड़के के लिए धरना नहीं देना पड़ता। लड़के का बाप नहीं कहता, मेरा बेटा पढ़-लिखकर भला क्या करेगा ? लड़के की माँ-बुआ नहीं कहती, इस वंश में तो पढ़ाई नहीं की जाती, पढ़ाई झेल भी लेगा लड़का ? खयानत होगी। नहीं-नहीं, कोई जरूरत नहीं उसकी ? तुम तो बेटा साहा-केवटों

के बेटों को लेकर पाठशाला कर रहे हो अब। अब सभी में पढ़ाई-लिखाई के लिए एक उत्साह है। और भी होगा। हम लोग नहीं देख सकेंगे, तुम लोग देखोगे।

सीताराम ने यह बात मान ली, बोला, सो तो ठीक ही कहते हैं आप। साथ-ही-साथ उसने अपने को भाग्यवान समझा। रजनीबाबू ने पुकारा, पलाशबुनी के पंडित जी।

ब्राह्मण हाथ में जनेऊ पकड़े सामने आ खड़े हो गए, बोले, हुजूर, मैं गरीब ब्राह्मण हूं, यही मेरा अन्न है। यह भी मारा जाय तो बच्चों को लेकर मुसीबत में पड़ जाऊँगा। तिस पर कन्यादाय भी है।

वृद्ध पंडित ने कन्या के लिए रिश्ता तलाशने में दस-बारह दिन पाठशाला से नागा किया है।

रजनीबाबू सहृदय व्यक्ति हैं। वृद्ध के मुख की ओर देख प्रसन्न हँसी हँसते हुए बोले—बैठिए, बैठिए आप।

बैठने को होकर पंडित रो पड़े।

रजनीबाबू बोले—मुझे भी तो बताकर आप जा सकते थे। इन्सपेक्शन पर जाकर मैंने देखा, पाठशाला बन्द है। लोगों ने कहा—आप इस तरह नागा अक्सर किया करते हैं।

पंडित बोले, डर से, साहब डर से मैंने आपसे—। फिर रो पड़े वह। फिर बोले, साहब, सोलह साल की बेटी गले में फाँसी जैसे अटकी हुई है, रात को नींद नहीं, दिन को भोजन नहीं, उस दिन प्रतिज्ञा करके निकला था—पात्र ढूंढे बिना लौटूंगा नहीं।

मिला कोई पात्र ?

—जी, मिला है। एक वृद्ध तिआह वाला। खैर उसी से करूँगा। करूँ भी तो क्या ! पंडित उद्‌भ्रान्त-सा हो उठे।

रजनीबाबू ने लम्बी साँस लेकर कहा—खैर, जाइए—आप। लेकिन इस तरह बिना बताए लगातार दस-बारह दिन का नागा फिर कभी न करें।

पलाशबुनी के पंडित चले गए। अब और कोई नहीं।

सभी को विदाकर रजनीबाबू ने बुलाया, सीताराम !

सीताराम नमस्कार कर खड़ा हो गया। रजनीबाबू बोले, बैठो। बड़े लिफाफे में से एक दरख्वास्त निकालकर उन्होंने खुद पढ़ी। फिर बोले, तुम्हारे गाँव का पंडित, वह तो तुम्हारा दादा है; उससे सबकुछ बताया है, सुना है तुमने ?

जी हाँ।

तुम तो अंग्रेजी भी कुछ जानते हो। पढ़कर देखो—सरसरी तौर पर सब समझ जाओगे। उन्होंने सीताराम के हाथों में दरख्वास्त दिया।

टाइप किया हुआ दरख्वास्त—टू द डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट। सीधे मजिस्ट्रेट

साहब के पास दरख्वास्त भेजी है। साहब ने स्कूल सब-इन्सपेक्टर के पास तहकीकात के लिए भेजी है।

दरख्वास्त का कारण, असहयोग आन्दोलन में धीरानन्द मुखर्जी के जेल होने की खबर आने पर सन्दीपन पाठशाला के शिक्षक सीताराम पाल ने उसके प्रति सम्मान-प्रदर्शन करने के लिए पाठशाला बन्द की है। इसी से सिद्ध होगा धीरानन्द के प्रति उसका अनुराग। सीताराम धीरानन्द की रिआया है, उसी के घर में वह रहता है और उसी के आदर्श से प्रेरित है। इस मतिभ्रान्त उच्छृंखल प्रकृति का युवक धीरानन्द इस समय अहिंसा आन्दोलन में योगदान करने पर भी दरअसल वह हिंसक आन्दोलन के साथ युक्त है। सीताराम धीरानन्द के परामर्श से और आदर्श से पाठशाला के लड़कों को राजद्रोह सिखाता रहता है।

सीताराम ने बड़े ही कमजोर आदमी की तरह धीरे-धीरे दरख्वास्त को रजनीबाबू के सामने उतार दिया। एक दुर्वार भय से उसका मन मानो अभिभूत हो पड़ा था। धीरानन्द हिंसक आन्दोलन से जुड़ा है! सीताराम उसके परामर्श और आदर्श से पाठशाला के लड़कों को राजद्रोह की शिक्षा देता है! उसे लगा, पाठशाला का एड बन्द होगा—यह तो मामूली बात है, इससे पुलिस भी उसको पकड़कर ले जा सकती है।

रजनीबाबू ने पूछा, पाठशाला क्यों बन्द कर दी थी तुमने ? इस बारे में मैं क्या लिखूं ?

अपने को संयत कर सीताराम धीरे-धीरे बोलने लगा, मैंने उस ढंग से पाठशाला बन्द नहीं की थी। मैं उनके घर में रहता हूं, वे मुझे घर के लड़के की तरह देखते हैं, जब उनकी इस विपदा के बारे में सुना, माँ रो रही हैं, मेरे दोनों छात्र रो रहे हैं, तब मैं—

रजनीबाबू बोले, क्या तुमने कोई ऐसी बात की थी कि आज धीरानन्द देश के लिए जेल गए हैं, इसीलिए पाठशाला बन्द हुई।

जी नहीं साहब। आप मुझसे जो सौगन्ध खाने को कहिए, खाने को तैयार हूं। आप लड़कों से पूछ सकते हैं। ज्योतिष साहा जी हैं, उनसे पूछ सकते हैं।

रजनीबाबू बोले, मैंने साहा जी से पूछा है। उन्होंने हालांकि वही बताया जो तुम कह रहे हो। जरा चुप रहकर वे बोले, खैर, मैं यही लिखे दे रहा हूं। लेकिन इसके बाद से तुम बल्कि जरा सावधान रहना—

जरा चुप रहने के बाद वे जरा संकोच के साथ ही बोले, हो सके तो तुम धीरानन्दबाबू के घर में रहना छोड़ दो। उससे भला ही होगा। समझे ?

सीताराम चुप किए रहा। श्यामू-देबू को पढ़ाना छोड़ दे ? उनके घर के साथ रिश्ता छोड़ दे ? ऐसी विपदा के समय ?

रजनीबाबू बोले, देखो, ये सारे आन्दोलन, यह राजनीति, यह हमारे देश की नहीं है। यह है विदेशी चीज। इससे हमारे देश का कल्याण नहीं होगा। हम लोगों का एक मात्र पथ है धर्म का पथ, धर्म-नीति के बीच से ही हम लोगों की

मुक्ति आएगी। परमहंसदेव, स्वामी जी बार-बार यह बता चुके हैं।

सीताराम ने आँखें घुमाकर देखा, रजनीबाबू की दीवाल-अलमारी में किताबें कतार में सजी हैं। रामकृष्ण कथामृत से स्वामी जी की पुस्तकें— 'वीरवाणी', 'परिव्राजक', कितनी ही पुस्तकें!

रजनीबाबू विवेकानन्द प्रवर्तित सेवाधर्म के बारे में कहते जा रहे थे। वे बता गए हैं, मैं भारतवासी हूं। भारत की मिट्टी मेरे लिए स्वर्ग है। भारतवासी मेरा भाई है।

बाहर से किसी ने आवाज दी, रजनीबाबू हैं क्या?

कौन? मास्टर जी?

जी। आज की जोरदार खबर। सी० आर० दास अरेस्ट हो गए हैं।

सच? रजनीबाबू बाहर निकल गए। सीताराम ने 'वीरवाणी' पुस्तक खींच ली।

यह क्या कर डाला? धर्ना दिया इन्होंने तो।

हाँ।

आज कोई भी लड़का क्लास में आएगा नहीं।

हँसकर रजनीबाबू बोले, आप लोग बेंच थामे बैठे रहिए, वर्ना इस गाँव का कोई भरोसा नहीं। शायद दरखवास्त ठोक दें। बेचारे सीताराम के खिलाफ दिए हुए दरखवास्त के बारे में तो जानते ही होंगे? हालांकि बेचारे ने उस ढंग से पाठशाला बन्द नहीं की थी। धीरानन्द के घर पर रहता है, विपत्ति का समाचार सुनकर बेचारा वहाँ चला गया था। विपदा में जिस प्रकार आदमी आदमी के घर जाता है।

अचानक कोई मजदूर या किसान तबके का आदमी बोल पड़ा। जी बाबू साहब—

सीताराम कमरे में ही बैठा था। 'वीरवाणी' लेकर उलट-पुलट कर देख रहा था। अचानक उसे अपने खेत-मजूर के बेटे की आवाज सुनाई पड़ी।

जी, यहां सीताराम पंडित तो आये हैं न?

क्या है रे, क्या बात है?—सीताराम बाहर आ गया।

जी, कन्या सन्तान हुई है जी। इसलिए बप्पा ने कहा, इत्तला कर आओ।

मनोरमा ने एक कन्या सन्तान प्रसव किया है। वह लज्जित हो गया।

रजनीबाबू ने कहा, जाओ, तुम घर जाओ। फिक्र मत करना। मैं सबकुछ ठीक कर दूंगा।

जरा पथ आगे बढ़कर सीताराम ने कहा, अच्छे हैं न जच्चा-बच्चा?

जी हाँ, बप्पा ने नहीं बताया। मालकिन ने ही कहा। लेकिन शरीफ लोगों के सामने बप्पा का नाम ही लिया।

सीताराम जरा हँसा। छोकरे में अक्ल है। छोकरा पीछे से बोल पड़ा, जी, जेब से किताब गिर पड़ेगी, बाहर निकल आई है।

किताव ! जेव से उसने किताव निकाल ली। उसका सारा शरीर सनसना उठा। रजनीवावू की 'वीरवाणी' पुस्तक उलट-पुलट कर देख रहा था, जल्दी में उठ आते समय उसे जेव में डाल लिया है !

●●

पीला-सा चेहरा लिये मनोरमा लेटी हुई थी। गोद के पास अभी जन्मी शिशु-कन्या। अद्‌भुत ! ठीक तौर से आंखें नहीं खोल पा रही है, उंगलियों ने मुट्‌ठी वन्द कर रखी हैं, थर-थर कांप रही है। वड़ा अच्छा लगा सीताराम को !

मनोरमा ने हँसकर कहा, तुम पर पड़ी है।

सीताराम वोला, तव तो वहुत खूव। शादी करने में ही आँखें कपार पर चढ़ेंगी। मुझ जैसी वदसूरत !

टोकती हुई मनोरमा वोली, हाय अम्मा ! कैसी वाहियात वात करते हो। वदसूरत कहां से हो गये तुम ? या अपने को वदसूरत वताने पर वड़ी दिलेरी हो जाती है ?

सीताराम हँसा। फिर वोला, यह वात अगर तुम्हारा छल न हो तो तुम्हारे लिए चश्मा मंगवाना पड़ेगा।

वात का मर्मार्थ न समझ पाने से मनोरमा ने एक वेतुका मजाक किया। जवाव में वोली, चश्मा देना, जूता देना, एक टोपी भी खरीद देना, तुम्हारे स्कूल में तुम्हारे एवज में काम कर आया करूंगी।

सीताराम ने लड़की की ओर देखकर कहा, काली वदसूरत हुई भी तो क्या, उसको मैं पढ़ी-लिखी वनाऊंगा। अच्छी शादी अगर न हो तो उसकी शादी मैं करूंगा ही नहीं। शिक्षित करूंगा उसे, वह खुद किसी स्कूल में मास्टरी कर लेगी। वक्त कट जायगा।

कैसी मनहूस वातें हैं तुम्हारी !

क्यों ?

मास्टरी कैसे करेगी, औरत भी कभी मास्टरी करती है ?

यहीं रत्नहाटा विद्यालय में ही स्त्री-मास्टर आ रही हैं।

स्त्री-मास्टर आ रही हैं ? ईसाई हैं क्या ?

अँ हँ ऽ। ईसाई क्यों होगी—हिन्दू कायस्थ की वेटी है।

मनोरमा दंग रह गई। कायस्थ घर की लड़की नौकरी कर रही है ? शादी नहीं की उसने ?

मुझे मालूम नहीं।

मनोरमा ने खुद ही अनुमान लगा लिया, शादी हो जाने पर पति भला उसे क्या नौकरी करने देगा ? शादी नहीं हुई होगी।

सीताराम वोला, यही तो वता रहा हूं, अच्छा पात्र, पढ़ा-लिखा पात्र अगर न मिला तो वेटी की शादी मैं करूंगा ही नहीं। समझी।

मनोरमा वोली, ढेर-सा रुपया देना, शादी की कौन-सी चिन्ता ?

ढेर-सा रुपया ! सीताराम हँस पड़ा ।

मनोरमा बोली, हाँ । तुम्हारे जितने सारे छात्र हैं उनसे ले लोगे—एक रुपया, दो रुपया, पाँच रुपया, दस रुपया, जो जिस हैसियत का हो—

सीताराम को पलाशबुनी के कन्यादायग्रस्त वृद्ध पंडित की याद आ गई। वह अनमने ढंग से 'वीरवाणी' पुस्तक को उलटने लगा ।

अचानक मनोरमा को भी याद आ गई, पिछली शाम जेठ की बातें । उसने कहा, वह जो दरखास्त की बात पंडित जेठ बता रहे थे, उसका क्या हुआ ?

मामले को भरसक हल्का और संक्षिप्त कर सीताराम ने रजनी बाबू के यहा का ब्योरा दिया ।

●●

आठ

रजनीबाबू को सीताराम कसूरवार नहीं ठहरा सकता, रजनीबाबू ने अपनी कोशिश में कोई कोताही नहीं की । रिपोर्ट में उन्होंने क्या लिखा था, न देखने पर भी सीताराम जानता है, उसको बचाते हुए ही उन्होंने रिपोर्ट दाखिल की थी । कसूर शायद सीताराम के भाग्य का ही है । इसके अलावा और कुछ भी उसे दिखाई नहीं पड़ा ।

अचानक उस दिन पाठशाला के दरवाजे पर एक मोटरकार आकर खड़ी हो गई । मोटर से पुलिस साहब उतरे । आकू लपककर बाहर निकला फिर फौरन ही लौट आया । पुलिस साहब, मास्साब !

पुलिस साहब ?

जी । दफादार से पूछा, दफादार ने बताया ।

सीताराम हड़बड़ाकर बाहर निकल आया । पुलिस साहब दरवाजे के सिर पर लकड़ी पर लिखा नाम पढ़ रहे थे—सन्दीपन पाठशाला । सन्दीपन, पिक्यूलियर नेम ! दरोगा की ओर पलटकर उन्होंने पूछा, हू इज दिस सन्दीपन ? हू इज ही ?

दरोगा ने कहा, मुझे ठीक मालूम नहीं सर ।

सीताराम नमस्कार कर खड़ा हो गया । उसका दिल तुरन्त भय से काँप-काँप रहा है । ग्राम्य पाठशाला में साहब लोग खास कोई आते नहीं, आते भी हैं तो एस-डी-ओ या मजिस्ट्रेट साहब आते हैं । पुलिस साहब का पाठशाला में आना और लकड़हारा के पास लकड़ी का बोझ उठाने के लिए यमराज का आना—इन दोनों में कोई फर्क नहीं । कहानी के लकड़हारे ने यम को पुकारा था, लौट जाने को कहने पर लौट भी गया था । लेकिन यह तो बिन बुलाये खुद

किताव ! जेव से उसने किताव निकाल ली । उसका सारा शरीर सनसना उठा । रजनीवाबू की 'वीरवाणी' पुस्तक उलट-पुलट कर देख रहा था, जल्दी में उठ आते समय उसे जेव में डाल लिया है !

●●

पीला-सा चेहरा लिये मनोरमा लेटी हुई थी । गोद के पास अभी जन्मी शिशु-कन्या । अद्भुत ! ठीक तौर से आंखें नहीं खोल पा रही है, उंगलियों ने मुट्ठी वन्द कर रखी हैं, थर-थर कांप रही है । वड़ा अच्छा लगा सीताराम को !

मनोरमा ने हँसकर कहा, तुम पर पड़ी है।

सीताराम वोला, तव तो वहुत खूव । शादी करने में ही आंखें कपार पर चढ़ेंगी । मुझ जैसी वदसूरत !

टोकती हुई मनोरमा वोली, हाय अम्मा ! कैसी वाहियात वात करते हो । वदसूरत कहां से हो गये तुम ? या अपने को वदसूरत वताने पर वड़ी दिलेरी हो जाती है ?

सीताराम हँसा । फिर वोला, यह वात अगर तुम्हारा छल न हो तो तुम्हारे लिए चश्मा मंगवाना पड़ेगा ।

वात का मर्मार्थ न समझ पाने से मनोरमा ने एक वेतुका मजाक किया। जवाव में वोली, चश्मा देना, जूता देना, एक टोपी भी खरीद देना, तुम्हारे स्कूल में तुम्हारे एवज में काम कर आया करूंगी ।

सीताराम ने लड़की की ओर देखकर कहा, काली वदसूरत हुई भी तो क्या, उसको मैं पढ़ी-लिखी वनाऊंगा । अच्छी शादी अगर न हो तो उसकी शादी मैं करूंगा ही नहीं । शिक्षित करूंगा उसे, वह खुद किसी स्कूल में मास्टरी कर लेगी । वक्त कट जायगा ।

कैसी मनहूस वातें हैं तुम्हारी !

क्यों ?

मास्टरी कैसे करेगी, औरत भी कभी मास्टरी करती है ?

यहीं रत्नहाटा विद्यालय में ही स्त्री-मास्टर आ रही हैं ।

स्त्री-मास्टर आ रही हैं ? ईसाई हैं क्या ?

उँ हूँ ऽ । ईसाई क्यों होगी—हिन्दू कायस्थ की वेटी है ।

मनोरमा दंग रह गई । कायस्थ घर की लड़की नौकरी कर रही है ? शादी नहीं की उसने ?

मुझे मालूम नहीं ।

मनोरमा ने खुद ही अनुमान लगा लिया, शादी हो जाने पर पति भला उसे क्या नौकरी करने देगा ? शादी नहीं हुई होगी ।

सीताराम वोला, यही तो वता रहा हूं, अच्छा पात्र, पढ़ा-लिखा पात्र अगर न मिला तो वेटी की शादी मैं करूंगा ही नहीं । समझी ।

मनोरमा वोली, ढेर-सा रुपया देना, शादी की कौन-सी चिन्ता ?

ढेर-सा रुपया ! सीताराम हँस पड़ा।

मनोरमा बोली, हाँ। तुम्हारे जितने सारे छात्र हैं उनसे ले लोगे—एक रुपया, दो रुपया, पाँच रुपया, दस रुपया, जो जिस हैसियत का हो—

सीताराम को पलाशबुनी के कन्यादायग्रस्त वृद्ध पंडित की याद आ गई। वह अनमने ढंग से 'वीरवाणी' पुस्तक को उलटने लगा।

अचानक मनोरमा को भी याद आ गई, पिछली शाम जेठ की बातें। उसने कहा, वह जो दरख्वास्त की बात पंडित जेठ बता रहे थे, उसका क्या हुआ ?

मामले को भरसक हल्का और संक्षिप्त कर सीताराम ने रजनी बाबू के यहा का ब्योरा दिया।

●●

आठ

रजनीबाबू को सीताराम कसूरवार नही ठहरा सकता, रजनीबाबू ने अपनी कोशिश में कोई कोताही नही की। रिपोर्ट मे उन्होने क्या लिखा था, न देखने पर भी सीताराम जानता है, उसको बचाते हुए ही उन्होने रिपोर्ट दाखिल की थी। कसूर शायद सीताराम के भाग्य का ही है। इसके अलावा और कुछ भी उसे दिखाई नही पड़ा।

अचानक उस दिन पाठशाला के दरवाजे पर एक मोटरकार आकर खडी हो गई। मोटर से पुलिस साहब उतरे। आकू लपककर बाहर निकला फिर फौरन ही लौट आया। पुलिस साहब, मास्साब !

पुलिस साहब ?

जी। दफादार से पूछा, दफादार ने बताया।

सीताराम हड़बड़ाकर बाहर निकल आया। पुलिस साहब दरवाजे के सिर पर लकड़ी पर लिखा नाम पढ़ रहे थे—सन्दीपन पाठशाला। सन्दीपन, पिक्यूलियर नेम ! दरोगा की ओर पलटकर उन्होने पूछा, हू इज दिस सन्दीपन ? हू इज ही ?

दरोगा ने कहा, मुझे ठीक मालूम नही सर।

सीताराम नमस्कार कर खड़ा हो गया। उसका दिल तुरन्त भय से काँप-काँप रहा है। ग्राम्य पाठशाला मे साहब लोग खास कोई आते नहीं, आते भी हैं तो एस-डी-ओ या मजिस्ट्रेट साहब आते हैं। पुलिस साहब का पाठशाला मे आना और लकड़हारा के पास लकड़ी का बोझ उठाने के लिए यमराज का आना—इन दोनों में कोई फर्क नही। कहानी के लकड़हारे ने यम को पुकारा था, लौट जाने को कहने पर लौट भी गया था। लेकिन यह तो बिन बुलाये खुद

ही आ धमका है. यह क्या यूँ ही लौट जायगा !

पर्याप्त सम्मान दिखाते हुए सीताराम नमस्कार कर खड़ा हो गया। दरोगा ने कहा, यही पाठशाला के पंडित हैं सर।

तीखी नजरों से सिर से पैर तक उसे निरखकर साहब बोले, यू पंडिट ? सीटाराम पाल ?

जी हाँ हजूर।

साहब ने बंगला में कहा, सन्दीपन पाठशाला ! क्या मतलब ?

सीताराम बात का मतलब समझ नहीं सका, परेशान और सिटपिटाया-सा वह बोला, जी ?

पाठशाला का नाम सन्दीपन क्यों है ? सन्दीपन कौन है ?

सीताराम जरा विस्मित हुआ। बंगाली साहब, हिन्दू का बेटा, सुना है साहब किसी बड़े वैद्यवंश के हैं, सन्दीपन कौन है, यह साहब नहीं जानते ! उसने हाथ जोड़कर कहा, हुजूर, श्रीकृष्ण के गुरु का नाम है। सान्दीपनि मुनि। उन्हीं की सन्दीपन पाठशाला में कृष्ण-बलराम पढ़े थे।

आई सी ! स्थिर दृष्टि से साहब कुछ देर तक सीताराम की ओर देखते रहे। इसके बाद बोले, तुम्हारी उपाधि तो पाल है ! सद्गोप किसान के बेटे हो ?

जी हाँ।

तुम्हारा गाँव भी छोटे किसानों का गाँव है ?

जी हाँ हुजूर। यही नजदीक ही—कोस-भर में।

यस, यस। आई नो, आई नो। जरा चुप रहकर बोले, पाठशाला का नाम सन्दीपन क्यों रखा ? अँय परित्राणाय साधुनाम् ? वे जरा हँसे। फिर बोले, यह तुम्हारे दिमाग से आया है ? अँय ? कृष्ण बनाने का कारखाना ?

सीताराम की समझ में नहीं आया, इस नामकरण में अपराध कहाँ छिपा हुआ है ! लेकिन बिना भयभीत हुए रहा नहीं गया। साहब की बातें धमकी नहीं, लेकिन रूखी-तीखी और निर्दय हैं, हथौड़े की तरह आघात नहीं करतीं, धारदार छूरे की नाई स्वच्छन्द अनायास काटती चली जाती हैं। सीताराम ने महसूस किया, साहब बिल्कुल पेन्सिल छीलने की तरह उसको छीलते चले जा रहे हैं।

साहब ने फिर प्रश्न किया, किसने पाठशाला का नामकरण किया है ? तुमने ?

सीताराम बोला, जी धीरानन्द बाबू ने।

आइ सी। चलो, तुम्हारी पाठशाला देखूँगा।

●●

ऐसे वक्त पर क्या करना पड़ता है, यह सभी पाठशालाओं के लड़के जानते हैं। इसी बीच वे अपनी-अपनी जगह पर मनोयोग के साथ पढ़ने बैठ गये हैं, यहाँ तक कि आकू भी। साहब के भीतर प्रवेश करते ही वे ससम्मान खड़े हो

गए, नमस्कार किया उन लोगों ने। सीताराम ने कुर्सी झाड़ दी। मेज पर सारी कापियाँ उतारकर रख दी। साहब ने उनको बाएँ हाथ से ठेलकर सरका दिया। वे कमरे का असबाब-सामान तीखी नजरों से देखने लगे।

लड़कों में कुछ आगे बढ़कर नमस्कार कर कविता-पाठ करने लगे :

"आओ सब खड़े हो जायें कतार में
दरशक आए हैं आज विद्यागार में
प्रणाम तुम्हारे चरणों में मतिमान
आशीर्वाद करो हम बनें ज्ञानवान।"

साहब ने हँसकर कहा, बहुत खूब। गुड !

सीताराम ने लड़कों को इशारा किया, वे रुक गये।

साहब यकायक उठे, चारों ओर की दीवार के पास जाकर अच्छी तरह से कुछ देख आए। वे दीवार पर लड़कों द्वारा पेन्सिल से लिखी इबारत पढ़ आये—वन्देमातरम्, वन्देमातरम्, भोला चोर है, आकू डाकू है, वन्देमातरम्, गांधी महाराज की जय, वन्देमातरम्।

साहब लौटकर कुर्सी पर बैठ गए। लड़कों की ओर देखकर कहा, तुम लोग भारतवर्ष के सम्राट का नाम जानते हो ?

सीताराम ने ज्योतिष साहा के भतीजे से कहा, बोलो, डर क्या है ?

उसने हाथ जोड़कर कहा, इंगलंडेश्वर सम्राट पंचम जार्ज।

साहब बोले, महामान्य इंगलंडेश्वर सम्राट पंचम जार्ज। गुड ! क्यों, तुम लोग भारतवर्ष के सबसे बड़े आदमी का नाम जानते हो ? रुपये से बड़ा नहीं—भला आदमी, बड़ा आदमी।

ज्योतिष साहा का भतीजा विह्वल दृष्टि से मास्टर के मुख की ओर देखता रहा। कुछ ऊपर की ओर मुख किए सोचने लग गये। आकू अपनी आदत के मुताबिक मुस्करा रहा था। साहबकी आँखों से आँखें मिलते ही वह मुस्कराकर सिर झुकाए बोला, महाराज गांधी।

ज्योतिष साहा का भतीजा फौरन बोला पड़ा, चित्तरंजनदास।

एक ने कहा, मोतीलाल नेहरू।

आकू फिर बोल पड़ा, सुभाषचन्द्र बोस। जवाहरलाल नेहरू।

सीताराम के हाथ-पाँव सचमुच ठंडे पड़ गये। वह पसीने से तरबतर हो रहा था।

साहब बोले, बस, बस। जाओ, तुम लोगों की छुट्टी। जाओ।

लड़कों के चले जाने के बाद साहब ने पूछा, तुमने यह सब सिखाया है !

चाकू से पेन्सिल काटते-काटते किसी समय पेन्सिल भी संगीन रूप से नुकीली और धारदार बन जाती है। भय की अन्तिम सीमा तक पहुँचकर मनुष्य बहुधा समय न मिलने पर भी निर्भय हो उठता है। उसने अब मुँह उठाकर कहा, नहीं। मैंने नहीं सिखाया। यह सब आजकल किसी को सिखाना नहीं पड़

बैठो तुम, बैठो। रजनी बाबू उसके बगल में बैठ गए। फिर बोले, मैंने सबकुछ सुना है।

सीताराम चुप किए रहा।

रजनी बाबू बोले, इच्छा थी कि सर्च के बाद ही एक बार पाठशाला जाऊं। अपनी आँखों देख आऊं। लेकिन यहाँ के मास्टर लोगों ने मना किया। कुछ देर चुप रहने के बाद फिर बोले, सुना था, तुम रोजाना इस झरने के पास घूमने आते हो, सो चला आया।

सीताराम मूढ़-सा प्रश्न कर बैठा, जी ?

रजनी बाबू उसकी पीठ पर सस्नेह हाथ रख अब बोले, तुम बेहद मायूस-सा हो गये हो। ऐसा मायूस हो पड़ने से तो काम नहीं चलेगा।

सीताराम ने आंखें मूंदकर कहा, जी नहीं। जरा मुस्कराने की भी कोशिश की उसने।

रजनी बाबू बोले, मणिबाबू के साथ तुम्हारा क्या हुआ था—जमींदार मणिलाल बाबू के साथ ?

सीताराम कुछ भी याद नहीं कर सका, सविस्मय उसने कहा, जी कहाँ, कुछ भी तो—। वह स्तब्ध हो गया, अब उसे याद आ रहा है।

क्या कहा था तुमने उनको ?

सीताराम ने अकपट सारी बात बता दी।

वे ही इस मामले के मूल में हैं। उन्होंने ही पुलिस साहब को यह सब बातें बताई हैं।

सीताराम ने अब एक गहरी लम्बी सांस ली।

रजनीबाबू बोले, पहले जो दरख्वास्त दिया गया था वह मेरी रिपोर्ट से ही ठीक हो गया था। कोई गड़बड़ी नहीं हो सकती थी।

सीताराम का वदन सख्त हो उठा; मणिलाल बाबू के द्वारा यह सब किया-कराया गया है—इस समाचार ने ही उसे कड़ा बना दिया। उसने जरा हँसकर कहा, यह मेरा भाग्य है।

बहुत देर चुप रहने के बाद रजनीबाबू बोले, क्या करोगे ?

सीताराम ने प्रश्न किया, क्या मुझे पाठशाला और खोलने नहीं देंगे ?

चाहे तो गवर्नमेंट क्या नहीं कर सकती ? गैर कानूनी संस्था कहकर बन्द करवा सकती है, लेकिन—। रजनी बाबू हँसे, बोले, ऐसा नहीं करेंगे, उनमें भी एक शर्म-हया है। एक पाठशाला—। नहीं इतना नहीं करेंगे। लेकिन एड का रुपया बन्द हो जाएगा।

फिर कुछ देर चुप रहने के बाद वे बोले, लेकिन अभी कुछ दिन चुपचाप रहना ही बेहतर होगा। बाबुओं के बेटे पढ़ रहे हैं, उसी के साथ अगर दो-चार लड़के और ले लो तो तुम्हारा गुजारा किसी तरह हो जाएगा। इसके अलावा दोपहर को अगर सब-रजिस्ट्री के दफ्तर में लोगों की अर्जी-दरख्वास्त लिख दोगे

तो भी कुछ कमाई हो जाएगी तुम्हारी। पाठशाला से बेहतर ही होगी। मैंने सब-रजिस्ट्रार बाबू से कहा है। वे भी सारा मामला सुनकर दुखी हुए। बोले, —अच्छी बात, भेज दीजिएगा।

सीताराम ने लम्बी साँस ली। बोला, देखें।

बाबुओं की कोठी में लौटते ही कन्हाई ने कहा, माँ जी तुम्हें बुला रही हैं।

धीरानन्द की माँ इस मामले को लेकर काफी लज्जित हो गयी थी। किसी तरह से भी भुला नहीं पा रही थी कि इसके लिए धीरानन्द जिम्मेवार है। धीरानन्द जेल गया है, धीरानन्द का सीताराम आदर करता है, धीरानन्द के भाइयों को पढ़ाता है, उनके घर में रहता है, तभी उसका ऐसा दुर्भाग्य है। बड़ी मेहनत से बेचारा किसान सद्गोप का बेटा, थोड़ा-सा पढ़-लिखकर भद्र तरीके से जीवन बिताने के लिए पाठशाला खोल बैठा था, वह पाठशाला ही मात्र टूट गई, ऐसा नहीं, शायद उस बेचारे का उस पथ को अपनाकर चलना भी इस बार के लिए खत्म हो गया। उनकी जिम्मेवारी केवल इतनी ही नहीं, सीताराम केवल बेटों का गृहशिक्षक ही नहीं, वह उनकी रिआया भी है। उन्होंने उसे बुलवाकर धीरानन्द के पढ़ने के कमरे में बिठाया। बोलीं, बैठो बेटा। उस बेले तुमने अच्छी तरह खाना नहीं खाया। पहले खाना खा लो।

सीताराम ने आपत्ति नहीं की। भूख भी लगी थी, पेट भरकर खाया। माँ बोलीं, सुनो बेटा, मैं यह भूल नहीं पा रही हूं, धीरा के लिए तुमको यह तकलीफ उठानी पड़ी।

सीताराम की आँखों में अचानक ही आँसू आ गए। उसने आँखें पोंछकर कहा, जी नहीं माँ। यह सारा बवाल कराया है मणिलाल बाबू ने।

मणि देवर जी ने?

जी हाँ। उसने सारी बातें बतायीं।

माँ हँसीं—कड़वी-सी धारदार हँसी। यह हँसी सीताराम को आश्चर्यजनक-सी लगी। यह हँसी इनके अलावा और कोई हँस नहीं सकता।

माँ बोलीं, जानते हो बेटा, जंगल का सिंह मर जाता है तब दूसरे जंगल का सिंह आकर इस जंगल के आश्रितों पर अत्याचार करता है। लेकिन उसका भी प्रतिकार किसी वक्त हो जाता है। सिंह के छौने जब बड़े हो जाते हैं तब वे इसका बदला चुकाते हैं। माँ गंभीर चेहरा लिये बैठी रहीं कुछ देर तक। फिर एक लम्बी-सी साँस लेने के बाद बोलीं, मेरे बेटे भी कभी बड़े होंगे। लौट आने दो धीरा को।

सीताराम नीरव बैठा रहा। माँ की ये बातें उसे बहुत कठोर-सी लगीं। उनके बेटे सिंह हैं और वे आश्रित हैं!

माँ बोलीं, सुनो बेटा आज जिसलिए तुमको मैंने बुला भेजा है। क्या करोगे तुम? पाठशाला तो उठ गयी।

सीताराम हड़बड़ाकर बोल पड़ा, जी नहीं, उठ नहीं गयी है, लेकिन हाँ, एक

बैठो तुम, बैठो। रजनी बाबू उसके बगल में बैठ गए। फिर बोले, मैंने सबकुछ सुना है।

सीताराम चुप किए रहा।

रजनी बाबू बोले, इच्छा थी कि सर्च के बाद ही एक बार पाठशाला जाऊं। अपनी आँखों देख आऊं। लेकिन यहाँ के मास्टर लोगों ने मना किया। कुछ देर चुप रहने के बाद फिर बोले, सुना था, तुम रोजाना इस झरने के पास घूमने आते हो, सो चला आया।

सीताराम मूढ़-सा प्रश्न कर बैठा, जी ?

रजनी बाबू उसकी पीठ पर सस्नेह हाथ रख अब बोले, तुम बेहद मायूस-सा हो गये हो। ऐसा मायूस हो पड़ने से तो काम नहीं चलेगा।

सीताराम ने आंखें मूंदकर कहा, जी नहीं। जरा मुस्कराने की भी कोशिश की उसने।

रजनी बाबू बोले, मणिबाबू के साथ तुम्हारा क्या हुआ था—जमींदार मणिलाल बाबू के साथ ?

सीताराम कुछ भी याद नहीं कर सका, सविस्मय उसने कहा, जी कहाँ, कुछ भी तो—। वह स्तब्ध हो गया, अब उसे याद आ रहा है।

क्या कहा था तुमने उनको ?

सीताराम ने अकपट सारी बात बता दी।

वे ही इस मामले के मूल में हैं। उन्होंने ही पुलिस साहब को यह सब बातें बताई हैं।

सीताराम ने अब एक गहरी लम्बी सांस ली।

रजनीबाबू बोले, पहले जो दरख्वास्त दिया गया था वह मेरी रिपोर्ट से ही ठीक हो गया था। कोई गड़बड़ी नहीं हो सकती थी।

सीताराम का वदन सख्त हो उठा; मणिलाल बाबू के द्वारा यह सब किया-कराया गया है—इस समाचार ने ही उसे कड़ा बना दिया। उसने जरा हँसकर कहा, यह मेरा भाग्य है।

बहुत देर चुप रहने के बाद रजनीबाबू बोले, क्या करोगे ?

सीताराम ने प्रश्न किया, क्या मुझे पाठशाला और खोलने नहीं देंगे ?

चाहे तो गवर्नमेंट क्या नहीं कर सकती ? गैर कानूनी संस्था कहकर बन्द करवा सकती है, लेकिन—। रजनी बाबू हँसे, बोले, ऐसा नहीं करेंगे, उनमें भी एक शर्म-हया है। एक पाठशाला—। नहीं इतना नहीं करेंगे। लेकिन एड का रुपया बन्द हो जाएगा।

फिर कुछ देर चुप रहने के बाद वे बोले, लेकिन अभी कुछ दिन चुपचाप रहना ही बेहतर होगा। बाबुओं के बेटे पढ़ रहे हैं, उसी के साथ अगर दो-चार लड़के और ले लो तो तुम्हारा गुजारा किसी तरह हो जाएगा। इसके अलावा दोपहर को अगर सब-रजिस्ट्री के दफ्तर में लोगों की अर्जी-दरख्वास्त लिख दोगे

मनोरमा बोली, अगर पकड़ ले जायें?

नहीं, पकड़ नहीं ले जायगा कोई।

नहीं ले जायगा?

नहीं। मुस्कराकर सीताराम ने फिर कहा, और अगर ले ही जाय तो क्या हुआ? यह कोई चोर-डकैत का जेल तो है ही नहीं।

मनोरमा ने विरोध करते हुए कहा, नहीं।

नहीं? अब सीताराम हँसा।

तुमको, मई यह सब करने की जरूरत नहीं।

क्या?

पाठशाला—वाठशाला। हाँ और अगर करना ही हो तो अपने गाँव में करो। उस घर के पंडित-जेठ कहा रहे थे, मैं तो अब ससुराल जाकर ही रहूँगा, तो फलां यहाँ पाठशाला क्यों नहीं करता!

सीताराम चुप किये रहा।

मनोरमा लाड जताती हुई बोली, गाँव के लड़के मुझे 'गुरु माँ' कहकर पुकारेंगे उस घर की दादी की तरह। हाँ।

सीताराम ने उसाँस छोड़ी। जमींदार कोठी की नायबी, गाँव की पाठशाला, किसी से भी उसका मन खुश नहीं हो पा रहा है। उसके बड़े जतन, बड़ी साध से बनी रत्नहाटा की सन्दीपन पाठशाला! उस पाठशाला के सिवा किसी से भी उसका मन नहीं भरेगा। शायद राज्यपद पाने पर भी नहीं। बरसात में धान खेत की तरह उसकी पाठशाला की उमंग उठी थी। गंदले पानी से भरे खेत में धान का पौधा रोप दिया जाता है, शुरू-शुरू में ये पौधे दिखाई नहीं पड़ते—गंदले पानी से भरा खेत जलभरी परती जमीन-सा लगता है, देखते ही देखते धान के पौधे ठुमक कर हरियाली से सारे खेत को भर देते हैं। उस समय दूर से उसकी हरियाली का लालित्य लोगों की आँखों में पड़ता है, आँखें जुड़ा जाती हैं। उसकी पाठशाला भी इसी तरह जमने लगी थी। साहाटोला, सुनारटोला, कैवटटोला में एक हलचली आ गई थी। कमरे की फर्श, बरामदा लड़कों से भर उठे थे। शोर मचाते वे पढ़ा करते थे, तरन्नुम से पहाड़ा पढ़ते थे—दो एकके दो, दो दूना चार, दो तिया छह। मानो एक गीत हो। मुहल्ले के लोग कहते, पाठशाला में पढ़ाई हो रही है। रास्ता चलते राहगीर ठिठक कर खड़े हो जाते थे। जो लोग पढ़ना जानते हैं, वे इस साइनबोर्ड को पढ़ते थे—रत्नहाटा सन्दीपन पाठशाला, शिक्षक—सीताराम पाल।

●●

वन्द हो जायगी।

लड़के भी तो सभी सर्टीफिकेट लेकर चले गये।

जी हाँ।

तो फिर?

सीताराम को इसका जवाव ढूँढ़े नहीं मिला। माँ वोलीं, हम लोगों के लिए ही तुम्हारा यह कमाई का जरिया वन्द हुआ। मैं सारा दिन ही सोचती रही। तुम एक काम करो वेटा। हमारे सरिश्तेखाने में तुम काम करो। तुम्हारा गाँव, इस ओर सुरभिपुर, रामचन्द्रपुर ये तीनों गाँव अगल-वगल हैं। इनकी वसूली ले लो और सदरसरिश्तेखाने के कागजात की देखभाल करो। उससे पाठशाला से वेहतर कमाई होगी। तनख्वाह होगी, तहरीर होगी, दाखिल-खारिज की फीस का हिस्सा होगा।

अच्छा होगा। अच्छा होगा। उपपद तत्पुरुष कन्हाई राय जाने कव आकर दरवाजे के सामने डकड़ूँ हो वैठा था।

माँ वोलीं, इसके अलावा वेटा, मेरा भी एक स्वार्थ है। तुम मेरे सन्तानतुल्य हो। केवल यही नहीं, तुम अच्छे स्वभाव के हो, ईमानदार हो तुम। हमारे नायव जी की सेहत खराव है। उनके वाद तुम्हारे ही हाथों में मैं सारा भार सौंपना चाहती हूं। लम्वी साँस लेकर वोलीं, धीरा ने जो पथ अपना लिया है, उससे उस पर मेरा अव कोई भरोसा नहीं।

सीताराम इसके लिए तैयार नहीं था। वह चंचल हो उठा। क्षण-भर में कल्पना में नायव जीवन का रूप उभर आया उसके सामने। जमींदार कोठी का नायव! पीछे-पीछे कन्हाई राय सिर पर पगड़ी वाँधे, कन्धे पर लाठी लेकर चलेगा। तख्तपोश पर छोटी-सी गद्दी के आसन पर सामने कैशवाक्स लेकर वह वैठेगा। इसके अलावा—सिंह का आश्रित वनकर वह नहीं रह सकेगा।

कन्हाई राय वोले, लग जाओ, लग जाओ। भला कै रोज लगेंगे सीखने में? मैं सव सिखा दूंगा।

सीताराम कुछ देर चुप वैठा रहा। फिर वोला, सोचकर देख लूँ माँ। सम्मति देने को होकर भी उसका गला रुंध गया। दिल जाने कैसा करने लगा।

●●

मनोरमा उत्कंठित-सी उसके लिए प्रतीक्षा कर रही थी। पाठशाला की खानातलाशी की खवर उसको सवेरे मिल चुकी थी। आसपास के पाँच-छह गांवों में यह खवर फैल चुकी थी। मनोरमा ने हलवाहे को भी भेजा था, वह रत्नहाटा में दो वार आकर पता लगा गया है। लेकिन सीताराम से उसने वातें नहीं कीं। मनोरमा की मनाही थी। उत्कंठित होने पर सीताराम नाराज होता है।

सीताराम के आते ही वह अपने को संभाल नहीं सकी, रोने लगी। सीताराम सस्नेह उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुए वोला, रोती क्यों हो?

मनोरमा बोली, अगर पकड़ ले जायें ?

नहीं, पकड़ नहीं ले जायगा कोई।

नहीं ले जायगा ?

नहीं। मुस्कराकर सीताराम ने फिर कहा, और अगर ले ही जाय तो क्या हुआ ? यह कोई चोर-डकैत का जेल तो है ही नहीं।

मनोरमा ने विरोध करते हुए कहा, नहीं।

नहीं ? अब सीताराम हँसा।

तुमको, भई यह सब करने की जरूरत नहीं।

क्या ?

पाठशाला—पाठशाला। हाँ और अगर करना ही हो तो अपने गाँव में करो। उस घर के पंडित-जेठ बता रहे थे, मैं तो अब ससुराल जाकर ही रहूँगा, तो फलां यही पाठशाला क्यों नहीं करता !

सीताराम चुप किये रहा।

मनोरमा लाड़ जताती हुई बोली, गाँव के लड़के मुझे 'गुरु माँ' कहकर पुकारेंगे उस घर की दादी की तरह। हाँ।

सीताराम ने उसाँस छोड़ी। जमींदार कोठी की नायबी, गाँव की पाठशाला, किसी से भी उसका मन खुश नहीं हो पा रहा है। उसके बड़े जतन, बड़ी साध से बनी रत्नहाटा की सन्दीपन पाठशाला ! उस पाठशाला के सिवा किसी से भी उसका मन नहीं भरेगा। शायद राज्यपद पाने पर भी नहीं। बरसात में धान खेत की तरह उसकी पाठशाला की उमंग उठी थी। गंदले पानी से भरे खेत में धान का पौधा रोप दिया जाता है, शुरू-शुरू में ये पौधे दिखाई नहीं पड़ते—गदले पानी से भरा खेत जलभरी परती जमीन-सा लगता है, देखते ही देखते धान के पौधे हुमक कर हरियाली से सारे खेत को भर देते हैं। उस समय दूर से उसकी हरियाली का लालित्य लोगों की आँखों में पड़ता है, आँखें जुड़ा जाती हैं। उसकी पाठशाला भी इसी तरह जमने लगी थी। साहाटोला, सुनारटोला, केवटटोला में एक खलबली आ गई थी। कमरे की फर्श, बरामदा लड़कों से भर उठे थे। शोर मचाते वे पढ़ा करते थे, तरन्नुम से पहाड़ा पढ़ते थे—दो एक्के दो, दो दूना चार, दो तिया छह। मानो एक गीत हो। मुहल्ले के लोग कहते, पाठशाला में पढ़ाई हो रही है। रास्ता चलते राहगीर ठिठक कर खड़े हो जाते थे। जो लोग पढ़ना जानते हैं, वे इस साइनबोर्ड को पढ़ते थे—रत्नहाटा सन्दीपन पाठशाला, शिक्षक—सीताराम पाल।

●●

नौ

अगले दिन भी वह लाठी, छाता और लालटेन हाथों में लेकर सवेरे रत्नहाटा गया। बुझे दिल से आकर ही वह श्यामू-देवू को पढ़ाने बैठ गया।

कुछ दिन हुए श्यामू बड़े स्कूल में भरती हो गया है। देवू अब भी घर ही में पढ़ता है। दस बजे उनको छुट्टी देकर सीताराम ने एक ठंडी साँस ली। नहाने की कोई जल्दी नहीं। पाठशाला बन्द है। आँखों में आँसू आ गए, आँसू छिपाने के लिए ही वह तख्तपोश पर लेट गया। कुछ देर बाद ही उठकर बैठ गया। किसी भी तरह से उसे शान्ति नहीं मिल रही है। अचानक मन में क्या आया कि टूटी हुई घड़ी को दीवार की एक कील से लटकाकर उसको चलाने की, कोशिश में जुट गया। एक बार दाहिने सरका कर फिर जरा-सा बाएँ ठेलकर दीवार और घड़ी की पीठ के बीच एक कागज ठूंस पेंडलम डुलाकर आवाज़ सुनने लगा है। हाँ, अब आवाज़ कुछ-कुछ ठीक आने लगी है। बहुत देर तक वह घड़ी की ओर ताकता रहा। चल रही है घड़ी। फिर फटे हुए मैप को लेकर बैठ गया। जरा मैदे की लेई चाहिए और थोड़ा-सा बारीक कपड़े का टुकड़ा। फिर यह भी दुरुस्त हो जाएगा।

पंडित!

कौन?

शिशु कक्षा के एक बच्चे को गोद में लेकर उसकी विधवा माँ आई है। जरा इसकी नाड़ी तो देख लो पंडित! कल रात से बुखार है। तुमको बिना दिखाये हम लोगों का काम नहीं चलता बेटा। देख लो एक बार।

इन कई वर्षों में सीताराम ने इस एक विद्या पर भी अधिकार प्राप्त कर लिया है। नाड़ी देखना सीख लिया है उसने। कफ पित्त-वायु आदि के आधिक्य-दोष का भी निर्णय वह कर सकता है।

देखें? दाहिना हाथ। दाहिना हाथ कौन-सा है जी? अंय? जिस हाथ से खाना खाते हो। वाह। बायाँ हाथ लड़के की कोहनी के नीचे रख दाहिने हाथ से उसने नाड़ी दबायी।

बुखार तो काफी है—अन्दाजन एक सौ एक होगा। दो दिन लगेंगे। पित्त-दोष हुआ है जी।

लड़के ने कहा, पाठशाला क्या नहीं लगेगी मास्सा?

मलिन हँसी हँसते हुए पंडित बोला, लगेगी क्यों नहीं। पहले चंगे हो जाओ, फिर चलकर आ जाना।

मुझे टिफन का घंटा बजाने देंगे मास्सा?

दूंगा। तुम ही घंटा बजाओगे। सिर और पीठ पर हाथ फेरकर मास्टर ने

कहा, देखना, ठंड न लगे।

वह फिर मैप लेकर बैठ गया। जरा मैदे की लेई चाहिए। महीन कपड़ा थोड़ा-सा। कोठी के भीतर जाने के लिए वह उठ खड़ा हुआ।

कौन ? कोई शायद बाहर से झांक रहा है।

मैं हूं सर। आकू आकर सामने खड़ा हो गया।

आकू ?

जी हां। आकू दरवाजे के पलड़े को पकड़े उसी पर मुख रखकर बोला, पाठशाला कहां लगेगी सर ?

पाठशाला ?

हां।

सीताराम चुप्पी साधे रहा। भला क्या जवाब दे वह ? पाठशाला लगेगी नहीं—यह वाक्य उसके मुख से निकलना ही नहीं चाहता।

आकू बोला, मैं सर, आपकी पाठशाला के सिवा और कहीं नहीं पढ़ूंगा। कहीं नहीं।

बैठो, यहीं बैठ जाओ।

आकू बैठा। एक बार किताब खोली, फिर उठकर पंडित के बगल में आकर बैठ गया। मैदे की लेई ले आऊं ? लेई से चिपका क्यों नहीं देते। ले आऊं लेई ?

ला सकोगे ?

जी हां। बिल्कुल ले आऊंगा।

बाबुओं की कोठी में धीराबाबू की मां से कहना, पंडित ने जरा मैदे की लेई और थोड़ा-सा लत्ता मांगा है।

आकू चला गया। भागता हुआ। ब्लैकबोर्ड के टूटे जोड़ पर एक कील ठोकनी है। बस काम चल जायेगा। रस्सी से बांधने से भी चल सकता है। सीताराम एक कील ढूंढता फिरता रहा।

कौन ? यह क्या, आप ?

आकू की मां आकर खड़ी थी।

आकू की मां बड़ी ही भली और अनोखी है। बेटे को लाड़ देकर चौपट करने की अशेष योग्यता के साथ और भी एक दुर्लभ योग्यता उनमें है। दुनिया के लोगों को सुदुर्लभ प्यार करना जानती हैं; उसका स्वभाव मानो एक मधु की हांडी हो और कहानी के मधुदादा के दिए हुए अक्षय भांड की तरह कभी न खत्म होने वाली। वह अद्भुत मीठा रस जिसकी जीभ पर वह डालना शुरू कर देती हैं उसे अन्त तक वह हलका बनाकर छोड़ देती हैं। आकू की मां के हाथ में एक कटोरी में थोड़ी-सी मैदे की लेई और थोड़ा-सा लत्ता है। आकू की मां हंसकर बोली, वह कहां है ?

आकू देबू के घर के अन्दर गया है, जरा लेई और—

नौ

अगले दिन भी वह लाठी, छाता और लालटेन हाथों में लेकर सवेरे रत्नहाटा गया। बुझे दिल से आकर ही वह श्यामू-देवू को पढ़ाने बैठ गया।

कुछ दिन हुए श्यामू बड़े स्कूल में भरती हो गया है। देवू अब भी घर ही में पढ़ता है। दस बजे उनको छुट्टी देकर सीताराम ने एक ठंडी साँस ली। नहाने की कोई जल्दी नहीं। पाठशाला बन्द है। आँखों में आँसू आ गए, आँसू छिपाने के लिए ही वह तख्तपोश पर लेट गया। कुछ देर बाद ही उठकर बैठ गया। किसी भी तरह से उसे शान्ति नहीं मिल रही है। अचानक मन में क्या आया कि टूटी हुई घड़ी को दीवार की एक कील से लटकाकर उसको चलाने की, कोशिश में जुट गया। एक बार दाहिने सरका कर फिर जरा-सा बाएँ ठेलकर दीवार और घड़ी की पीठ के बीच एक कागज ठूँस पेंडलम डुलाकर आवाज सुनने लगा है। हाँ, अब आवाज कुछ-कुछ ठीक आने लगी है। बहुत देर तक वह घड़ी की ओर ताकता रहा। चल रही है घड़ी। फिर फटे हुए मैप को लेकर बैठ गया। जरा मैदे की लेई चाहिए और थोड़ा-सा बारीक कपड़े का टुकड़ा। फिर यह भी दुरुस्त हो जाएगा।

पंडित!

कौन?

शिशु कक्षा के एक बच्चे को गोद में लेकर उसकी विधवा माँ आई है। जरा इसकी नाड़ी तो देख लो पंडित! कल रात से बुखार है। तुमको बिना दिखाये हम लोगों का काम नहीं चलता बेटा। देख लो एक बार।

इन कई वर्षों में सीताराम ने इस एक विद्या पर भी अधिकार प्राप्त कर लिया है। नाड़ी देखना सीख लिया है उसने। कफ पित्त-वायु आदि के आधिक्य-दोष का भी निर्णय वह कर सकता है।

देखें? दाहिना हाथ। दाहिना हाथ कौन-सा है जी? अंय? जिस हाथ से खाना खाते हो। वाह! बायाँ हाथ लड़के की कोहनी के नीचे रख दाहिने हाथ से उसने नाड़ी दबायी।

बुखार तो काफी है—अन्दाजन एक सौ एक होगा। दो दिन लगेंगे। पित्त-दोष हुआ है जी।

लड़के ने कहा, पाठशाला क्या नहीं लगेगी मास्सा?

मलिन हँसी हँसते हुए पंडित बोला, लगेगी क्यों नहीं। पहले चंगे हो जाओ, फिर चलकर आ जाना।

मुझे टिफन का घंटा बजाने देंगे मास्सा?

दूँगा। तुम ही घंटा बजाओगे। सिर और पीठ पर हाथ फेरकर मास्टर ने

प्राणरस से वह संजीवित हो उठा।

कन्हाईराय ने आकर कहा, महाशो, खाना खाओ। घर में रसोइया परेशान हो रहा है। कब तक खाना लेकर बैठा रहेगा ? फिर कमरे में घुस मंच मरम्मत करना देख मुँह टेढ़ा कर उपेक्षा की पीक थूकते हुए बोला, फिर यह सब लेकर बैठ गये हो ? तुम्हें कभी भी अविकल नहीं नसीब होगी।

सीताराम ने जवाब नहीं दिया।

राय इस बार काफी विज्ञ की मुद्रा में, स्वर में संजीदापन लाकर बोला, माँ ने जो कुछ कहा है, वही करो सीताराम। भला होगा। उसे जमींदारी के काम में डालकर कन्हाई राय को कौन-सी सुविधा होगी, उसी को मालूम। शायद उनसे प्यार है। या सोचता है, सीताराम के नायब हो जाने पर उसके अधिकार बढ़ जायेंगे; वही तो उसे इस घर में लाया है या शायद और कोई बात हो। सीताराम सोचकर कुछ भी तय नहीं कर सका।

जवाब न मिलने से कन्हाई राय क्षुब्ध हुआ, बोला, फिर एक दिन आकर फाड़ दूँगा।

जवाब दिया बाकू ने। बोला, फिर लेई से लसे से चिपकाऊंगा, है न सर ? फिर अगर फाड़ दें तो फिर हम लोग जोड़ लेंगे, है न भाई ? इस बार उसने अपने साथियों से कहा।

वे सभी बोले, हाँ।

कन्हाई राय बोले, ऐसा ही करो। फटी कथरी की तरह सिलाई करो, सिलाई ही करते रहो। सिलाई ही करते रहो।

●●

कन्हाई राय सचमुच दुखी हुआ था। सीताराम से उसे प्यार है और उस पर एक अधिकार का दावा भी वह मन-ही-मन पोषण करता है। वह दावा उसके गोपन दावे में परिणत हो चुका है। उसे प्रकट करने का उसे साहस नहीं होता। पहले दिन जिस रोज सीताराम इस कोठी में आया था और माता जी ने उसके बैठने के लिए आसन देने को कहा था और मुँह से कहा था, तुम हो इस घर के लड़कों के शिक्षा-गुरु, उसी दिन उसी क्षण से शायद वह अपने दावे को ससंकोच गोपन करने को मजबूर हो गया था। उसके बाद से ये कई साल वह देख रहा है, सीताराम और उसके बीच का पार्थक्य बढ़ता ही जा रहा है। सीताराम की बातचीत, हँसी-मज़ाक सभी अलग किस्म के हैं। फिर सीताराम के साथ कलह-बेसह करने का भी कोई अवकाश नहीं। सीताराम उसकी उपेक्षा नहीं करता। सीताराम के कामकाज के प्रसंग में कोई तर्क छेड़ने का उसे कोई मौका नहीं। मन-ही-मन वह क्लेश सहता था। इसलिए आज जब माँ ने उसे जमींदारी सरिश्तेखाने में काम करने के लिए बताया तो यही सोचकर वह खुश हुआ कि सीताराम उसकी पहुँच में आ जाएगा। चाहे नायब क्यों न बन जाये, कन्हाई राय की सलाह उसे लेनी पड़ेगी। इसलिए यहीं वह ठंडा नहीं पड़ गया। तिरहट

को सीताराम के घर जाकर किसान-वहू की मार्फत मनोरमा को वह अपना सत्परामर्श दे भी आया। सीताराम के पंडित-दादा से बताया। चन्द बड़े-बूढ़ों से भी।

"सीताराम को तुम लोग समझाओ। तुम्हारा अपना आदमी है। इसमें भलाई है छोकरे की। इसके अलावा, तुम लोगों का अपना आदमी अगर नायव वन जाय, तो मान लो तुम्हीं लोगों की सहूलियत होगी।"

बात सभी को जँच गई। कन्हाई राय जैसा ही गुप्त और अज्ञात क्षोभ सभी लोगों में था। अचानक घर का एक लड़का भगवा वस्त्र पहन कर ब्रह्मचारी वन बैठे तो जैसी उलझन आदमी महसूस करता है वैसी उलझन ही सब लोग महसूस करते थे।

रात को घर लौटते ही किसान-वहू ने शुरू कर दिया, मैं कहूं, अजी मालिक जी !

टूटेफूटे सामान को जोड़जाड़ कर सीताराम का मन आज बड़ा प्रसन्न था। कन्हाई राय ने कहा था, फटी कंथरी सिलने की तरह सीताराम जोड़जाड़ रहा है। हां जोड़ा है उसने, जोड़ने का दाग भी मौजूद है और रहेगा भी, लेकिन निर्जीव प्राणशून्य कंथरी की जोड़ाई उसने नहीं की है। मनुष्य की देह में चोट लगती है, मांस कट जाता है, हड्डी टूट जाती, उसकी जोड़ाई करने पर भी दाग रह जाता है, लेकिन दाग रह जाने पर भी वह अंग-प्रत्यंग फिर से कार्यक्षम हो जाता है, वह पुष्ट होता है, वढ़ता है। यह जोड़ाई उसकी वह जोड़ाई है। फिर से उसकी पाठशाला लगेगी, पाठशाला वड़ी होगी, पांच से दस, दस से पन्द्रह, वीस-पच्चीस लड़के हो जाएंगे। वह पढ़ाएगा—

"स्वदेशे पूज्यते राजा विद्वान् सर्वत्र पूज्यते।"

किसान-वहू फिर वोल पड़ी, अजी ओ मालिक जी ! सुन-उन पा रहे हो कि कान-वान से ऊँचा-सूँचा सुनने लग गए ?

सीताराम ने हँसकर कहा, व्यक्त करो, क्या वक्तव्य है तुम्हारा ?

यह लो। ये सटर-पटर वातें हमारी समझ-अमझ में नहीं आतीं।

मैं कह रहा हूं, आप क्या कह रही हैं, कहिए।

मैं कहती, वावू लोग तुमको नायव-सायव वनाना चाहते हैं, तो तुम लेना-एना नहीं चाहते, ऐसा क्यों कहते हो ?

सो तुम नहीं समझोगी। तुम्हारे मस्तिष्क में वह प्रवेश नहीं करेगा।

मनोरमा हँसकर सविनय वोली, तुम पंडित मनही हो, समझाकर वताओगे तो क्यों नहीं समझ पाऊँगी ? समझाकर वताओ।

सीताराम ने उसके मुख की ओर विस्मय से देखा। मनोरमा तो ऐसी नहीं। वह मामूली पाठशाला का पंडित है, लेकिन मनोरमा उसको संसार का सबसे बड़ा पंडित समझती है। इसी गर्व से मनोरमा के पैर जमीन पर नहीं पड़ते। सीताराम जो कुछ कहता है वही उनके लिए ध्रुव सत्य है। तो फिर ? आज

मानो मनोरमा की बातों में एक नया स्वर ध्वनित हो रहा है।

मनोरमा बोली, पाठशाला के पंडित से नायब बाबू बनोगे, चपरासी, लगदी, परजा सभी लोग परनाम करेंगे, खातिर करेंगे; गाँव में तुम्हारी कितनी इज्जत होगी! पकड़ लाओ फलां को, वह हाथ जोड़ सामने आ खड़ा हो जाएगा। नवान्न-लक्ष्मी के त्योहार में लोग लोटा भर-भर के दूध दे जाएंगे; बेटी के ब्याह के वक्त चन्दा माँगना, लोग चन्दा देंगे।

किसान-बहू ने कहा, जमीन-असीन के पानी-आनी के बारे में नाफिकर। कोई भी मेड़-एड के आस-पास से नहीं फटकेगा। घर में लेटे मजे से कान में तेल डालकर सोते रहो, हाँ।

मनोरमा बोलती रही, षष्ठी पूजा में पुरोहित आकर पहले पूजा कर जाएगा, लक्ष्मी पूजा नवान्न में देवताओं का भोग हमारा ही पहले चढ़ेगा। पुरोहित-बूढ़ा कहेगा, नायब की घरवाली की पूजा भई पहले निबटा दूँ, ठहरो जी।

सीताराम एक लम्बी साँस लेकर हँसा, बोला नहीं।

●●

सवेरे ही पंडित दादा से भेंट हो गई। शान्त उस व्यक्ति ने कहा, कल रात तुम्हारे पास गया नहीं। कन्हाई राय आया था। बता रहा था—

सीताराम बोल पड़ा, नहीं दादा, मुझसे वह नहीं होगा।

पंडितदादा खुद पाठशाला का पंडित है, वसूली-उगाही के वक्त जमींदार के सरिश्ते में भी जा बैठता है। शुरू-शुरू में जब वह बैठता था तब उसका मन भी विरूप हो उठता था, लेकिन फिर भी उसको जाना पड़ता था। बारहद्वारी कालीतला में पाठशाला लगती है, जमींदार ही उसका मालिक है क्योंकि वह पुजारी है, इसी मजबूरी में गुमाश्ता उसको वसूली के हिसाब-किताब में सहायता करने के लिए बुलवाता था। और गाँव के लोग भी इसे पसन्द करते थे, वे विश्वास करते थे, उन्हीं के गाँव के लड़के की लेखा में कोई मारपेच नहीं होगी। पंडितदादा सीताराम की वितृष्णा को समझ सका, वह जरा चुप किए रहा, फिर बोला, हाँ। पंडिताई करने के बाद यह सब अच्छा नहीं लगता। फिर बड़ा ही पाजी काम है, दस लोगों के साथ हँगामा, वह होकर रहेगा। खैर, तो अच्छा ही है। लेकिन—

फिर एक बार पंडितदादा थमक गया फिर बोला, लेकिन पुलिस ने जब एक बार हँगामा कर डाला, तो—फिर क्या पाठशाला करना ठीक होगा?

सीताराम बोला, देखें।

तो मैं तो चला जाऊँगा। श्वसुर ने कहा है—बूढ़ा हो गया हूँ, अब देखभाल कर लो। तो तू गाँव में मेरी ही पाठशाला लेकर क्यों नहीं बैठ जाता? पंडित दादा को ससुराल की जायदाद मिल रही है। वहीं जाएँगे।

सीताराम बोला, अपने मंझले भाई को तुम पाठशाला में बिठा दो। मैं

को सीताराम के घर जाकर किसान-बहू की मार्फत मनोरमा को वह अपना सत्परामर्श दे भी आया। सीताराम के पंडित-दादा से बताया। चन्द बड़े-बूढ़ों से भी।

"सीताराम को तुम लोग समझाओ। तुम्हारा अपना आदमी है। इसमें भलाई है छोकरे की। इसके अलावा, तुम लोगों का अपना आदमी अगर नायब बन जाय, तो मान लो तुम्हीं लोगों की सहूलियत होगी।"

बात सभी को जँच गई। कन्हाई राय जैसा ही गुप्त और अज्ञात क्षोभ सभी लोगों में था। अचानक घर का एक लड़का भगवा वस्त्र पहन कर ब्रह्मचारी बन बैठे तो जैसी उलझन आदमी महसूस करता है वैसी उलझन ही सब लोग महसूस करते थे।

रात को घर लौटते ही किसान-बहू ने शुरू कर दिया, मैं कहूँ, अजी मालिक जी!

टूटेफूटे सामान को जोड़जाड़ कर सीताराम का मन आज बड़ा प्रसन्न था। कन्हाई राय ने कहा था, फटी कंथरी सिलने की तरह सीताराम जोड़जाड़ रहा है। हां जोड़ा है उसने, जोड़ने का दाग भी मौजूद है और रहेगा भी,लेकिन निर्जीव प्राणशून्य कंथरी की जोड़ाई उसने नहीं की है। मनुष्य की देह में चोट लगती है, मांस कट जाता है, हड्डी टूट जाती, उसकी जोड़ाई करने पर भी दाग रह जाता है, लेकिन दाग रह जाने पर भी वह अंग-प्रत्यंग फिर से कार्यक्षम हो जाता है, वह पुष्ट होता है, बढ़ता है। यह जोड़ाई उसकी वह जोड़ाई है। फिर से उसकी पाठशाला लगेगी, पाठशाला बड़ी होगी, पांच से दस, दस से पन्द्रह, बीस-पच्चीस लड़के हो जाएंगे। वह पढ़ाएगा—

"स्वदेशे पूज्यते राजा विद्वान् सर्वत्र पूज्यते।"

किसान-बहू फिर बोल पड़ी, अजी ओ मालिक जी! सुन-उन पा रहे हो कि कान-वान से ऊँचा-सूंचा सुनने लग गए?

सीताराम ने हँसकर कहा, व्यक्त करो, क्या वक्तव्य है तुम्हारा?

यह लो। ये सटर-पटर बातें हमारी समझ-अमझ में नहीं आतीं।

मैं कह रहा हूं, आप क्या कह रही हैं, कहिए।

मैं कहती, बाबू लोग तुमको नायब-सायब बनाना चाहते हैं, तो तुम लेना-एना नहीं चाहते, ऐसा क्यों कहते हो?

सो तुम नहीं समझोगी। तुम्हारे मस्तिष्क में वह प्रवेश नहीं करेगा।

मनोरमा हँसकर सविनय बोली, तुम पंडित मनही हो, समझाकर बताओगे तो क्यों नहीं समझ पाऊँगी? समझाकर बताओ।

सीताराम ने उसके मुख की ओर विस्मय से देखा। मनोरमा तो ऐसी नहीं। वह मामूली पाठशाला का पंडित है, लेकिन मनोरमा उसको संसार का सबसे बड़ा पंडित समझती है। इसी गर्व से मनोरमा के पैर जमीन पर नहीं पड़ते। सीताराम जो कुछ कहता है वही उसके लिए ध्रुव सत्य है। तो फिर? आज

सन्तोष कर लिया है। गाँव छोड़कर रत्नहाटा में पाठशाला खोली है, उसका कारण यह है कि इस गाँव से रत्नहाटा के समाज में मर्यादा कहीं अधिक है। शिक्षितों का समाज, मर्यादाशील वित्तमानों का समाज है रत्नहाटा। इसके अलावा, उससे उसके परदेश में नौकरी करने की साध आंशिक रूप से तृप्त होती है। सवेरे उठकर जाता है, रात दस बजे लौटता है, सप्ताह में सोमवार से शनिवार—ये छह दिन वह गाँव वालों के लिए परदेशी के समान ही है। उनके साथ रविवार को मुलाकात होती है। रविवार दोपहर को गाँव की बैठक में जा बैठता है, रत्नहाटा की बातें सुनाता है। अपने जमींदार की कोठी की बातें, रीति-रिवाज की बातें, उनके अभिजात सुलभ मर्यादाज्ञान की बातें करता है, मणिबाबू के बारे में बताता है,-बड़े स्कूल की खबरें सुनाता है, वहाँ के समाज में देश-देशान्तर के जो समाचार आते हैं, वह सब भी सुनाता है। वे थोड़ा-बहुत विस्मित जरूर होते हैं। मुग्ध होकर सुनते हैं। फिर बाजार-भाव की बातें भी करता, शनिवार शाम तक धान-चावल का सही भाव उनको बताता है, उन लोगों के काम आता है। फिर वह सूचना देता है कि रत्नहाटा में इस बार मोटरगाड़ी आ रही है, बड़े स्कूल के संस्थापक बड़े बाबू लोगों ने अब की बार कलकत्ते में मोटरकार खरीद ली है, चन्द दिनों में ही आ रही है। और भी बताता है, शिवकिंकर जैसे बाबुओं के लड़कों के साथ अपने विरोध के बारे में। कहता, मैं ऐसे बाबुओं की परवाह नहीं करता। इन्हीं सब बातों में उसकी परदेश में नौकरी की आकांक्षा थोड़ी-बहुत पूरी हो जाती।

इसके अलावा इतने दिन रत्नहाटा में पाठशाला करने के बाद एक आकर्षण और पैदा हो गया है। आज कई वर्षों से वह पाठशाला कर रहा है। रत्नहाटा के लड़कों से उसे प्रेम हो गया है। जिन सब गृहस्थों के लड़के पढ़ते हैं उनके साथ भी उसका एक घनिष्ठ प्रेम का सम्बन्ध बन गया है। शुरू में उसने सुनारों और केवटों के लड़के लेकर पाठशाला खोली थी—कुछ-कुछ जिद्द के मारे ही। बड़े स्कूल के हेडमास्टर ने हँसी में ही उसे कहा था, उनको लेकर पाठशाला करने पर पुण्य होगा—अज्ञान के अन्धकार से प्रकाश में लाने का पुण्य होगा। उसी बात पर उसने जिद्द के मारे उन्हीं को लेकर ही पाठशाला खोली थी, साथ-ही-साथ उसने यह भी आशा की थी कि इनके लड़कों को, जिनको बड़े स्कूल के मास्टर उपेक्षा करते हैं, उन्हीं को कृती बनाकर वह अपनी शिक्षकता का कृतित्व प्रतिष्ठित करेगा। जी-जान लगाकर पढ़ाएगा वह। साल-दर-साल इन्हीं के लड़कों को वह वृत्ति दिलाएगा। अपने ही मन में वह इसका दृष्टान्त ढूँढ लेता। नार्मल स्कूल में पढ़ते समय उसने शिक्षकों से पंडित वोपदेव के सम्बन्ध में प्रचलित कहानी सुनी थी। वोपदेव के शिक्षक उनके बारे में निराश होकर बोले थे, उसका कुछ भी नहीं होगा। वोपदेव मन के दुःख से देशत्याग कर चल पड़े थे। रास्ते में वे विश्राम के लिए एक सरोवर के पक्के घाट पर बैठ गए थे। वहाँ उन्होंने देखा, पत्थर काट-काट कर छोटे-छोटे कटोरों के आकार के गड्ढे बनाए

देखूंगा, वहीं—उसी रत्नहाटा में ही देखूंगा ! दादा, मना मत करो तुम । उस पर जिद्द सवार है; वह देख कर रहेगा ।

दादा बोला, यह तेरी झक है । यह भी पाठशाला है और वह भी पाठशाला है । यहाँ अगर तू बेखटके रह सके, घर-बाहर दोनों ही देख सके तो उस पाठशाला पर तेरा ऐसा झुकाव क्यों है ?

इस बात का जवाब सीताराम ने नहीं दिया ।

●●

दस

सीताराम ने दादा की बात का जवाब नहीं दिया । रत्नहाटा की सन्दीपन पाठशाला पर उसकी अजीब ममता है । पुश्तैनी घर के प्रति मनुष्य का जैसा आकर्षण होता है, वैसा ही प्रबल है उसका यह आकर्षण । बहुधा सोचा है, गांव ही में यदि 'सन्दीपन पाठशाला' नाम देकर पाठशाला खोल दे, तो यह सारा बवाल शायद मिट जाय । लेकिन नहीं । दिल में एक करक है । किसी तरह से भी मन को यह भाया नहीं । सन्दीपन पाठशाला अगर रत्नहाटा में ही नहीं रही तो फिर सन्दीपन पाठशाला किस बात की ? इस गांव की सन्दीपन पाठशाला के साथ धीराबाबू, मणिबाबू—इन लोगों का सम्पर्क नहीं रह जाएगा ।

जीवन में उसकी आकांक्षा थी, नार्मल पास कर शिक्षकता की नौकरी लेकर वह परदेश जाएगा । वहीं घर लेगा, मनोरमा को ले जाएगा । शिक्षित समाज में स्थान मिलेगा, कितने ही महान लोगों से परिचय का सौभाग्य प्राप्त होगा, उन लोगों की सोहबत में कितनी ही नयी शिक्षाएँ मिलेंगी । छुट्टियों में सपरिवार गांव लौट आएगा । गांव के लोग भी उससे मिलने आएँगे, हँसमुख कुशल-मंगल पूछेंगे । बड़े-बूढ़ों को वह प्रणाम करेगा, मित्रों को आलिंगन में बांध लेगा, कनिष्ठों को सस्नेह आशीर्वाद देगा । गुरुजन का आशीर्वाद, मित्रों का प्रेम-सम्भाषण, कनिष्ठों का प्रणाम—सभी कुछ में और भी कुछ रहेगा; मनुष्य के जीवन में वही शायद श्रेष्ठ काम्य है । रहेगा आदरमिश्रित विस्मय । बड़े-बूढ़े कहेंगे, हाँ, तुमने हम लोगों का मुख उज्ज्वल किया है । लड़कों से कहेंगे, देखो, सीताराम को देखकर सीखो । मित्रों के प्रति सम्भाषण में भी स्वीकृति रहेगी, हाँ भाई तुम हम लोगों में श्रेष्ठ हो । कनिष्ठों के प्रणाम में अनकही कामना होगी, आशीर्वाद करो, हम लोग भी तुम जैसे बन सकें ।

वह आशा उसकी आकाश-कुसुम में परिणत हो चुकी है । भाग्य तो है ही, लेकिन अपनी अक्षमता को भी वह स्वीकारता है । इसीलिए तो उसने जीवन में अपनी सामर्थ्य और योग्यता के अनुरूप पाठशाला के पंडित का पद लेकर ही

और एक मछली देकर निर्लज्ज हास्य मुख पर लिये खड़ा हो गया।

सीताराम बोला, क्या है रे?

लड़के का बाप दुकड़ि भी आया था, उसने कहा, पंडित जी, आज से बेटे को पुश्तैनी पेशे में लगा दिया।

और पढ़ेगा नहीं?

नहीं, सिर खुजलाते हुए दुकड़ि ने कहा, हमारे लड़के पढ़-लिखकर क्या करेंगे भला? क के पीछे ख लिखना सीख गया है, यही तो काफी है। जल-करके समरे पर दस्तखत कर सकेगा, पढ़ के देख-सुन लेगा, बस इतना ही काफी है।

केवटों की पढ़ाई और शिक्षा के लिए इस मामूली कोशिश के पीछे शौक के साथ-साथ इसका भी तकाजा है। शरीफ लोगों में वे पोखर-तालाब ठेके पर लेते हैं, जमींदार से नदी के जलकर का ठेका लेते हैं। पहले यह कारोबार निपट विश्वास पर चलता था। जुबानी बातें हो जाती थीं, वे जाकर मालगुजारी का रुपया दे आते थे, एक से बीस तक गिन सकते थे—एक कोड़ी, दो कोड़ी, रुपयों की गड्डी लगाकर, जलकर मालिक के पैरों की धूल लेकर चले आते थे। अब दर्रा बदल चुका है। अब मुंहजबानी कोई बन्दोबस्त नहीं हो पाता, दस्तावेज—'डेमी' कागज पर दो प्रतियाँ बनती हैं, रुपया देकर रसीद लेनी पड़ती है। सो भी पहले वे अंगूठे की छाप रसीद लेकर चले आते थे सरल विश्वास से, लेकिन ज्यों-ज्यों वक्त बीतता जा रहा है त्यों-त्यों गड़बड़ियाँ बढ़ती जा रही हैं। आजकल समरे दस्तावेज में गलतियाँ निकल आ रही हैं, कई मामलों में उनके रुपए पानी में गये। इसलिए नाम-दस्तखत करने और दस्तावेज पढ़ सकने लायक शिक्षा मात्र ही वे चाहते हैं, उससे अधिक नहीं। इससे सीताराम की पाठशाला को खास कोई नुकसान नहीं होता। एक साल और पढ़ लेने पर उसे सालभर की फीस और मिल गई होती। वह नहीं मिलती, इतना भर ही नुकसान है। लेकिन सीताराम उस लाभ-हानि का हिसाब नहीं लगाता। वह उनसे प्यार करता है इसलिए वह चाहता है, उनमें से एक भी प्रकृत शिक्षा पावे, क के पीछे ख लिखना सीख जाना ही पर्याप्त शिक्षा नहीं है—यही बात वह उन लोगों को समझाना चाहता है कम-से-कम एक लड़के को शिक्षित बनाकर। उसने सुना है, संथाल लोग ईसाई बन पढ़-लिखकर डिप्टी बन गये हैं। सुना है, ये लोग जो छोटी जात के रूप में परिचित हैं, पढ़-लिख लेने पर ही गवर्नमेंट की नौकरी पा जाते हैं, किसी तरह से एक को भी अगर वह इस लायक बना सके तो उसकी आशा पूरी हो। शिवकिंकर ने कहा था, वही पहले दिन, किसान, किसान पंडित, कलवार छात्र, मछुए छात्र! हा हा करके हंसा था, उसके उस व्यंग का, उसकी उस हँसी का फिर तो योग्य जवाब मिल जाये।

रत्नहाटा की सन्दीपन पाठशाला वह किसी कदर छोड़ नहीं सकता, नायबी वह करेगा ही नहीं। नायबी! लोगों पर अत्याचार का काम है नायबी। मनुष्य को ठगने का काम है नायबी। नीच काम। वह यह काम नहीं करेगा। रत्नहाटा

गए हैं। वोपदेव ने सरोवर के मालिक को आशीर्वाद किया। वे दीर्घजीवी हों। सुविवेचक मालिक, ! गरीब पथिकों के खाने के लिए सुन्दर जगह बना रखी है ! जिनके पास थाली-कटोरी-गिलास नहीं है, वे अनायास इन पत्थर में खुदे आधारों में भोज्य को भिगोकर सान कर खा सकेंगे। किन्तु कुछ देर बाद ही उनका भ्रम टूटा। उन्होंने देखा, नगर की नारियाँ आकर घड़ों में जल भर उन गढ़ों पर घड़ों को बिठा नहाने लग गई। तब वे समझ सके कि ये गढ़े मालिक ने नहीं बनवाए हैं, दिन-ब-दिन एक ही स्थान पर घड़े रखने के कारण घड़ों के घर्षण से वे गढ़े बन गए हैं। साथ-ही-साथ बिजली की तरह उनको लगा कि इस प्रकार के नियमित घिसने से अगर पत्थर भी खिया जाता है, तो उनकी बुद्धि कितनी भी स्थूल क्यों न हो उनके लगन के फलस्वरूप नियमित पाठाभ्यास से क्यों तीक्ष्ण नहीं होगी ? वहीं से वह दृढ़ संकल्प लेकर लौटे। उसी के फलस्वरूप वोपदेव भारत-विख्यात पंडित मुग्धबोध प्रणेता वोपदेव बने।

यह कहानी ध्यान में रखकर उनको कृती छात्र बनाने के लिए वह परिश्रम करने लगा था। छात्रों में कोई भी कृती नहीं बन सका, उसकी आशा सफल नहीं हो सकी। किन्तु दूसरी ओर उन लड़कों से और अभिभावकों से वह विचित्र ढंग से प्यार के बन्धन में बँध गया है। वे उससे प्यार करते हैं, कितना-भर प्यार करते हैं, इसका हिसाब वह नहीं लगाता। लेकिन अपने प्यार का परिमाण वह जानता है। वे उसको दस्तावेज लिखाने, अर्जी लिखाने को बुलाते हैं, हारी-बीमारी पर नाड़ी देखने बुलाते हैं, रेशम-पशम के कपड़े रफूगिरी के लिए देते हैं—उसमें स्वार्थ भी है, प्यार भी है। यह प्रगट होता है उनके सादर सम्भाषण में, नवान्न लक्ष्मीपूजा में भेजे हुए उनके मिष्ठान में। केवट लोग मिठाई नहीं भेजते, कभी-कभी ताजा मछली या साग-सब्जी देकर अपना प्यार जता जाते हैं। सीताराम का यह प्यार एक चरम परिणति प्राप्त कर चुका है। उसकी साध, उसकी आकांक्षा है कि उनके लड़कों में कम-से-कम एक को भी पढ़ाई का आस्वाद चखा कर शिक्षित मनुष्य बना डालेगा !

साहा-स्वर्णकार के लड़के पढ़ते हैं कि थोड़ा-बहुत पढ़-लिख लेना चाहिए, अनपढ़ रहना लज्जा की बात है। इसलिए पाठशाला की पढ़ाई खत्म कर बड़े स्कूल में चन्द क्लास किसी तरह पारकर, पढ़ाई छोड़ अपने-अपने धन्धे में लग जाते हैं। केवट के लड़कों की पढ़ाई पाठशाला में ही खत्म हो जाती है। बिल्कुल शौकिया मामला है। पाठशाला की पढ़ाई भी खत्म नहीं कर पाते। बारह-तेरह साल का होते ही हल-बैल और खेती लेकर जुट जाते हैं—जो लोग मछुए केवट होते हैं वे कन्धों पर जाल लादे मछली पकड़ने के धन्धे में लग जाते हैं।

अभी उसी दिन की तो बात है, टुकड़ि मछुए के बेटे ने पाठशाला छोड़ दी। लड़का कोई बुरा नहीं था। एक साल और पढ़ लेता तो पाठशाला की पढ़ाई पूरी हो गई होती। अचानक सिर पर जाल लादे आकर उसने प्रणाम किया

और एक मछली देकर निर्लज्ज हास्य मुख पर लिये खड़ा हो गया।

सीताराम बोला, क्या है रे?

लड़के का बाप दुकड़ि भी आया था, उसने कहा, पंडित जी, आज से बेटे को पुश्तैनी पेशे में लगा दिया।

और पढ़ेगा नहीं?

नहीं, सिर खुजलाते हुए दुकड़ि ने कहा, हमारे लड़के पढ़-लिखकर क्या करेंगे भला? क के पीछे ख लिखना सीख गया है, यही तो काफी है। जल-करके खसरे पर दस्तखत कर सकेगा, पढ के देख-सुन लेगा, बस इतना ही काफी है।

केवटों की पढ़ाई और शिक्षा के लिए इस मामूली कोशिश के पीछे शौक के साथ-साथ इसका भी तकाजा है। शरीफ लोगों से वे पोखर-तालाब ठेके पर लेते हैं, जमींदार से नदी के जलकर का ठेका लेते हैं। पहले यह कारोबार निपट विश्वास पर चलता था। जुबानी बातें हो जाती थीं, वे जाकर मालगुजारी का रुपया दे आते थे, एक से बीस तक गिन सकते थे—एक कोड़ी, दो कोड़ी, रुपयों की गड्डी लगाकर, जलकर मालिक के पैरों की धूल लेकर चले आते थे। अब ढर्रा बदल चुका है। अब मुंह जबानी कोई बन्दोबस्त नहीं हो पाता, दस्तावेज—'डेमी' कागज पर दो प्रतियाँ बनती हैं, रुपया देकर रसीद लेनी पड़ती है। सो भी पहले वे अंगूठे की छाप रसीद लेकर चले आते थे सरल विश्वास से, लेकिन ज्यों-ज्यों वक्त बीतता जा रहा है त्यों-त्यों गड़बड़ियाँ बढ़ती जा रही हैं। आजकल खसरे दस्तावेज में गलतियाँ निकल आ रही हैं, कई मामलों में उनके रुपए पानी में गये। इसलिए नाम-दस्तखत करने और दस्तावेज पढ सकने लायक शिक्षा मात्र ही वे चाहते हैं, उससे अधिक नहीं। इससे सीताराम की पाठशाला को खास कोई नुकसान नहीं होता। एक साल और पढ़ लेने पर उसे सालभर की फीस और मिल गई होती। वह नहीं मिलती, इतना भर ही नुकसान है। लेकिन सीताराम उस लाभ-हानि का हिसाब नहीं लगाता। वह उनसे प्यार करता है इसलिए वह चाहता है, उनमें से एक भी प्रकृत शिक्षा पावे, क के पीछे ख लिखना सीख जाना ही पर्याप्त शिक्षा नहीं है—यही बात वह उन लोगों को समझाना चाहता है कम-से-कम एक लड़के को शिक्षित बनाकर। उसने सुना है, संथाल लोग ईसाई बन पढ़-लिखकर डिप्टी बन गये हैं। सुना है, ये लोग जो छोटी जात के रूप में परिचित हैं, पढ़-लिख लेने पर ही गवर्नमेंट की नौकरी पा जाते हैं, किसी तरह से एक को भी अगर वह इस लायक बना सके तो उसकी आशा पूरी हो। शिवकिंकर ने कहा था, वही पहले दिन, किसान, किसान पंडित, कलवार छात्र, मछुए छात्र! हा हा करके हंसा था, उसके उस व्यंग का, उसकी उस हँसी का फिर तो योग्य जवाब मिल जाये।

रत्नहाटा की सन्दीपन पाठशाला वह किसी कदर छोड़ नहीं सकता, नायबी वह करेगा ही नहीं। नायबी! लोगों पर अत्याचार का काम है नायबी। मनुष्य

छोड़कर गाँव में पाठशाला खोलने पर भी उसे सन्तोष नहीं होगा।

सवेरे यथानियम वह रत्नहाटा जा रहा था। अचानक पीछे से एक बात कानों में आई—रत्नहाटा के पंडित-रत्न जा रहे हैं।

पीछे पलटकर उसने नहीं देखा फिर भी गले की आवाज से समझ सका कि यह बात उसीका दोस्त चंडी कह रहा है। चंडी अब गाँव में डाक्टर बनकर बैठा है। रत्नहाटा के दवाखाना में चन्द रोज वह कम्पाउंडर का असिस्टैंट बनकर काम करता रहा था, वहाँ खास कोई सुविधा न कर पाने से अब गाँव में आकर डाक्टर बन बैठा है। उसकी बात सुनकर सीताराम विषाद से मुस्कराया। चंडी को रत्नहाटा में ठाँव नहीं मिली इसलिए सीताराम से ईर्ष्या है, सीताराम को ठाँव मिल गई है।

किसी दूसरे ने कहा, लेकिन भाई, घपले से चला तो रहा है।

चंडी बोला, घपला तो पुलिस साहब ने पकड़ ही डाला है। अब पाठशाला करने से तो रहा।

सीताराम जरा तेज कदम चलकर गाँव से निकल आया।

••

लेकिन पाठशाला खोलेगा भी तो कहाँ?—यही चिन्ता उसे व्याकुल करती रही। बाबुओं की कचहरी का बरामदा उसे मिल सकता है। लेकिन यहाँ पाठशाला करने का मन नहीं करता उसका। वह उपपद तत्पुरुष, वह मध्यपद-लोपी—कन्हाई राय, टिपंका नायब हजार बातें करेंगे, मजाक-मखौल उड़ाएंगे, लड़कों को घुड़केंगे, लड़कों के शोरगुल मचाने पर झुंझलाएंगे। लड़के भी वहाँ जाने में कुछ संकोच का अनुभव करते हैं, डरते हैं। उनकी हजार उदारता, असीम अनुग्रह, धीराबाबू का वैचित्र्य, माँ का मधुर स्नेह सबकुछ के बावजूद वह बाबुओं को अपना नहीं सोच पाता, उन पर अपने मन की विरूपता को वह किसी तरह से भी दूर नहीं कर पाता है। इसके अलावा रजनीबाबू ने उसे धीराबाबू के घर से सम्बन्ध छोड़ने को कहा ही है, सो हालाँकि वह नहीं छोड़ेगा, अकृतज्ञ वह नहीं बन सकता। लेकिन ऐसे क्षेत्र में, धीराबाबू के बैठकखाने में पाठशाला लगाना किसी तरह से भी उचित नहीं होगा। इसके अलावा वे सब हैं सिंह। सीताराम हँसता।

लेकिन जगह तो उसे कहीं नहीं मिलेगी। पुलिस के इस हँगामे के बाद उसको कोई भी किराए पर कमरा नहीं देगा। तो फिर?

वह ठिठक कर खड़ा हो गया। चेहरे पर मुस्कान उभर आई। दुखभरी मुस्कान। साथ-ही-साथ आँखों से आँसू भी आ गए। अपनी उधेड़-बुन में बाबुओं की कोठी न जाकर अन्यमनस्क ही पाठशाला-गृह के दरवाजे पर आ खड़ा हो गया है। दरवाजे के सिर पर साइन-बोर्ड अब भी झूल रहा है।

दीर्घनिःश्वास छोड़ वह लौट चला। फिर ठहर गया। रास्ते के इस ओर पाठशाला-गृह की विपरीत दिशा में एक पक्के चबूतरे वाले पीपल के नीचे लड़के

खेल रहे हैं। छायाघन पेड़ के नीचे छाया के कारण घास नहीं उगती। उसे अचानक ही शान्तिनिकेतन याद आ गया। शान्तिनिकेतन में आम के पेड़ की छाया में स्कूल लगता है। उसने देखा है। अनोखी शोभा है उसकी।

क्षणभर में उसका सारा अवसाद विला गया। यही वह पाठशाला लगाएगा। बरसात आने में अभी काफी देर है। वर्षा के समय यहीं वह छप्पर डालेगा। वह जानता है, यह जगह घीरावाबू के ताऊजाद दादा की है। यह वृक्ष उनकी माँ द्वारा प्रतिष्ठित वृक्ष है। घीरावाबू की माँ से कहकर इस पेड़ के तले की जमीन वह लगान पर बन्दोबस्त कर लेगा। जरूरत पड़े तो शर्त्त लिख देगा—प्रतिष्ठा किए हुए वृक्ष पर उसका कोई अधिकार नहीं रहेगा। पेड़ के तले पक्का चौरा बना ही हुआ है—थोड़ा-सा और पक्का करा लेगा, सामने पुरानी सन्दीपन पाठशाला के पास ही साहाटोला, सुनारटोला, केवटटोला है, जिनके लड़कों से उसका सरोकार है, उन्हीं के बीच यहीं इसी पेड़ के तले वह पाठशाला शुरू करेगा। उसने मन में निश्चय कर लिया।

●●

लेकिन इसमें भी बाधा आ पड़ी। घीरावाबू के ताऊजाद भाइयों ने पेड़ का तला दे दिया, सीताराम ने पाँच रुपया नमस्कारी के रूप में दिया, छप्पर बना कर लगान देने को भी राजी हो गया। बाधा उधर से नहीं आयी, बाधा दी—अष्टावक्र गोविन्द वैरागी ने, जाने कहाँ से सहसा आकर खड़ा हो गया।—यह मैं नहीं दूँगा। किसी तरह से भी नहीं।—यह जगह मेरी है।

गोविन्द जन्म से विकलांग है। हाथ-पैर टेढ़े-मेढ़े असमान, शरीर की बनावट अजीब है उसकी, एक पैर छोटा—एक पैर बड़ा, मुखड़े की शक्ल भी वैसी ही, नाक बैठी हुई—ठोड़ी दबी हुई। और उसका क्रोध भी बड़ा भयंकर! वह भीख माँग कर खाता है। किसी समय उस पेड़ के नीचे एक झोंपड़ी बनाकर वह रह चुका था। किसी से भी उसने अनुमति नहीं ली थी, इन लोगों ने भी अनुमति देने की कोई आवश्यकता नहीं समझी थी। कुछ दिन के बाद आँधी में वह झोपड़ी उड़ गई तब उसने ताड़ के पत्तों से छवाया था—लेकिन बरसात का पानी ताड़ के पत्तों से न रुक सका—वर्षा से वह घर गिर गया था। गोविन्द ने भी फिर घर बनाने की कोशिश नहीं की। इस जगह को छोड़ वह जिस-किसी के ओसारे-चबूतरे पर रहने लग गया है। वह आकर खड़ा हो गया—हाथ में लाठी लेकर—यह जगह मेरी है, सिर फोड़ दूँगा मैं। ज्यादा चालाकी करोगे तो मणिबाबू को बेच दूँगा। हाँ।

मणिबाबू का नाम सुनते ही सीताराम बौरा गया। उसने खप्प से गोविन्द का हाथ पकड़ लिया। बोला, मरोड़ कर तेरा हाथ मैं तोड़ दूँगा।

गोविन्द का शरीर विकृत है—मन भी शायद ऐसा ही हो। पैत्रिक पाप की सजा भुगतने के लिए ही उसका जन्म हुआ। दुरन्त है उसका क्रोध। क्रोध से विल्लाकर उसका हाथ दाँतों से काट लिया। कुछ देर में ही दाँतों से कुछ

मांस काट उसने मुख उठाया, उस वक्त उसके दांतों के दोनों ओर से खून चू रहा है। सीताराम के हाथ के घाव से भी झर-झर खुन झर रहा है। सीताराम दंग रह गया था।

गोविन्द खुद भी स्तम्भित हो गया अपने इस कांड से। वह मूढ़-सा आँखें फाड़-फाड़ कर देखने लगा। कन्हाई राय ने आकर उसे गर्दन से पकड़ा—हराम-जादे! राक्षस!

गोविन्द—वर्वर गोविन्द हतवाक हो गया है। वह देख रहा है—सीताराम के हाथ का खून। कन्हाई राय ने उसकी गर्दन पकड़ी तो वह बोल पड़ा—सही कहते हो, मैंने राक्षस जैसा ही काम किया है। मारो, तुम लोग मुझे मारो।

सीताराम बोला, नहीं। छोड़ दो कन्हाई काका। छोड़ दो। वेचारे ने यकवयक यह कर डाला है। मैं समझ गया हूं। छोड़ दो।

●●

गोविन्द वहुत देर तक हक्कावक्का-सा वना वैठा रहा। फिर वोला—मैं भिखमंगा हूं, वैष्णव हूं, यह जगह भी मेरी नहीं। लेकिन दूसरे की मंत्रणा से—।

वार-वार अफसोस से उसने सिर हिलाया। फिर हाथ जोड़ कर वोला—तुम वहां पाठशाला खोल लो भाई। गाली-गलौच कर डाला मैंने। छी छी छी! यह क्या कर डाला मैंने? वताओ भला। राधाकृष्ण! अव उसकी आंखों से आंसू टपकने लगे।

सीताराम ने उसको भी पाँच रुपये दिए। वोला, मैं दे रहा हूं तुमको। खुशी से दे रहा हूं।

गोविन्द ने रुपया लेकर कहा—तो भाई मेरे अंगूठे की एक छाप ले लो। और लिखपढ़ लो। वर्ना समझे न—मन है, मतिभ्रम भी हो सकता है। इस गांव को तो जानते हो! और—। भाई!

रुक-रुक कर संकोच से ही वह वोला,—एक छप्पर तो खड़ा करेगा ही सीताराम, वहां अगर रात को वह उसे सोने दे—तो वह दोनों हाथ उठाकर आशीर्वाद करेगा। इसके एवज में वह उसकी पाठशाला वुहारेगा। लड़कों के लिए घड़े में पानी भरके लाएगा।

—अच्छी वात। सीताराम हंसा।

●●

ग्यारह

पीपल तले सीताराम की पाठशाला लगी। घड़ी-मैप-वोर्ड यह सव असवाव कमरे में ही वन्द रहा। केवल पेड़ के तने पर खड़िया से लिख दिया—रत्नहाटा

सन्दीपन पाठशाला। केवल पाँच लड़के !

लोग आश्चर्य करने लगे। बहुतों ने कहा, यह आदमी पागल है। शायद पागल ही हूँ. सीताराम ने हँसकर कहा—पागल तुम सभी लोग हो। किसी-न-किसी पागलपन के न होने से वक्त कैसे कटेगा। धीराबाबू का जेल जाना पागलपन है, इस गाँव के अन्य बाबुओं में—किसी का है जमींदारी की रौब झाड़ने का पागलपन, शिवकिंकर का शराब पीना पागलपन है तो मेरा पागलपन है पाठशाला।

गोबिन्द वैरागी ने कहा—बहुत अच्छा कहा है सीताराम तुमने, बहुत अच्छा।

वह सवेरे ही आ गया है। खुद ही कहीं से झाड़ू लाकर झाड़ू-बुहारू लगाया है, घड़े भर पानी लाकर चारों ओर छिड़क दिया है, थोड़ा-सा गोबर भी कहीं से लाकर जमा किया है। पाठशाला खत्म होने पर वह जगह को लीप-पोत देगा।

बहुत खुश होकर सीताराम ने उसकी पीठ पर हाथ रखकर कहा था—इतनी मेहनत क्यों कर डाली तुमने बाँका चाँद ? अष्टावक्र गोविन्द को बहुत-से लोग बाँका चाँद कहकर पुकारते हैं। गोविन्द उस नाम से खुश होता है। गोविन्द बोला—कर डाली, अपनी खुशी।

—तुमने क्या वह बात याद कर रखी है गोविन्द ?

—जब कर ही डाली है तो बताओ उसे भूल कैसे जाऊँ ? लेकिन उस कारण मैंने नहीं किया। तुमको दाँतों से काटकर मैंने खून बहाया है, तुम चाहो तो सिर फोड़ दोगे। उसके लिए नहीं। समझे, ये कई रोज तुम्हारे बारे में जितना ही सोचता रहा उतना ही तुम अच्छे लगे। लोग चोरी करते, बुरे काम करते, लोगों को ठगते, मार-पीट करते, जाने क्या-क्या करते, और तुम इन बच्चों को पढ़ाओगे ! इसमें भी जाने क्या-क्या वारदात, कितने ही लोगों का रोष है। इस लिए, इसीलिए तुमसे प्यार कर बैठा।

हंसने लगा गोविन्द।

फिर बोला, छप्पर छवा लो तुम। मैं भी तुम्हारे यहाँ डेरा डालूँगा। समझे न, मैं भी तुम्हारी पाठशाला का एक जना बन जाऊंगा।

सीताराम अब दिल खोलकर हंसा, बोला, पढ़ोगे तुम ?

पढ़ा भी जा सकता है। आकू और मैं एक ही साथ पढ़ेंगे। मैं फास्टो, आकू सेकन। क्यों रे आकू ? लेकिन मैं पढ़ूंगा नहीं। मैं तुम्हारे स्कूल का सेकन मास्टर होऊँगा। घंटा बजाऊँगा—झाड़ू-बुहारू लगाऊँगा। तुम नहीं रहोगे तो इन बच्चियों को सम्भालूंगा, समझे।

ठीक ऐसे ही समय शिवकिंकर आकर रास्ते पर खड़ा हो गया। उसे ऐन वक्त पर खबर मिल गई है, सीताराम ने पाठशाला शुरू कर दी है। वह आकर रास्ते पर खड़ा हो गया। फिर हँस कर आकू को बुलाकर कहा, ऐ आकू !

क्या ? भवें सिकोड़ आकू जाकर खड़ा हो गया।

हाराधन के दस बेटों के बारे में जानता है न ?

जानता हूँ।

बता तो—'हाराधन का एक बेटा रोवे जार जार' इसके बाद वाली लाइन क्या है ?

"दुख के मारे बन गया रहा न कोई संसार।"

शिवकिंकर हँसते-हँसते चला गया। सीताराम ने कोई भी प्रतिवाद नहीं किया, चुपचाप बैठा रहा। अच्छी बात, उसके भी दिन आने दो, शिवकिंकर को एकदिन बुलवाकर लड़कों से वह कविता भी पढ़वा कर सुनवा देगा जिसमें हाराधन के दस बेटे वापस आ जाते हैं।

लेकिन मणिलालबाबू अब और बोलते नहीं। वह भी मणिलालबाबू को नमस्कार नहीं करता। सीधे सिर उठाए चला आता है।

अचानक धीराबाबू के नायब आकर खड़े हो गए; साथ में देवू।

सीताराम जरा चकित हुआ—फिर क्या बात हो गयी ? उसने पूछा, क्या है नायबबाबू ?

नायब बोले—माँ ने देवू को भेज दिया, तुम्हारी पाठशाला में भरती होगा।

—मेरी पाठशाला में ? सीताराम हैरान हो गया। यह कैसा सौभाग्य है उसका !

गोविन्द बोला—जय राधा-गोविन्द की। लो मास्टर—भरती कर लो।

उस दिन देवू पढ़ रहा था—

नहीं है हमारी कोठी पक्की
        नहीं है हमारा वित्त,
गर्व केवल इतना हमरा
        मरा नहीं है चित्त।
दिन मजूरी करता लेकर
        थकामांदा शरीर,
कुटिया ओर हूँ लपकता
        ले अकथ अकूत पीर।

सीताराम ने कहा, हाँ। तो क्या हुआ ? यह बातें किसने कहीं ? यह एक दरिद्र व्यक्ति कह रहा है याने गरीब आदमी, जिसके पास दालान, पक्की कोठी नहीं है। जिसके पास वित्त अर्थात् पर्याप्त धन-सम्पदा, याने ढ़ेर-सा रुपया-पैसा या सोना-दाना नहीं है, जो रोज मेहनत-मजदूरी करके खाता है, जिसके पैरों में जूते नहीं, बदन पर कुरता नहीं, दो जून पेट भर खाना जिसको मिलता नहीं, ऐसा ही एक आदमी कह रहा है, एक गरीब आदमी कह रहा है। कह रहा है—।

क्या कह रहा है, बताओ ?

देबू ने कहा, हम लोगों के पास पक्की कोठी नहीं है। हमारे पास रुपए-पैसे भी नहीं हैं। फिर भी हम लोगों का अहंकार है कि हमारा मन मर नहीं गया है।

सीताराम बोला, मन मर नहीं गया है, बताना तो कैसे ?

मुसीबत बस थाकू को लेकर। कोई भी बात लेकर फुसफुसाने लग पड़ा है। सभी लड़कों को चंचल बनाए दे रहा है। आजकल सीताराम थाकू को कठोरता से शासित नहीं कर पाता है। वह किसी तरह से भी भूल नहीं पाता थाकू की उस दिन की बातें, थाकू के उस दिन के काम।

यह न होता तो शायद ठीक इसी तरह से इतनी जल्द यह टूटी पाठशाला फिर खड़ी न हो सकी होती। वह जी-जान से कोशिश कर रहा है, ताकि थाकू का मन अच्छाइयों की ओर जाय, लिखाई-पढ़ाई में ध्यान दे। लेकिन वह किसी तरह से भी मुमकिन नहीं हो रहा है। उस दिन वह 'हलवाहा' नाम की एक कविता पढ़ा रहा था—'सब साधकों से बड़ा साधक है हमारे देश का हलवाहा।' उसने पूछा था, हलवाहा किसे कहते हैं ?

थाकू बोल पड़ा था, आप लोग मर।

गुस्से से दिमाग झनझना उठा था। जी में आया था कि संटी की मार से इस लड़के की पीठ लहूलुहान कर दे। लेकिन पुरानी प्रतिज्ञा का स्मरण कर उसने अपने को संभाल लिया था। फिर उसको समझाया था, जो आदमी हल जोत कर खाता है, अपने हाथ से हल चलाता है वही हलवाहा होता है। कौशल से प्रसंगवश उससे बताया था, वे जाति में सद्गोप हैं, सद्गोप लोग हल जोत कर खाते हैं इसलिए लोग उनको हलवाहा कहते हैं।

थाकू ने कहा था, गाँव के लोग कहते हैं, तुम लोगों का मास्टर हलवाहा है।

थाकू का कोई दोष नहीं। मणिलालबाबू का गाँव, शिवकिंकर का गाँव, भद्र सभ्य बाबुओं के गाँव रत्नहाटा की भाषा ही यही है और चाल भी।

किसी-किसी दिन बाहर आत्मसंवरण करने पर भी अन्तर के आक्रोश का दमन नहीं कर पाता है वह। उस दिन वह अपनी पूर्व प्रतिज्ञा की रक्षा नहीं कर पाता है। ज्यादातर ऐसी बात पाठशाला के समाप्त होने की ओर होती है, शरीर के थकान में एक-एक दिन वह बिल्कुल विक्षिप्त-सा हो उठता, अपने सिर के बाल नोचने की इच्छा होने लगती। सबकुछ भूल-भालकर वह उस वक्त निर्दय कौशल से छात्रों को सताता। कान के नीचे जुल्फी के बालों को निर्ममता से खींचता, दो उंगलियों के बीच पेन्सिल रखकर जोर से दबाता रहता, पेट का मांस चकोटता, अन्त में सामने के बाल मुट्ठी में दबा घसीट कर गर्दन को नीचे झुका देता और कई झटके देकर छोड़ देता। लड़कों को मारूँगा नहीं, यही सौगन्ध रख नहीं सका सीताराम। नहीं रख सकेगा। रखा नहीं जा सकता।

●●

दिन गुजरते हैं।

चन्द महीनों में ही उसने एक छप्पर खड़ा कर लिया। बांस और लकड़ी कुछ तो उसने अपने घर से मंगवायी और कुछ रानी मां ने दी। भरसक कम खर्च में ही बन गया। मजदूर का काम उसने खुद किया और साथ दिया लंगड़े गोविन्द ने। श्रीमान बांकाचांद ! अब नीचे भी पक्का बनाना है।

इसी बीच पाठशाला में कई लड़के बढ़ गये हैं। पांच लेकर शुरू हुई थी—उसके बाद देबू, फिर और पांच। लोगों का भय मानो कुछ घट गया है। कुछ दिन पहले गोविन्द ने ही उसे कहा था—पण्डित, एक बार तुम लड़कों के मुरब्बियों के पास क्यों नहीं जाते।

विषादपूर्ण हँसी हँसकर सीताराम ने कहा था—क्या होगा ?

—होगा जी होगा। बैशाख-जेठ में बैसाखी आंधी आती। असाढ़ में हवा रुख बदलती—तब बारिश होती। हवा रुख बदल रही है जी। मैं सुन आया हूं। लोग बतिया रहे हैं। बड़े स्कूल में फीस ज्यादा है, मास्टर गाय-बैल को पीटने की तरह बच्चों को पीटते हैं—अनाप-शनाप बकते हैं। समझे न, इन्दरशाह का बेटा मारे डरके स्कूल ही नहीं जाता, सड़कों पर घूमता फिरता है।

तो कह रहे थे—सीताराम के वहां ही दिया जाय—जो होना है सो होगा। इसके बाद फीस के कारण ननी धीवर के बेटे का नाम काट दिया है। तुम एक-बार जाओ भी।

सीताराम गया था। बताया था, जो होगा सो तो मेरे ही साथ होगा। वे तो बच्चे हैं, उनको तो जेल नहीं भेजेंगे—यह बात आप लोग सोच-विचार कर देखें।

इसका फल मिला। और पांच लड़के आ गए। अब ग्यारह लड़के हैं।

●●

उस दिन पाठशाला में पढ़ाने बैठकर वह अन्यमनस्क हो सोच रहा था। हाथ में एक चिट्ठी। एक ओर तो डर के मारे उसके सीने के भीतर खुश्क हो गया है, दूसरी ओर आनन्द और गौरव से उसकी आंखों में आंसू आ रहे हैं। जेल से धीराबाबू ने उसे पत्र लिखा है—जेलखाने के आकाओं का दस्तखत किया हुआ पत्र। उन लोगों ने पास कर दिया है। सीताराम सोच रहा है—जेलखाने से बेशक उसका नाम फिर पुलिस के खाते पर चढ़ गया है। हाय धीराबाबू, क्यों हमें आप इस तरह जकड़ रहे हैं। मैं गरीब हूं, मामूली आदमी हूं, भला मैं क्या आप लोगों के साथ पथ पर चल सकता हूं ?

लेकिन लिखा बहुत अच्छा है। बड़ा ही सुन्दर मानो मन-प्राण सब जुड़ाए जा रहा है। "पंडित,—आपकी तुलना मैं रामायण के भगीरथ से करता हूं। जानते हैं क्यों ? मेरे निकट शिक्षा ही सचमुच पतित-पावनी धारा है, अशिक्षा के अभिशाप से अभिशप्त भस्मावृत लोगों की आत्मा को मुक्ति दिलाती है। वे सशरीर मुक्ति पाकर उन्नता के स्वर्गलोक में उठ आते हैं। केवल यही नहीं

पंडित,—मनुष्य के अन्तर के मर्त्यलोक में स्वर्गमन्दाकिनी की धारा उतर आती है, प्रबल कल्लोल से बहती जाती है, मनुष्य के ऊसर अन्तर को उदारता की उर्वरता से उर्वर बना देती है, विनय से उसे स्निग्ध बना देती है, श्यामलता से सुश्यामल सुन्दर। उसके तट-तट पर पवित्र महत्त्व के तीर्थस्थल बन जाते हैं। देश-देशान्तर के लोगों के साथ भाव-विनिमय की समृद्ध बन्दरगाह बन जाती है।"

और भी बहुत-सारा लिखा है उन्होंने। बीच-बीच मे दो-चार शब्द, चन्द सतरें किसी ने काट दी हैं, ऐसे काटा है कि पढा नही जा सकता। यह सब जेल के आका लोगों ने काटा है।

अचानक गोविन्द पर उसकी निगाह पड़ी। गोविन्द किसी के साथ इशारे में बातें कर रहा है। उसकी आँखों और भवों की भंगिमा देखकर सीताराम को हँसी आ गई। वह चिट्ठी की ही ओट लिए रहा। आकू के साथ इशारेबाजी चल रही है। आकू कुछ माँग रहा है, गोविन्द गर्दन हिला रहा है भौंह और आँख के इशारे सीताराम को दिखाई दे रहे हैं। कुछ भी नहीं, गोविन्द ने आकू की बीड़ी, दियासलाई या नसवार की डिबिया छीन ली होगी, जिसे आकू वापस माँग रहा होगा। गोविन्द सीताराम की ओर सैन करके जता रहा है—बता दूँगा मास्टर को।

गोविन्द बड़े ही आश्चर्यजनक ढंग से उसके जीवन मे आ गया। फिर भी सीताराम को डर लगता। किसी भी दिन अगर उसमें वह पाशव क्रोध भड़क उठे तो! किसी लड़के पर ही। लेकिन उसने सतर्क निगरानी रखी है। कुछ भी उसकी निगरानी से बच कर निकल नही पाता। वह पाठशाला आता, रास्ते में पेड़ की आड़ में खड़ा हो जाता, दूर से देखता रहता है कि गोविन्द क्या बोल रहा है या कर रहा है। गोविन्द उसके आसन के पास हाथ मे छड़ी लिए बैठा रहता और कान मे कलम खोंसे रखता। चिल्लाता—ऐ-ऐ चुप-चुप! पढो, सब लोग पढो। ऐ आकू! ऐ लातू! बेवकूफ—बुद्धू कहीं के।

आकू आकर खड़ा हो जाता—सर यह जगह समझ मे नही आ रही है।

समझ नहीं पा रहे हो? डाँकी-माँकी कहीं के। यहाँ लिखा है "भली-भाँति पढ़ो पाठशाल, वर्ना कष्ट झेलो अन्तकाल।" या कह देता, मैं हेड मास्टर हूँ।—यह सब छोटा-मोटा सबक मैं नही पढाता। सेकन मास्टर को आने दो। उसी से पढ़ना, समझना।

किसी दिन अंग्रेजी पढ़ाता है :

पढ़ो सब—बी-ए-सी—
साहब बने देसी।
के-ई-जे—
दुम लगी पीछे।
एन-एम-एन—
राम जी हुकम देन।

दिन गुजरते हैं।

चन्द महीनों में ही उसने एक छप्पर खड़ा कर लिया। बांस और लकड़ी कुछ तो उसने अपने घर से मंगवायी और कुछ रानी मां ने दी। भरसक कम खर्च में ही बन गया। मजदूर का काम उसने खुद किया और साथ दिया लंगड़े गोविन्द ने। श्रीमान बांकाचांद ! अब नीचे भी पक्का बनाना है।

इसी बीच पाठशाला में कई लड़के बढ़ गये हैं। पांच लेकर शुरू हुई थी—उसके बाद देवू, फिर और पांच। लोगों का भय मानो कुछ घट गया है। कुछ दिन पहले गोविन्द ने ही उसे कहा था—पण्डित, एक बार तुम लड़कों के मुरब्बियों के पास क्यों नहीं जाते।

विषादपूर्ण हँसी हँसकर सीताराम ने कहा था—क्या होगा ?

—होगा जी होगा। बैशाख-जेठ में बैसाखी आंधी आती। असाढ़ में हवा रुख बदलती—तब बारिश होती। हवा रुख बदल रही है जी। मैं सुन आया हूँ। लोग बतिया रहे हैं। बड़े स्कूल में फीस ज्यादा है, मास्टर गाय-बैल को पीटने की तरह बच्चों को पीटते हैं—अनाप-शनाप बकते हैं। समझे न, इन्दरशाह का बेटा मारे डरके स्कूल ही नहीं जाता, सड़कों पर घूमता फिरता है।

तो कह रहे थे—सीताराम के वहां ही दिया जाय—जो होना है सो होगा। इसके बाद फीस के कारण ननी धीवर के बेटे का नाम काट दिया है। तुम एक-बार जाओ भी।

सीताराम गया था। बताया था, जो होगा सो तो मेरे ही साथ होगा। वे तो बच्चे हैं, उनको तो जेल नहीं भेजेंगे—यह बात आप लोग सोच-विचार कर देखें।

इसका फल मिला। और पांच लड़के आ गए। अब ग्यारह लड़के हैं।

●○

उस दिन पाठशाला में पढ़ाने बैठकर वह अन्यमनस्क हो सोच रहा था। हाथ में एक चिट्ठी। एक ओर तो डर के मारे उसके सीने के भीतर खुश्क हो गया है, दूसरी ओर आनन्द और गौरव से उसकी आंखों में आंसू आ रहे हैं। जेल से धीराबाबू ने उसे पत्र लिखा है—जेलखाने के आकाओं का दस्तखत किया हुआ पत्र। उन लोगों ने पास कर दिया है। सीताराम सोच रहा है—जेलखाने से बेशक उसका नाम फिर पुलिस के खाते पर चढ़ गया है। हाय धीराबाबू, क्यों हमें आप इस तरह जकड़ रहे हैं। मैं गरीब हूं, मामूली आदमी हूं, भला मैं क्या आप लोगों के साथ पथ पर चल सकता हूं ?

लेकिन लिखा बहुत अच्छा है। बड़ा ही सुन्दर मानो मन-प्राण सब जुड़ाए जा रहा है। "पंडित,—आपकी तुलना मैं रामायण के भगीरथ से करता हूं। जानते हैं क्यों ? मेरे निकट शिक्षा ही सचमुच पतित-पावनी धारा है, अशिक्षा के अभिशाप से अभिशप्त भस्मावृत लोगों की आत्मा को मुक्ति दिलाती है। वे सशरीर मुक्ति पाकर उच्चता के स्वर्गलोक में उठ आते हैं। केवल यही नहीं

पंडित,—मनुष्य के अन्तर के मर्त्यलोक में स्वर्गमन्दाकिनी की धारा उतर आती है, प्रबल कल्लोल से बहती जाती है, मनुष्य के ऊसर अन्तर को उदारता की उर्वरता से उर्वर बना देती है, विनय से उसे स्निग्ध बना देती है, श्यामलता से सुश्यामल सुन्दर। उसके तट-तट पर पवित्र महत्त्व के तीर्थस्थल बन जाते हैं। देश-देशान्तर के लोगों के साथ भाव-विनिमय की समृद्ध बन्दरगाह बन जाती है।"

और भी बहुत-सारा लिखा है उन्होंने। बीच-बीच में दो-चार शब्द, चन्द सतरें किसी ने काट दी हैं, ऐसे काटा है कि पढ़ा नहीं जा सकता। यह सब जेल के आका लोगों ने काटा है।

अचानक गोविन्द पर उसकी निगाह पड़ी। गोविन्द किसी के साथ इशारे में बातें कर रहा है। उसकी आँखों और भवों की भंगिमा देखकर सीताराम को हँसी आ गई। वह चिट्ठी की ही ओट लिए रहा। आकू के साथ इशारेबाजी चल रही है। आकू कुछ माँग रहा है, गोविन्द गर्दन हिला रहा है भौंह और आँख के इशारे सीताराम को दिखाई दे रहे हैं। कुछ भी नहीं, गोविन्द ने आकू की बीड़ी, दियासलाई या नसवार की डिबिया छीन ली होगी, जिसे आकू वापस माँग रहा होगा। गोविन्द सीताराम की ओर सैन करके जता रहा है—बता दूँगा मास्टर को।

गोविन्द बड़े ही आश्चर्यजनक ढंग से उसके जीवन में आ गया। फिर भी सीताराम को डर लगता। किसी भी दिन अगर उसमें वह पाशव क्रोध भड़क उठे तो! किसी लड़के पर ही। लेकिन उसने सतर्क निगरानी रखी है। कुछ भी उसकी निगरानी से बच कर निकल नहीं पाता। वह पाठशाला आता, रास्ते में पेड़ की आड़ में खड़ा हो जाता, दूर से देखता रहता है कि गोविन्द क्या बोल रहा है या कर रहा है। गोविन्द उसके आसन के पास हाथ में छड़ी लिए बैठा रहता और कान में कलम खोंसे रखता। चिल्लाता—ऐ-ऐ चुप-चुप! पढ़ो, सब लोग,पढ़ो। ऐ आकू! ऐ लालू! बेवकूफ—बुद्धू कहीं के।

आकू आकर खड़ा हो जाता—सर यह जगह समझ में नहीं आ रही है।

समझ नहीं पा रहे हो? डाँकी-माँकी कहीं के। यहाँ लिखा है "भली-भाँति पढ़ो पाठशाल, वर्ना कष्ट झेलो अन्तकाल।" या कह देता, मैं हेड मास्टर हूँ—यह सब छोटा-मोटा सबक मैं नहीं पढ़ाता। सेकन मास्टर को आने दो। उसी से पढ़ना, समझना।

किसी दिन अंग्रेजी पढ़ाता है :

पढ़ो सब—बी-ए-सी—
साहब बने देसी।
के-ई-जे—
दुम लगी पीछे।
एल-एम-एन—
राग जी हुक्म देन।

एस-टी-आर—
छलांग जरा मार।

इतना कह कर ही वह लंगड़े पैर से एक छलांग मारता। किसी-किसी दिन छलांग मारने में वेचारा गिर भी पड़ता। सीताराम को वड़ा अच्छा लगता। कभी-कभी सोचता, विकलांग भिखमंगा लड़कों की माया-मोह में फँस एक अनचाहा रस पाकर धन्य हो गया। उसके द्वारा कोई अनिष्ट होना असम्भव है।

सीताराम के आते ही गोविन्द लज्जित-सा कहता—लो जी, तुम्हारी पाठशाला सम्भालो। मैं चला। पांच दरवाजों पर मांग आऊँ।

तिपहर को छुट्टी से पहले ही आ जाता, घण्टा वही वजाता है।

●●

चिट्ठी को सरका कर गला खँखार कर वह अच्छी तरह सेवैठ गया। फिर वोला—इशारा किस वात का है गोविन्द?

गोविन्द वोला—इमली। पंडित,—आकू इमली खा रहा था। यह इत्ता सा—यह देखो। मैंने कहा, अम्ल रोग हो जाएगा—तो सुनेगा ही नहीं। हाथ जोड़कर कहता—दे दो, दे दो।

—आकू! तुम इमली खा रहे थे?

आकू भी विचित्र है। वह उठकर खड़ा हो गया और वोला,—सर—एक चरखा—एक चरखा लेकर जा रहा है।

चरखा?

जी हां। कुली ले जा रहा है वक्से के ऊपर लाद कर। वगल ही स्टेशन का रास्ता है। आकू ने रास्ते की ओर उँगली उठाकर दिखा दिया।

होने दो। वैठो।

आकू टप्प से वैठ गया, वोला, स्कूल का सव-इन्सपेक्टर आ रहा है सर। साथ में कोई है। औरत। आकू फौरन सामने-पीछे डोलते हुए पढ़ने लग गया, "अनेक नद-नदियों में मगर पाए जाते हैं। मगर पानी में रहता है और पानी के भीतर रहकर शिकार करने में वड़ा दक्ष है।" वह पाठशाला का वहुदर्शी छात्र है, वह जानता है, स्कूल सव-इन्सपेक्टर पाठशाला का हर्ता-कर्त्ता-विधाता है। भला-वुरा कुछ देखते ही इन्सपेक्टर के खाते पर सर्र-सर्र कुछ लिख मारेगा।

सीताराम इस वार अपनी कुर्सी छोड़कर उठ खड़ा हुआ। वगल ही स्टेशन का रास्ता है। वाकई सतीश हाड़ी सिर पर एक वक्सा लादे जा रहा है, उसके ऊपर एक चरखा है। चरखा कौन ले आया? विना पूछे उससे भी रहा नहीं गया।

चरखा किसका है सतीश?

जी, पंडित जी, चरखा है लड़कियों के स्कूल की दीदी जी का।

लड़कियों के स्कूल की दीदी जी?

हां जी, हां। नयी आई यहां। वो आ रही हैं। जमाने के साथ जाने क्या-

वथा और देखूँगा पंडित जी। मेहरिया कुर्सी पर बैठे पढ़ाया करेगी—पैरों में जूते। वो देखिए न।

सीताराम उत्सुक-सा खड़ा रहा। उसने हालाँकि हुगली में रहते शिक्षित नारियाँ देखी हैं, फिर भी यहाँ जो आई हैं, वे कैसी हैं—देखने के लिए उसके कौतूहल की कोई सीमा नहीं थी। खासतौर से यह महिला चरखा लेकर आई है। बिल्कुल इसी कारण उसने उसके प्रति एक विशेष आकर्षण का अनुभव किया। बहुत दिनों से दीदी जी के आने की बात सुनता भी आ रहा था।

वो देखो, रजनीबाबू के साथ एक महिला चली आ रही है—चौबीस-पच्चीस वर्ष की साँवली लम्बी है वह महिला—खद्दर की साड़ी, खद्दर का ब्लाऊज़ पहने, पैरों में सैंडिल, हाथों में दो-दो चूड़ियाँ। सिर पर घूँघट नहीं, रूखे बालों का सादासूदा जूड़ा। यह महिला कोई सुन्दरी नहीं, काले रंग की, फिर भी साफ-सुथरी वेश-भूषा में बड़ी सलोनी-सी लग रही है। उस महिला की आँखों और बालों में भी श्री है।

सीताराम ने रजनीबाबू को नमस्कार किया। रजनीबाबू ठहर गए।

नयी शिक्षिका को भी नमस्कार करने की इच्छा सीताराम की थी लेकिन उससे हो न सका। लज्जा और कुंठा पर वह विजय न पा सका।

रजनीबाबू बोले, मैं चला जा रहा हूं सीताराम।

चले जा रहे हैं ? ट्रान्सफर हो रहे हैं ?

हाँ। उसाँस छोड़कर रजनीबाबू बोले। मुझे अफसोस रह गया, तुम्हारे लिए कुछ भी न कर सका। खैर, मैंने ऊपर नोट भेज दिया है। यहाँ भी रखे जा रहा हूं। जो आ रहे हैं वे भी बड़े नेक सज्जन है। उनसे मिलो, मेरा विश्वास है, वे तुम्हारा काम कर देंगे। जरा चुप रहकर वे बोले, एक और बात तुमसे बता जाऊँ। हमारे देश में नये स्वायत्तशासन कानून के बारे में जानते होंगे ? अभी कुछ ही दिन पहले कानून-सभा में वोट हो गया ?

सीताराम ने हल्के हँसकर कहा, जानता हूं। हल्के से हँसा, इसका कारण कांग्रेस आन्दोलन, धीराबाबू का जेल—सभी इस वोट के मामले को लेकर जो है। पोला स्वायत्तशासन। अखबार में लिखा जाता है 'मंटेगू माकाल'[1]।

रजनीबाबू बोले, वही कानून। डिस्ट्रिक्ट बोर्ड अब और मजिस्ट्रेट के कब्जे में नहीं रहेगा। नया इलेक्शन होकर नान-आफिशियल चेयरमैन होगा। हमारे यहाँ राय साहब मुकर्जी खड़ा हो रहे हैं, और भी कई लोग खड़े हो रहे हैं। तुम एक काम करना : राय साहब के चुनाव में जरा दौड़-धूप करना। तो वे अगर चेयरमैन बन गए तो तुम्हारा एड आसानी से मिल जाएगा। एड होगा डिस्ट्रिक्ट

---

१. माकाल एक छोटा-सा खूबसूरत लाल रंग का फल है जिसके भीतर के बीये कड़ुए और काले हैं। ऊपर से सुहावनी किन्तु सर्वथा बेकार चीज की तुलना माकाल फल से की जाती है।

बोर्ड के चेयरमैन के हाथों में।

वे चले गए, महिला को साथ लेकर।

रजनीबाबू के ट्रान्सफर की खबर सुन सीताराम आन्तरिक रूप से दुखी हुआ। वाकई, ऐसा नेक आदमी शायद ही और हो। कोमल-चित्त धार्मिक व्यक्ति, कभी किसी से कड़ी बात नहीं करते। साथ-ही-साथ उसके दिल में एक गहरा अपराध-बोध भी जाग उठा। उनके घर से अन्यमनस्क हो मुन्नी के जन्म-दिन पर वह उनकी 'वीरवाणी' पुस्तक ले आया था। उसे मारे शर्म के वह लौटा नहीं सका। उसको किस तरह वह लौटाएगा? एक बार जी में आया, दौड़कर उनके पास जा सारी बातें खोल कर बता दे, और रजनीबाबू के पैर पकड़कर क्षमा मांग ले। लपका भी वह। लेकिन दुःसह लज्जा ने. उसका गला धर दबाया। रजनीबाबू ने पूछा, फिर कैसे आए पंडित? कुछ कहना है? सीताराम कुछ भी न कह कर उनके पैरों को छू प्रणाम कर उठ खड़ा हो गया, केवल आंखों के कोर से दो बूंद आंसू ढुलक पड़े। रजनीबाबू ने फिर एक ठंडी सांस ली, फिर बोले, तुम्हारा भला होगा सीताराम। शिक्षकता मत छोड़ना तुम।

वे फिर खड़े नहीं रहे। चले गए। सीताराम खड़ा ही रहा। पीछे से वह महिला बड़ी जँच रही है। सबसे भला लगा उस महिला का आश्चर्यजनक शान्त, धीर और अकुंठित स्वभाव। शिक्षा न होने पर मनुष्य प्रकृत मनुष्य नहीं बन पाता है। यह बात पुरुष और स्त्री दोनों के लिए लागू है।

●●

छुट्टी के बाद वह बाजार के रास्ते से जा रहा था। एक दुकानदार मित्र ने पूछा, अरे पंडित, तुम इधर से?

सीताराम इस सवाल से बेवजह नाराज हो गया, बोला, क्यों क्या हम लोगों को इधर नहीं आना चाहिए?

उसने हँस कर कहा, अरे बिगड़ क्यों गए भाई! मैं कह रहा था कि इधर तो तुम आते नहीं। तुम तो झरने के किनारे बैठकर तपस्या करते हो। इसलिए पूछ रहा हूं।

सीताराम बोला, इधर ही जाऊंगा आज, जरूरत है।

चले जाना। आओ थोड़ा बैठकर तो जाओ। हम लोग तुम्हारी तारीफ करते रहते हैं। कहते हैं, हां, सीताराम में साहस है। इसके अलावा इतनी सारी तकलीफों के बावजूद जिस आदमी ने पंडिताई नहीं छोड़ी उसी के पास लड़कों को पढ़ने भेजना चाहिए। शिवकिंकर और मणिलाल बाबू की हम लोग निन्दा करते हैं। समझे?

सीताराम को इतना तो अच्छा लगा। वह बैठ गया। चन्द मिनट बाद ही वह हड़बड़ाकर बोल पड़ा, आज चलूँ भाई।

कहाँ जाओगे? क्या काम है?

सीताराम बोला, एक बार रजनी बाबू के पास जाऊँगा, वे यहाँ से चले जा रहे हैं। यह बात उसने झूठ बताई। वह बालिका विद्यालय की ओर जा रहा था। शिक्षिका उसे बड़ी अच्छी लगी है। वही एक बार उसको देख सके —इस उद्देश्य से वह जा रहा था। वह जानता है, यह उसके लिए अनुचित है, बहुत ही अनुचित, बार बार उसने अपने दिल को समझाने की कोशिश की है, फिर भी वह अपने को संयत नहीं रख सका।

●●

गाँव के बाजार वाले रास्ते के किनारे ही बालिका-विद्यालय है। ईंट की बनी दीवारों के ऊपर टीन का छाजन। सामने खम्भे वाला बरामदा। बरामदे के कोने में छोटा-सा बगीचा। इतने दिनों तक स्कूल में वृद्ध ही मास्टरी करते रहे हैं। *हाल में ऊपर के निर्देश से शिक्षिका नियुक्त हुई। यह महिला ही पहली* शिक्षिका है। स्कूल के बगल में बने मिट्टी के घर में उसे रहना है।

सीताराम रास्ते पर खड़ा हो गया।

कमरे का दरवाजा बन्द है। खिड़की खुली हुई, खिड़की पर पर्दा लटका दिया है। इतने भर से ही उसकी परिष्कृत रुचि का पता चल जाता है।

शिक्षिता महिला है, वह क्या घूमने नहीं निकलती?

दूर से कोई आ रहा है। यहाँ इस तरह खड़े रहने की उसे और हिम्मत नहीं पड़ी। वह दनदनाकर तेज कदमों से आगे बढ़ गया। थोड़ा-सा आगे बढ़कर ठहर गया। वहाँ से लौटकर फिर आकर उस मकान के सामने खड़ा हो गया। कमरे में बत्ती जल रही है, पर्दे पर रोशनी आ पड़ी है। उस प्रकाशित पर्दे पर उसने उस महिला के मुख की छाया देखी, बायस्कोपके परदे पर जिस तरह काया की छाया पड़ती है हूबहू उसी तरह। सिर का जूड़ा भी छाया में उभर आया है; दोनों होंठ हिल रहे हैं। शायद किताब पढ़ रही है। नहीं। अकेला तो कोई इस ढंग से किताब नहीं पढ़ता। खामोश ही पढ़ता है। तो? तो क्या अपने ही मन हल्की आवाज में गाना गा रही है?

अचानक वह खुद ही चौंक पड़ा। यह वह क्या कर रहा है? छी! छी! छी! वह तेज चाल चलने लग गया। मानो भाग रहा हो। सीधे रजनीबाबू के मकान के सामने ही आकर रुका। जेब में हाथ डाला। 'वीर वाणी' उसकी जेब में ही है।

रजनीबाबू ने बुलाया—सीताराम? आओ! आओ! रजनीबाबू ने अपना रजिस्टर खोल दिया। बोले—पढ़ो।

अंगरेजी में लिखा हुआ मन्तव्य। रजनीबाबू की लिखावट बड़ी साफ है, पूरा पढ़ गया। सीताराम अंगरेजी का अच्छा ज्ञाता नहीं, सभी शब्दों का अर्थ वह नहीं समझ सका; लेकिन इतना वह समझ सका कि रजनीबाबू ने लिखा है, *निर्दोष पंडित पर अन्याय हुआ है। ग्राम्य षड्यंत्र के कारण ही सरकार-पक्ष* के मन में भ्रान्त धारणा का उद्भव हुआ है। पंडित ईमानदार और निष्ठावान

आदमी है। उसे सजा देने की वजह से एक हानि और हुई है; गाँव के अति दरिद्र और उपेक्षित तबकों के लड़कों की पढ़ाई में काफी हानि पहुंची है।

और भी बहुत-कुछ लिखा है उन्होंने। पढ़कर सीताराम की आँखों में आँसू आ गए। कैसे आभार प्रगट करे, यह उसकी समझ में नहीं आया। जेब की वीर-वाणी पर वह हाथ रखे हुए था। उसको भी वह निकाल नहीं सका। इसके बाद कैसे निकाल सकेगा वह? रजनी बाबू की सारी धारणा पलट जाएगी। दिल धड़कने लगा। नहीं—रहने दिया जाय। इस पाप की सजा वह परलोक में ही लेगा। यहाँ उससे नहीं हो सकेगा।

रजनी बाबू ने हँसकर कहा, तुम्हें एक और पते की बात बता जाऊँ सीताराम। नये सब-इन्सपेक्टर जो आ रहे हैं—वे सूरन खाना बहुत पसन्द करते हैं। सूरन, बेल और भी जाने क्या-क्या सब? यानी डिसपेप्टिक हैं। समझे न? भेंट करते वक्त एक बढ़िया जमींकन्द लेकर जाना। और एक बात, तुम लोगों के धीरा बाबू कहानी लिखते हैं। नये इन्सपेक्टर साहब आधुनिक साहित्य पर बेहद नाराज हैं। समझे! तुम धीराबाबू की कहानियों की निन्दा करना। समझे? निन्दा अगर न भी करो, तारीफ कभी न कर बैठना। वर्ना वह बूढ़ा बिगड़ जाएगा। मेरे साथ एक बार बहस हुई थी। अन्त में एक पेपरवेट उठाकर मेरे सिर की ओर फेंका। गनीमत, मैंने सिर जरा हटा लिया था। रजनी बाबू हँसने लगे—यह भी तुम लोगों के लिए मुसीबत है। हम लोगों का मन रखकर चलना। हमारी सनक के मुताबिक नाचना।

लौटती राह सीताराम अभिभूत-सा चलने लगा। वह मानो खो गया है। रजनीबाबू के स्नेह और काली छाया से अंकित चित्र के सौन्दर्य से—जाने वह कैसा-कैसा हो गया है।

●●

बारह

दो महीने के बाद उस दिन मनोरमा रो रही थी।

सीताराम ने उसे निर्दयरूप से डाँटा है, अपमान किया है। उसका अपराध क्या है यह वह समझ नहीं सकी। इसीलिए वह ज्यादा रो रही है। इन दिनों सीताराम की साफ-सुथरेपन की सनक क्रमशः मानो मात्रा पार किए जा रही है। कपड़े मैले हैं, बिस्तर गन्दा है, यहाँ बदबू निकल रही है—यही लेकर वह दिनोरात नाक-भौं सिकोड़ता रहता है। केवल यही नहीं, उसका स्वभाव भी मानो अत्यन्त रूखा हो उठा है।

आज सीताराम घर लौटकर मुँह-हाथ धो खाना खाने बैठा था, मनोरमा के

आकर सामने भात रखते ही वह बोल पड़ा, भात ले जाओ। मैं नहीं खाऊँगा।

खाओगे नहीं ? क्यों क्या हुआ ? खाने बैठे—

ले जाओ भई, ले जाओ। भात मुझे रुचेगा नहीं।

कहकर ही सीताराम उठ खड़ा हुआ। बोला, तुम्हें क्या कोई गन्ध नहीं मिलती ? तुम्हारी धोती से कैसी बदबू आ रही है और तुम्हें पता ही नहीं ?

मनोरमा लज्जित हुई। सचमुच इस धोती से बदबू निकल रही है। छोटे बच्चे की माँ है वह, तिस पर भीगी धोती हवा से लिपट-सिमट गयी थी, धूप नहीं मिली। धोती गन्दी भी हो गयी है। इसका वह क्या करे ? गोद में बच्चा है, घर में चौका-रसोई आदि काम का कोई अन्त नहीं; अकेली प्राणी है वह, वह क्या साफ-सुथरी हो सिंगार-पटार कर बैठे रहना चाहे तो बैठ सकती है ? इसके अलावा जो धोती वह पहने हुए थी वह रेशम का कपड़ा है, शुद्ध कपड़ा। यह कपड़ा कौन है जो बारह महीने सज्जी से धोता हो ? उसने ऐसा ही जवाब दिया था, क्या करूँ ? शुद्ध कपड़ा जो है। यह कपड़ा क्या रोज-रोज धोया जाता है ? इसमें जरा बू हो आ जाती है। सो, बैठ जाओ। खाना खा लो।

सीताराम ने व्यंग के स्वर में कहा था, शुद्ध कपड़ा !

हाँ, देखते नहीं, रेशमी कपड़ा है।

अशुद्ध कपड़ा। जिससे बदबू निकलती हो, जो साफ न हो वही अशुद्ध होता है।

सुनो, जो जानते नहीं, उसके बारे में बकवास मत करो। पंडित हो तो पाठशाले में हो, घर के आचार-आचरण के बारे में तुम्हें क्या मालूम ?

सही बात। आचार-आचरण के मूरख ही पंडित बनते हैं। यह भी मालूम हो गया।

मनोरमा को उस मूरख शब्द से ही ज्यादा ठेस लगी है। जवाब में उसने कहा था, अच्छी बात, मैं मूरख ही सही। कुछ भी जानती नहीं। लेकिन यह धोती और पाँच ठो खरीद दो न, रोजाना एक फोच लूँगी। फीचूँगी भी क्यों, धोने का इन्तजाम करा देना, धोबी को दे दिया करूँगी। उस वक्त तो सभी लोगों ने खुशामद की, बाबू लोग नायबी देना चाहते हैं, ले लो। लेकिन—

टोककर सीताराम ने कहा, तुम कमीनी हो। बेहद कमीनी हो।

मैं कमीनी हूँ ? इतनी बड़ी बात तुमने मुझे कह दी ?

हाँ तुम मूर्ख हो, कमीनी हो, लालची हो। सीताराम अब तक आसन पर ही खड़ा था, अब जाकर मुँह-हाथ पानी से धोने लगा।

अभिमान से और रुँधे हुए रोदन से मनोरमा के दिल में उस वक्त हलचल मचा हुआ था। वह सन्नाटे में आ खड़ी रही। किसान बहू लेटी हुई थी, अचभे से सबकुछ सुन रही थी, अब उठकर बैठ गयी। बोली, मैं कहूं मालिक जी, तुम्हारा यह चलन-बोलन कैसा है जी ?

सीताराम उसको धमकाकर बोला, तू चुप रह। जो समझती नहीं, उस

बारे में बोलना नहीं चाहिए।

अरे मैं कहूं, समझूंगी क्यों नहीं? मूरख-सूरख मनही हैं, छोटी-खोटी जाति वाली लेकिन इसलिए कोई बोदी-सोदी तो नहीं। समझूं काहे न? चिड़चिड़ा मिजाज लेकर तो घर आए तुम और एक बहाना-अहाना ढूँढ़कर बीबी को डाँट-फटकार रहे हो!

सीताराम किसी बात का जवाब न देकर ऊपर उठ गया। किसान-बहू की बात उसके दिल में तीर की तरह जा पैठी।

ऊपर आकर अकेले बैठे बहुत देर तक वह सोचता रहा—देखा, सचमुच बात ऐसी ही है। बहुत ही मामूली बात पर उसने मनोरमा का निर्दयता से अपमान किया है। क्यों उसका दिल ऐसा रूखा हो गया? क्या हो गया है उसे? सोचते हुए वह सिहर उठा। क्या वाकई ऐसी बात है?—हाँ बात यही है। इसमें अब कोई भूल नहीं। लेकिन यह तो अपराध है! हाँ, अपराध तो है ही। केवल मनोरमा के निकट ही अपराध नहीं, यह उसके चित्त का कलुष है, उसका यह अपराध भगवान के निकट भी है। इसके अलावा यह तो उसकी धृष्टता है। वह पाठशाला का एक मामूली पंडित है, और वह महिला, शिक्षिता नारी है। यह बात अगर किसी तरह से भी उसके कानों में पहुंच जाय, तो वह कैसी कठोर दृष्टि से उसकी ओर देखेगी, कैसी टेढ़ी मुस्कान उसके होंठों पर उभर आएगी, कल्पना करते हुए भी वह सिहर उठा।

आज करीब महीना-भर हुए वह आयी है। माह-भर से ही मानों किसी जुनून में दोनों वक्त उसको देखने के छिपे उद्देश्य से वह आ-जा रहा है। इतने दिनों का आने-जाने का नियमित पथ बदलकर आजकल वह नए पथ से याने बालिका विद्यालय के सामने वाले बाजार के रास्ते यातायात कर रहा है। सवेरे गाँव से निकलकर काफी चक्कर लगाकर उसी रास्ते से वह बाबुओं की कोठी जाता है। आजकल दिन-ढले वह झरने की ओर नहीं जाता। बाजार के रास्ते उसी मकान के सामने से जाता है और थोड़ी देर बाद उसी रास्ते से लौट आता है। उस वक्त शाम हो जाती है। उसके कमरे में बत्ती जलती, परदे पर उसके मुख की छाया पड़ती, वही देखकर वह लौट आता है। महीने-भर में सिर्फ दो ही तीन बार उसको वह बाहर देख सका है।

काली लम्बी महिला, जतन से जूड़ा बाँधे, धुली साफ खद्दर की साड़ी पहने, बदन पर ब्लाउज़, पैरों में सैंडिल, हाथों में एक-एक सोने की चूड़ी। सीताराम देखकर मुग्ध हो जाता है। एक दिन उसे पोस्ट-ओफिस में देखा था, एक दिन बड़े हैडमास्टर के मकान के दरवाजे पर, तो एक दिन अपने ही मकान के बरामदे में वह अनमनी-सी खड़ी थीं।

कितने ही दिन उससे बातें करने के कितने ही तरीके के बारे में वह सोचता रहा है। वह महिला चरखा कातती है। एक दिन कुछ रामकपास की रुई ओट कर क्यों न उसे भेंट किया जाए? बालिका विद्यालय की नौकरानी प्रायः

रोजाना ही यहाँ की लायब्रेरी से उसके लिए किताब ले जाया करती है धीरावाबू की बहुत सारी किताबें हैं, क्या नौकरानी से वह न दिया जाए—उनसे कहना, उनको एतराज न हो तो मैं किताब दे आऊँगा और फिर लौटा भी लाऊँगा। लेकिन कुछ भी वह कर न सका। केवल भूत ग्रस्त-सा उसके मकान के सामने से चलता-फिरता रहा है।

नहीं। यह उसके लिए अनुचित है। वह पाठशाला का एक शिक्षक है। उसके जीवन में कोई कलुष नहीं रहना चाहिए। यह मोह उसको त्यागना ही पड़ेगा। एक उसाँस ली उसने। ऐसा ही करेगा वह। उसने बार-बार मन ही मन भगवान को पुकारा, भगवान मुझे बल दो।

भगवान को प्रणाम कर फिर से जी-जान लगाकर वह फिर पाठशाला में जुट गया। इस एक महीने में उसकी पाठशाला में दो लड़के और बढ़ गये। तेरह लड़के। एक ठंडी साँस ली उसने। तेरह लड़कों में एक भी बहुत अच्छा लड़का नहीं है। सौ लड़कों की बजाय अगर उसे एक भी अच्छा लड़का मिल जाय—अगर—सचमुच का अच्छा लड़का मिल जाय उसे तो वह अपने को भाग्यवान समझेगा। देबू पर उसे भरोसा था। लेकिन वह भरोसा दिन-ब-दिन क्षीण होता चला जा रहा है। देबू क्रमशः अधिक चंचल और पढ़ाई में अमनो-योगी बनता जा रहा है। ज्योतिष का भतीजा जाने कैसा बोदा होता जा रहा है दिन-ब-दिन। कभी-कभी अपने पर उसे सन्देह होने लगता है। यह क्या उसी का नकारापन नहीं है? उसी के लिए क्या उन लोगों की परिणति ऐसी हो रही है?

वह अब जी-जान से जुट गया।

आकू का कुछ भी नहीं होगा। उसको पाठशाला से विदा कर देना चाहिए। लेकिन विदा वह लेगा नहीं। वह लड़का बीड़ी पीना सीख गया है। और भी तरह-तरह की बुरी बातें उसके दिमाग में उभर आई हैं। अबकी बार प्रायमरी पास का सर्टीफिकेट देकर वह उसे विदा कर देगा। आकू ने फिर एक शगूफा छेड़ा है—पाठशाला में फुटबाल टीम बनानी है। इन सब बातों में गोविन्द उसका वकील है। गोविन्द अच्छी वकालत कर लेता है। कहता, यह तो मानते हो न कि लड़के कोई गरीब-अमीर में फर्क नहीं करते। उनकी साध होगी ही। बड़े स्कूल के लड़के गेंद खेलते हैं। वे भी भला क्यों न खेलें? तो फिर तुम्हें एक कहानी सुनाता हूं, सुनो। बहुत बड़ा बादशाह था एक। बड़ी लम्बी दाढ़ी। गुस्सा भी गजब का। रोब-दाब भी वैसा ही। समझे! एक दिन बादशाह दरबार में आकर आँखें लाल करके बोले, मेरी दाढ़ी पकड़कर अगर कोई खींचे तो उसकी सजा क्या है? सभी लोग सिहर उठे। हुजूर की दाढ़ी पकड़कर खींचना? यह भी क्या कोई कर सकता है? बादशाह बोले—सकता है क्या, सका है, खींचा है, खींचा है?—तो फिर उसे सूली पर चढ़ा दो। नहीं-नहीं, उसकी बोटी-बोटी काट डालो। कुत्ते को खिला दो बोटियाँ। लेकिन वजीर खामोश

बारे में बोलना नहीं चाहिए।

अरे मैं कहूं, समझूंगी क्यों नहीं ? मूरख-सूरख मंनहो हैं, छोटी-खोटी जाति वाली लेकिन इसलिए कोई बोदी-सोदी तो नहीं। समझूं काहे न ? चिड़चिड़ा मिजाज लेकर तो घर आए तुम और एक बहाना-अहाना ढूंढ़कर बीबी को डाँट-फटकार रहे हो !

सीताराम किसी बात का जवाब न देकर ऊपर उठ गया। किसान-बहू की बात उसके दिल में तीर की तरह जा पैंठी।

ऊपर आकर अकेले बैठे बहुत देर तक वह सोचता रहा—देखा, सचमुच बात ऐसी ही है। बहुत ही मामूली बात पर उसने मनोरमा का निर्दयता से अपमान किया है। क्यों उसका दिल ऐसा रूखा हो गया ? क्या हो गया है उसे ? सोचते हुए वह सिहर उठा। क्या वाकई ऐसी बात है ?—हाँ बात यही है। इसमें अब कोई भूल नहीं। लेकिन यह तो अपराध है ! हाँ, अपराध तो है ही। केवल मनोरमा के निकट ही अपराध नहीं, यह उसके चित्त का कलुष है, उसका यह अपराध भगवान के निकट भी है। इसके अलावा यह तो उसकी धृष्टता है। वह पाठशाला का एक मामूली पंडित है, और वह महिला, शिक्षिता नारी है। यह बात अगर किसी तरह से भी उसके कानों में पहुँच जाय, तो वह कैसी कठोर दृष्टि से उसकी ओर देखेगी, कैसी टेढ़ी मुस्कान उसके होंठों पर उभर आएगी, कल्पना करते हुए भी वह सिहर उठा।

आज करीब महीना-भर हुए वह आयी है। माह-भर से ही मानों किसी जुनून में दोनों वक्त उसको देखने के छिपे उद्देश्य से वह आ-जा रहा है। इतने दिनों का आने-जाने का नियमित पथ बदलकर आजकल वह नए पथ से याने बालिका विद्यालय के सामने वाले बाजार के रास्ते यातायात कर रहा है। सवेरे गाँव से निकलकर काफी चक्कर लगाकर उसी रास्ते से वह बाबुओं की कोठी जाता है। आजकल दिन-ढले वह झरने की ओर नहीं जाता। बाजार के रास्ते उसी मकान के सामने से जाता है और थोड़ी देर बाद उसी रास्ते से लौट आता है। उस वक्त शाम हो जाती है। उसके कमरे में बत्ती जलती, परदे पर उसके मुख की छाया पड़ती, वही देखकर वह लौट आता है। महीने-भर में सिर्फ दो ही तीन बार उसको वह बाहर देख सका है।

काली लम्बी महिला, जतन से जूड़ा बाँधे, धुली साफ खद्दर की साड़ी पहने, बदन पर ब्लाउज, पैरों में सैंडिल, हाथों में एक-एक सोने की चूड़ी। सीताराम देखकर मुग्ध हो जाता है। एक दिन उसे पोस्ट-ओफिस में देखा था, एक दिन बड़े हैडमास्टर के मकान के दरवाजे पर, तो एक दिन अपने ही मकान के बरामदे में वह अनमनी-सी खड़ी थीं।

कितने ही दिन उससे बातें करने के कितने ही तरीके के बारे में वह सोचता रहा है। वह महिला चरखा कातती है। एक दिन कुछ रामकपास की रुई ओट कर क्यों न उसे भेंट किया जाए ? बालिका विद्यालय की नौकरानी प्रायः

रोजाना ही यहाँ की लायब्रेरी से उसके लिए किताब ले जाया करती है धीराबाबू की बहुत सारी किताबें हैं, क्या नौकरानी से वह न दिया जाए—उनसे कहना, उनको एतराज न हो तो मैं किताब दे आऊँगा और फिर लौटा भी लाऊँगा। लेकिन कुछ भी वह कर न सका। केवल भूत ग्रस्त-सा उसके मकान के सामने से चलता-फिरता रहा है।

नहीं। यह उसके लिए अनुचित है। वह पाठशाला का एक शिक्षक है। उसके जीवन में कोई कलुष नहीं रहना चाहिए। यह मोह उसको त्यागना ही पड़ेगा। एक उसाँस ली उसने। ऐसा ही करेगा वह। उसने बार-बार मन ही मन भगवान को पुकारा, भगवान मुझे बल दो।

भगवान को प्रणाम कर फिर से जी-जान लगाकर वह फिर पाठशाला में जुट गया। इस एक महीने में उसकी पाठशाला में दो लड़के और बढ़ गये। तेरह लड़के। एक ठंडी साँस ली उसने। तेरह लड़कों में एक भी बहुत अच्छा लड़का नहीं है। सौ लड़कों की बजाय अगर उसे एक भी अच्छा लड़का मिल जाय—अगर—सचमुच का अच्छा लड़का मिल जाय उसे तो वह अपने को भाग्यवान समझेगा। देवू पर उसे भरोसा था। लेकिन वह भरोसा दिन-ब-दिन क्षीण होता चला जा रहा है। देवू क्रमशः अधिक चंचल और पढ़ाई में अमनो-योगी बनता जा रहा है। ज्योतिष का भतीजा जाने कैसा बोदा होता जा रहा है दिन-ब-दिन। कभी-कभी अपने पर उसे सन्देह होने लगता है। यह क्या उसी का नकारापन नहीं है? उसी के लिए क्या उन लोगों की परिणति ऐसी हो रही है?'

· वह अब जी-जान से जुट गया।

शाकू का कुछ भी नहीं होगा। उसको पाठशाला से विदा कर देना चाहिए। लेकिन विदा वह लेगा नहीं। वह लड़का बीड़ी पीना सीख गया है। और भी तरह-तरह की बुरी बातें उसके दिमाग में उभर आई हैं। अबकी बार प्रायमरी पास का सर्टीफिकेट देकर वह उसे विदा कर देगा। शाकू ने फिर एक शगूफा छेड़ा है—पाठशाला में फुटबाल टीम बनानी है। इन सब बातों में गोविन्द उसका वकील है। गोविन्द अच्छी वकालत कर लेता है। कहता, यह तो मानते हो न कि लड़के कोई गरीब-अमीर में फर्क नहीं करते। उनकी साध होगी ही। बड़े स्कूल के लड़के गेंद खेलते हैं। वे भी भला क्यों न खेलें? तो फिर तुम्हें एक कहानी सुनाता हूं, सुनो। बहुत बड़ा बादशाह था एक। बड़ी लम्बी दाढ़ी। गुस्सा भी गजब का। रोब-दाब भी वैसा ही। समझे! एक दिन बादशाह दरबार में आकर आँखें लाल करके बोले, मेरी दाढ़ी पकड़कर अगर कोई खींचे तो उसकी सजा क्या है? सभी लोग सिहर उठे। हुजूर की दाढ़ी पकड़कर खींचना? यह भी क्या कोई कर सकता है? बादशाह बोले—सकता है क्या, सका है, खींचा है, खींचा है?—तो फिर उसे सूली पर चढ़ा दो। नहीं-नहीं, उसकी बोटी-बोटी काट डालो। कुत्ते को खिला दो बोटियाँ। लेकिन वज़ीर खामोश

रहे। बादशाह बोले, वजीर, तुम तो कुछ भी कह नहीं रहे हो। वजीर बोले—हजूर—क्या बताऊं? बादशाह की दाढ़ी पकड़कर अगर किसी ने खींची हो तो वह उनका छोटा बच्चा होगा। मैं कहता हूं कि उसका हाथ सोने से मढ़वा दिया जाय। कहानी उसे सचमुच बड़ी अच्छी लगी। देहात की पाठशालाओं में ये सब टंटे नहीं हैं, वहां पंडित लोग छुट्टी देकर ही नजात पा जाते हैं। लेकिन रत्न-हाटा जैसे गांव में नजात लेने से तो काम नहीं चलेगा। यहाँ बड़े स्कूल से संलग्न पाठशाला के लड़कों के लिए फुटबाल खेलने की व्यवस्था है। लड़कों के लिए वह एक बहुत बड़ा आकर्षण है। इसके अलावा उसकी पाठशाला के लड़के मुंह लटकाये उनके फुटबाल ग्राउंड के किनारे जाकर खड़े रहते हैं, इससे भी उसका दिल दुखता है। इसलिए अपनी पाठशाला में यह रखना होगा। एक अन्य कारण से भी यह उसे अच्छा लगा। तिपहर को अगर वह लड़कों के खेल के पास जाकर बैठ जाये तो उस महिला के मोह से उसे मुक्ति मिलेगी।

अब बिना दुविधा किये फुटबाल का आर्डर देकर चिट्ठी आकू के हाथ में दी और कहा, डाल आ।

आकू उछलते-कूदते चला गया, "सन्दीपन पाठशाला फुटबाल टीम।" चैलेंज-चैलेंज—हाई स्कूल की प्राइमरी फुटबाल टीम के साथ।

लड़के खुशी से चंचल हो उठे।

पढ़ो। पढ़ो। पढ़ो सब देवू, साहा, गणित लिखो। एक मन सन्देश (मिठाई) का दाम अगर चालीस रुपया दस आना छह पाई हो तो उस दर पर सन्देश खरीद कर कितना रुपया सेर बेचने पर एक सौ पच्चीस रुपया मुनाफा होगा? गणेश, गोकुल अपना पाठ सुनाओ तुम लोग। किताब बन्द कर महात्मा हाजी मुहम्मद महसीन की कहानी बताओ।

खामोश दोपहर। लड़के धीमी आवाज में पढ़ रहे हैं, मधुचक्र के मधुपानरत मधुमक्षिकाओं की गुंजनध्वनि-जैसी मधुर ध्वनि। पढ़ो, पढ़ो। विद्या ही संसार का श्रेष्ठ मधु है। आकंठ पान करो इसे सब लोग। जीवन को धन्य करो। देवू और साहा के स्लेटों पर पेन्सिल चल रहे हैं—टक टक शब्द हो रहे हैं। गणेश कह रहा है, मुसलमानों का प्रसिद्ध तीर्थस्थल है मक्का। इस मक्का तीर्थ में जो हज करके लौटते हैं उनको हाजी कहा जाता है। मुहम्मद महसीन मक्का की जियारत कर आए थे इसलिए उनको हाजी कहा जाता है।

वाह! वाह! ठीक है बोलते रहो। पढ़ो, पढ़ो, तुम लोग पढ़ो। जी लगाकर पढ़ो। ध्यान लगाकर पढ़ो। मेरे पास जितना भर है, ले लो, उसका सारा तुम लोग ले लो। वसूल कर लो। लेने में कोई दिक्कत हो तो बताओ। फिर जाओ बड़े स्कूल में। वहाँ से जाओ कालेज, विश्वविद्यालय में। तुम लोगों का कल्याण हो, उन्नति हो तुम लोगों की, देश के जाने-माने बनो, देश का मंगल करो, देश का मुख उज्ज्वल करो। सन्दीपन पाठशाला धन्य होगी। सीताराम पंडित मामूली आदमी है, सद्गोप किसान का बेटा है, उसका नाम तुम्हारी कीर्त्ति में अक्षय

बना रहेगा, वह स्मरणीय बना रहेगा।

साढे तीन बजे ट्रेन की सीटी बजी।

सर, साढ़े तीन बज गये।

हाँ, पहाड़ा पढ़ डालो, पढ़ाओ, आज देबू पढ़ाओ।

देबू अकेला खड़ा हो गया। लड़के बस्ता बाँधकर बैठ गये। देबू बोलने लगा, एक से चन्द्र।

समस्वर लड़के बोल पड़े, एक से चन्द्र।

दो से पक्ष।

दो से पक्ष। क्रमशः अस्सी नब्बे पारकर नौ दस नब्बे आया फिर दस दस—एक सौ।

अब कौड़ी-दमड़ी का हिसाब। एक कौड़ी—पाव गंडा।

स्वर तेज होने लगा। थके शरीर में सीताराम को यह सुर अच्छा लगता है। ऊंघाई-सी आने लगती है।

पहाड़ा खत्म हुआ। इस इलाके में कहते हैं पहाड़ा—घोषा—याने घोषणा करते हुए पढ़ना। अब छुट्टी है।

दो छोटे लड़के आकर खड़े हो गये, कल षष्ठी है मास्सा। कल छुट्टी।

माँ के छोटे लड़के हैं शायद ? खैर, एक जून की छुट्टी। टिफन के बाद आओगे। पाठशाला में छोटे लड़कों की छुट्टी की तालिका अधिक है। षष्ठी-पूजा में आधे दिन की। नवान्न में छुट्टी। लक्ष्मी पूजा में छुट्टी। अहा, बच्चों की टोली! उन्हीं लोगों के लिए ही तो आनन्द है।

छुट्टी के बाद लड़के स्टेशन के किनारे मैदान की ओर दौड़े। सीताराम बैठा रहा। वे सभी फावड़ा लेकर मैदान बनाने लग गये। ओफ! कितनी उमंग है उनमें! बड़ा ही अच्छा लगा।

आजकल शाम के बाद श्यामू एक मास्टर के पास अंगरेजी पढ़ने जाता है। कन्हाई राय लालटेन लेकर साथ जाता है। देबू अब अकेला पढ़ता है। आज खेलने जाकर देबू के पैर में मोच आ गयी है, वह पढ़ने नहीं आया।

सीताराम निकल पड़ा। जरा मैदान के किनारे जाकर बैठेगा। सुन्दर जुन्हाई छिटकी हुई है। जुन्हाई से धुले मैदान में बैठे-बैठे सोचेगा अपनी नियति के बारे में, अपने दुःख के बारे में। दुःख के बारे में सोचते हुए उसे भला लगता है। दुःख पाने पर वह मानो चंगा रहता है। उसाँस लेकर मानो उसे सन्तोष होता। वह मणिलाल बाबू के आक्रोश के बारे में सोचता, शिवकिंकर-द्वारा कूटकौशल से उस पर अत्याचार करने के बारे में सोचता। पाठशाला की खाना-तलाशी के बारे में सोचता। प्रकाशित परदे पर छाया में उभर आए एक मुख के बारे में सोचता।

राह चलते-चलते वह अचानक चौंक पड़ा। यह क्या! मैदान के किनारे जाने का संकल्प लेकर वह निकला और कहाँ वह आ पहुंचा है। सामने ही

रास्ते के किनारे कमरे की खिड़की में उज्ज्वल परदे पर छाया से अंकित एक मुख उभर आया है। अंधेरे पेड़ के नीचे वह खड़ा रहा। बिल्कुल उसी ढंग से वह बैठी हुई है। गर्दन पर ढीला जूड़ा डोल रहा है। बीच-बीच में आज हाथ आँखों के पास चला आ रहा है। लगता है, कुछ है उस हाथ में। आज शायद सिलाई कर रही हैं। अचानक सिर के ऊपर पेड़ पर उल्लू घुघुआ उठा कर्कश स्वर में। वह चौंक उठा। अगले ही क्षण मानों उसमें चेतना लौट आई। अब तक वह अपने आपे में नहीं था। उसे लगा—यह क्या ? छी-छी-छी ! यहाँ क्यों आया है वह ? अन्यमनस्क हो मैदान न जाकर वह यहाँ आ गया है। दिल की यह छलना भी अद्भुत है।

वह भाग नहीं गया। नहीं, इतना अधिकार तो उसका रहे। पाठशाला का पंडित है वह, पाठशाला के पंडित को क्या कोई सुख भा नहीं सकता ? भला लगना क्या अपराध है ? अपराध शायद होता हो लेकिन फिर भी भला लगता। पाठशाला का पंडित है तभी भला लगने वाली बात हमेशा के लिए अजानी रह जाती है। शायद दिल ही में वह बात लिखी रहती है। पंडित मरता है, मरने के बाद पंडित की देह के साथ वह बात राख हो जाती है।

उसके साथ भी ऐसा ही होगा। यह गुप्त अधिकार उसका बना रहे, इसको वह छोड़ नहीं सकता। मन-ही-मन मनोरमा से उसने बार-बार क्षमा-प्रार्थना की। तुम मुझे क्षमा करना, तुम्हारा असम्मान मैं कभी नहीं करूंगा। तुम लक्ष्मी हो, तुम देवी हो। केवल मेरे इतने से गोपन अपराध को तुम क्षमा कर देना।

रात को लौटकर उसने मनोरमा को बहुत लाड़-प्यार जताया।

उसके लाड़-प्यार से विगलित हो मनोरमा ने हंसकर कहा, तुम पंडित मनही हो, इतनी सारी बातें तो मुझे नहीं मालूम।

उत्साहित हो सीताराम ने कहा, हमारी मुन्नी को हम लोग पढ़ाएंगे। साथ ले जाया करूंगा। बालिका विद्यालय में देकर पाठशाला चला जाऊंगा। दीदी जी से कहूंगा, जरा देखते रहिएगा। फिर पाठशाला खत्म होने पर साथ लेकर चला आऊंगा।

●●

तेरह

दिन बीतते। महीने बीतते। एक साल बीत गया। पाठशाला चलती रही।

पाठशाला की पढ़ाई खत्म कर लड़कों का एक दल बड़े स्कूल में चला गया। नया एक दल आया, हाथ में प्रथम भाग वाली पुस्तक और स्लेट लेकर। नई धोती, नया कुरता पहने, कुछ की आँखों में काजल। वाह ! वाह ! वाह !

उस दिन मास्टर बैठे रफू कर रहा था।

लड़के बैठे पढ़ रहे हैं। नए लड़कों का जत्था। देबू, ज्योतिष साहा का भतीजा और उसके सहपाठी यहाँ की पढ़ाई खत्म कर चले गये हैं। आकू वाला गिरोह भी विदा ले चुका है। लेकिन ये कुछ चेले रह गये हैं—बीड़ी पीते हैं, एक ही कक्षा में दो-तीन साल रहते हैं, झूठ बोलते हैं। इनको सही तौर पर आकू वाले गिरोह के चेले नहीं कहा जा सकता। सीताराम ने काफी सोच-विचार कर तय किया है, ये हैं प्रथम भाग पुस्तक में वर्णित रासाल नामक नटखट लड़के के चेले। ईश्वरचन्द्र विद्यासागर जी ने सर्वप्रथम उसको पाठशाला में भरती कर उनका हक उनको दे दिया है। ये रहेंगे ही। आकू ने नाम से ही पाठशाला छोड़ी है। बदमाश छोड़कर भी नहीं छोड़ रहा है। आकू पाठशाला में पढ़ता नहीं लेकिन एक बार आएगा जरूर। घंटे-दो घंटे रहकर फिर कहीं चला जाता है। आता और सीताराम को दुनिया-भर की खबरें सुना जाता है। कुछ काम-काज भी कर देता है। इसमें घड़ी में चाभी भरना मुख्य है। और, लड़कों की हाजिरी लेता—नाम पुकारता। गोविन्द से गप्प लड़ाता। मगबार लेता। लड़कों को कभी-कभी घुड़की भी लगाता। यही उसका काम है। और काम है तिपहर को सन्दीपन पाठशाला फुटबाल टीम में ह्विसल् बजाना। सीताराम मना नहीं कर पाता है। आकू बदमाश चाहे हो लेकिन सीताराम को उसी में कहीं शिव ढूँढे मिल गया है।

नन्हे-नन्हे कोमल चेहरे सबके।

सीताराम की सबसे बड़ी खुशी : अबकी बार सचमुच उसे एक अच्छा लड़का मिल गया है। बाबुओं की कोठी की नौकरानी का बेटा है यह। सीताराम ने अचानक ही उसका आविष्कार कर डाला। गोरा चिट्टा लड़का, चमकती हुई आँखें, उसके मुख की ओर देखते ही सीताराम की छाती चौड़ी हो जाती है। बाबुओं की कोठी की नौकरानी का बेटा—नाम जयधर।

गोरा-चिट्टा बेटा लेकर उसकी विधवा माँ बाबुओं की कोठी में नौकरानी का काम लेकर आई। उस दिन शाम के वक्त बाबुओं की कोठी में सीताराम बगीचे की वेदी पर बैठा था।

वह लड़का रोते-रोते बैठक का बरामदा पारकर कोठी की ओर जा रहा था। सीताराम ने उसे पुकारा—कौन हो तुम? अरो। ओ मुन्ना! सुनो-सुनो।

कोई भी लड़का देखते ही सीताराम के मन में एक पेशेवर शिकार जाग उठता है। पाठशाला में भरती करने पर मासिक आय में चार आने की बढ़ोत्तरी!

पुकार सुनकर लड़का खड़ा हो गया, रोते-रोते ही बढ़ा।

—तुम रो क्यों रहे हो? क्या नाम है तुम्हारा?

उसने जवाब दिया—मैं जयधर हूँ।

-रो क्यों रहे हो ?

—मिठाई में गुठली थी, मैंने खा डाली है।

—मिठाई में गुठली थी, खा डाली है? सीताराम हँस पड़ा। मामला ने में उसे कोई दिक्कत नहीं हुई। आज तिपहर को उसने भी गुठलीवाली ाई खाई है। याने हड़ का मुरब्बा। हड़ की गुठली उसी में रह जाती है। ारा देहाती लड़का ! शायद बाबुओं की कोठी में किसी वज्र-देहात से कोई या होगा ! हड़ की गुठली निगल गया है। हँसकर उसने कहा, उससे डर या है ? तुम्हारे पेट में कोई पेड़ नहीं उगेगा।

लड़का ठिठक गया, उसका रोना भी रुक गया।

सीताराम ने पूछा, तुम्हारा नाम जयधर है, जयधर क्या ?

—जयधर घोष।

—यहाँ कहाँ आए हो ?

—माँ यहाँ काम जो करने आई है।

सीताराम समझ गया, कौन-सा काम है। ब्राह्मण के घर में घोष घराने की औरत नौकरानी के काम के अलावा भला कौन-सा काम करेगी? नौकरानी बेटा। उसने फिर सवाल किया, तुम? तुम क्या करोगे ?

—मैं ? माँ ने कहा है, बड़ाबाबू के आने पर उसका नौकर हो जाऊंगा।

—पढ़ना जानते हो ?

—हैं ऽ। कहकर ही उसने शुरू कर दिया—'क'—गाय चराने चल। गाय ने मुंह मारा धान में…

अब सीताराम ने उठकर उसे दौड़ा दिया। अब की बार वह बोलेगा— !फूंक जरा पण्डित के कान में।' निहायत चालू लड़का है। सीताराम ने दौड़ कहा—'पकड़ तो लड़के का कान जरा।'

वह लड़का उस दिन दौड़कर भाग गया। इसके बाद लगभग दो महीने उस लड़के की ओर कोई ध्यान न दिया। उस लड़के पर ध्यान देकर वह भी क्या ? हालांकि वह लड़का आता था, फतिंगे पकड़ता फिरता था उसका नशा था। बाबुओं की गायों के चरवाहे के पास बैठा रहता था। राय को वह लड़का फूटी आंखों न सुहाता था, वह कहता—वाहियात जानते हो सीताराम—यह विधवा के बेटे और राजा के बेटे में कोई फ इस छोकरे का दिमाग चढ़ा रखा है—इसकी माँ ने। मैंने एक दिन दबाने के लिए कहा तो हरामजादे ने, पैर चांपना तो दरकिनार, अप जाकर शिकायत कर दी। उसकी माँ रोते-रोते रानी माँ के पास बड़ा ही बदजात है।

सीताराम भी ऐसा ही सोचता था। अचानक एकदिन उसका गया। वह चौंक पड़ा। उसने आविष्कार कर डाला—दरिद्र कुशि ... बुद्धि की हीरक दीप्ति का।

जाड़े के दिन। वह लड़का देबू-श्यामू के पढ़ने के कमरे के बाहर दरवाजे के पास बैठा दोहर ओढ़े लड़या खा रहा था। श्यामू-देबू गणित लगा रहे थे—वह खुद किताब पढ़ रहा था। गणित खत्म कर श्यामू ने कहा—सर, अब प्राइज वाली कविता कण्ठस्थ करूँ।

बड़े स्कूल में प्राइज दिया जाएगा, श्यामू रवीन्द्रनाथ की 'भारततीर्थ' नामक कविता कंठस्थ सुनाएगा। उसी को लेकर वह जुटा हुआ है। सीताराम ने एक लम्बी साँस लेकर कहा—पढ़ो। वही पढ़ो। उनके स्कूल में प्राइज नहीं दिया जाता। न दिया जाएगा।

श्यामू पढ़ने लगा। पढ़ना खत्म कर वे घर के अन्दर चले गए। सीताराम तेल मालिश करने बैठा। अचानक उसके कान में आया, बाहर दरवाजे के पास बैठा वह लड़का अपने ही मन पाठ याद कर रहा है—

ध्यान गम्भीर एइ जे भूधर नदी जपमाला धृत प्रान्तर
हेथाय नित्य हेरो पवित्र धरित्रीरे
एइ भारतेर महामानवेर सागर तीरे।

विस्मय से वह वाक्शून्य रह गया। जयधर रवीन्द्रनाथ की कविता कंठस्थ कर पाठ करता जा रहा है। वह बाहर निकलकर खड़ा हो गया। बोला—यह तूने किस तरह सीख लिया?

वह लड़का अपने चमकते चेहरे को उठाकर बोला—सुनकर सीख गया। मंझले बाबू पढ़ जो रहे थे। कमरे में भाषण करता जो पढ़ता है।

—सुन-सुनकर सीखा?

—जी।

—कहाँ, बोल, बोल तो जरा। कितना सीख डाला।

जयधर बहुत सारा पाठ कर गया। अन्त में—

पश्चिमे आजिखुलियाछे द्वार
सेथा हते सबे आने उपहार
यहाँ तक पढ़ने के बाद वह हँसकर बोला—

—इसके बाद सीख नहीं सका।

सीताराम उत्साहित हो बोलने लगा—

'दिबे आर निबे मिलाबे मलिबे जाबे ना फिरे।
एइ भारतेर महामानवेर सागर तीरे।'

जयधर भी साथ-साथ दोहराता रहा। सीताराम ने उससे पूछा, और भी कुछ सीखा है?

कई कंठस्थ कविताएँ उसने सुना दीं। ये देबू की पाठ्य पुस्तक की कविताएँ थीं।

सीताराम ने जयधर का हाथ पकड़कर कहा, तू तो सोना है सोना, तू तो गुदड़ी का लाल है रे। उसने तेल लगे बदन में उसे गोद में उठा लिया। अबवु:

...ी क्यों रहे हो ?

...मिठाई में गुठली थी, मैंने खा डाली है।

...—मिठाई में गुठली थी, खा डाली है ? सीताराम हँस पड़ा। मामला ... में उसे कोई दिक्कत नहीं हुई। आज तिपहर को उसने भी गुठलीवाली ...ई खाई है। याने हड़ का मुरब्बा। हड़ की गुठली उसी में रह जाती है। ...रा देहाती लड़का ! शायद बाबुओं की कोठी में किसी वज्र-देहात से कोई ...ा होगा ! हड़ की गुठली निगल गया है। हँसकर उसने कहा, उससे डर ...ा है ? तुम्हारे पेट में कोई पेड़ नहीं उगेगा।

लड़का ठिठक गया, उसका रोना भी रुक गया।

सीताराम ने पूछा, तुम्हारा नाम जयधर है, जयधर क्या ?

—जयधर घोष।

—यहाँ कहाँ आए हो ?

—माँ यहाँ काम जो करने आई है।

सीताराम समझ गया, कौन-सा काम है। ब्राह्मण के घर में घोष घराने की औरत नौकरानी के काम के अलावा भला कौन-सा काम करेगी ? नौकरानी का बेटा। उसने फिर सवाल किया, तुम ? तुम क्या करोगे ?

—मैं ? माँ ने कहा है, बड़ाबाबू के आने पर उसका नौकर हो जाऊंगा।

—पढ़ना जानते हो ?

—हैं ऽ। कहकर ही उसने शुरू कर दिया—'क'—गाय चराने चल। गाय ने मुंह मारा धान में...

अब सीताराम ने उठकर उसे दौड़ा दिया। अब की बार वह बोलेगा—'फूंक जरा पण्डित के कान में।' निहायत चालू लड़का है। सीताराम ने दौड़क... कहा—'पकड़ तो लड़के का कान जरा।'

वह लड़का उस दिन दौड़कर भाग गया। इसके बाद लगभग दो महीने उ... उस लड़के की ओर कोई ध्यान न दिया। उस लड़के पर ध्यान देकर वह क... भी क्या ? हालांकि वह लड़का आता था, फतिंगे पकड़ता फिरता था, ... उसका नशा था। बाबुओं की गायों के चरवाहे के पास बैठा रहता था। ... राय को वह लड़का फूटी आंखों न सुहाता था, वह कहता—वाहियात ल... जानते हो सीताराम—यह विधवा के बेटे और राजा के बेटे में कोई फर्क... इस छोकरे का दिमाग चढ़ा रखा है—इसकी माँ ने। मैंने एक दिन उ... दबाने के लिए कहा तो हरामजादे ने, पैर चांपना तो दरकिनार, अप... जाकर शिकायत कर दी। उसकी माँ रोते-रोते रानी माँ के पास ज... बड़ा ही बदजात है।

सीताराम भी ऐसा ही सोचता था। अचानक एकदिन उसका ... गया। वह चौंक पड़ा। उसने आविष्कार कर डाला ...न्दिर कुशिक्ष... ...की बुद्धि की हीरक दीप्ति का।

जाड़े के दिन। वह लड़का देबू-श्यामू के पढ़ने के कमरे के बाहर दरवाजे के पास बैठा दोहर ओढ़े लइया खा रहा था। श्यामू-देबू गणित लगा रहे थे—वह खुद किताब पढ़ रहा था। गणित खत्म कर श्यामू ने कहा—सर, अब प्राइज वाली कविता कण्ठस्थ करूँ।

बड़े स्कूल में प्राइज दिया जाएगा, श्यामू रवीन्द्रनाथ की 'भारततीर्थ' नामक कविता कंठस्थ सुनाएगा। उसी को लेकर वह जुटा हुआ है। सीताराम ने एक लम्बी सांस लेकर कहा—पढ़ो। वही पढ़ो। उसके स्कूल में प्राइज नहीं दिया जाता। न दिया जाएगा।

श्यामू पढ़ने लगा। पढ़ना खत्म कर वे घर के अन्दर चले गए। सीताराम तेल मालिश करने बैठा। अचानक उसके कान में आया, बाहर दरवाजे के पास बैठा वह लड़का अपने ही मन पाठ याद कर रहा है—

ध्यान गम्भीर एइ जे भूधर नदी जपमाला धृत प्रान्तर
हेथाय नित्य हेरो पवित्र धरित्रीरे
एइ भारतेर महामानवेर सागर तीरे।

विस्मय से वह वाक्शून्य रह गया। जयधर रवीन्द्रनाथ की कविता कंठस्थ कर पाठ करता जा रहा है। वह बाहर निकलकर खड़ा हो गया। बोला—यह तूने किस तरह सीख लिया?

वह लड़का अपने चमकते चेहरे को उठाकर बोला—सुनकर सीख गया। मंझले बाबू पढ़ जो रहे थे। कमरे में भाषण करता जो पढ़ता है।

—सुन-सुनकर सीखा?

—जी।

—कहाँ, बोल, बोल तो जरा। कितना सीख डाला।

जयधर बहुत सारा पाठ कर गया। अन्त में—

पश्चिमे आजिखुलियाछे द्वार
सेथा हते सबे आने उपहार

यहाँ तक पढ़ने के बाद वह हँसकर बोला—

—इसके बाद सीख नहीं सका।

सीताराम उत्साहित हो बोलने लगा—

'दिबे आर निबे मिलाबे मलिबे जाबे ना फिरे।
एइ भारतेर महामानवेर सागर तीरे।'

जयधर भी साथ-साथ दोहराता रहा। सीताराम ने उससे पूछा, और भी कुछ सीखा है?

कई कंठस्थ कविताएँ उसने सुना दीं। ये देबू की पाठ्य पुस्तक की कविताएँ थीं।

सीताराम ने जयधर का हाथ पकड़कर कहा, तू तो सोना है सोना, तू तो गुदड़ी का लाल है रे। उसने तेल लगे बदन में उसे गोद में उठा लिया। अद्भुत

लड़का है ! श्रुतिधर है। वह बोला—मेरे साथ पाठशाला जायगा, चल। मैं तुझे पढ़ाऊंगा। किताब-स्लेट सब खरीद दूंगा। कपड़े-लत्ते भी दूंगा। तू तो जज-मजिस्ट्रेट बनेगा।

उसी दिन से उसे लाकर उसने पाठशाला में भरती कर दिया है। किताब दी। स्लेट दिया। कपड़े दिए। इसके अलावा रोज सवेरे घर से लाते वक्त आधा सेर दूध लाकर जयधर की मां के हाथ में दे देता है।—जयधर को पिलाना।

छोटा लड़का—वह शरीर से बढ़ेगा—मन से बढ़ेगा—यह उसके बढ़ने का समय है; लेकिन पुष्टि न मिलने पर बढ़ेगा कैसे ? दूध है अमृत। वह देह पुष्ट करेगा, लुनाई देगा, मेधा बढ़ाएगा। सिर्फ भात और लइया खाकर—बड़े लोगों के बेटों से कैसे मुकाबला कर सकेगा ?

आश्चर्य की बात है, बदमाश जयधर—उस पहले रोज गोद में लेकर दुलारने के बाद से ही मानो बदल गया। उसने नहीं कहा—नहीं पढूंगा ! ही हि करके हँसा भी नहीं। पहले ही दिन सीताराम ने देखा—वह क खा ग घ भी जानता है। पहचानता भी है। चन्द महीनों में ही वह लड़का द्रुत गति से आगे बढ़ने लगा। अब जयधर सरपट दौड़ रहा है। दौड़ रहा है। अद्भुत लड़का ! सीताराम बीच-बीच में कहता—जयधर मेरी सन्दीपन पाठशाला की जय-ध्वजा है।

कभी-कभी उसे लगने लगता, उसका भाग्य अब अच्छा चल रहा है। लम्बे अरसे के बाद उसने एक छप्पर बनवा डाला है। अठपहला एक छावन मात्र। ब्लैक बोर्ड लाकर लगा दिया गया है। घड़ी मैप, यह सब अभी टांगने का साहस नहीं होता। चारों तरफ से खुला छप्पर, अगर कोई ले जाये या तोड़ जाये। शिवकिंकर का दल अब भी है। हालांकि अब उनका आक्रोश पहले जैसा नहीं रहा, लम्बे अरसे में हीनबल न होने पर भी मानो उनका उत्साह शिथिल पड़ता जा रहा है। दूसरी ओर संसार की गति में मणिबाबू की भी दीप्ति मानो मलिन पड़ती जा रही है।

सीताराम स्पष्ट देख पाता है, केवल मणि बाबू ही नहीं, इस रत्नहाटा के बाबुओं का बाहरी चेहरा क्रमशः मैले पड़ते हुए कपड़े-लत्ते की तरह होता जा रहा है। प्रणाम है गान्धी महाराज को, प्रणाम देशबन्धु को, प्रणाम यतीन्द्रमोहन को, प्रणाम सुभाषचन्द्र को। साथ ही साथ धीरानन्द को भी वह प्रणाम करता। तुमको भी प्रणाम ! तुम्हीं ने तो यहाँ का मान रखा है। इस स्वदेशी आन्दोलन के बाद से बाबुओं के चेहरों पर मानो काल की छाप पड़ी है। जमींदारों में, महाजनों में जो लोग साहब लोगों के पीछे थे वे मानो पुराने गणित की अंक-रीति की पाठ्य पुस्तक से निकाल दिये जा रहे हैं। तीन पाई से एक पैसे की चलन के बाद कौड़ी-दमड़ी के हिसाब जैसा ही मान्यता खो चुके हैं। हाल में चालू वाक्य पद्धति से लिखी किताबें चलने के बाद उस जमाने के विद्यासागरी बड़े-बड़े कठिन शब्दों से भरी किताबों की तरह ये बाबू अप्रचलित होते जा रहे

हैं। सीताराम भलीभांति जानता है, इस गाँव का प्रभावशाली व्यक्ति इसके बाद बनेगा धीरानन्द। इस बारे में उसे कोई सन्देह नहीं। धीराबाबू दीर्घजीवी बनें। उसमें उसे परम आनन्द मिलेगा। धीरा बाबू उनके जमींदार हैं इसलिए यह आनन्द नहीं, धीराबाबू ने उसे प्रेमभरे नयनों से देखा है, वह उससे प्यार करता है, यही उसका आनन्द है। आह, धीराबाबू अगर उसका मित्र न होकर छात्र होता तो उसका आनन्द सर्वाधिक होता !

धीराबाबू आएगा—यही बाट जोह रहा है वह। उसकी उन्नति हो रही है, किन्तु उसमें भी एड न मिलने का दुःख उसे रातोदिन सालता है। रजनीबाबू ने कहा था, वोट में रायबहादुर की सहायता करने को, उसने वैसा किया था। फिर भी उसे एड नहीं मिली। हजार हो, हैं तो रायबहादुर ही। मजिस्ट्रेट साहब, पुलिस साहब, इन लोगों से बिगाड़ करके वह कुछ भी करने की हिम्मत नहीं करते। धीराबाबू के आने पर, उनको लेकर वह एक बार इसके लिए लड़ेगा। धीराबाबू रिहा कर दिए गए हैं। लेकिन—। उसने एक ठंडी सांस ली।

जेल से मुक्ति पा जाने के बाद भी कुछ दिनों तक पुलिस ने उसको नजर-बन्द कर रखा था। उससे भी धीराबाबू को रिहाई मिली है। लेकिन यहाँ नहीं आया। माँ गई थी बेटे से मिलने के लिए। देवू-श्यामू को साथ ले गई थी। गम्भीर-सा चेहरा लिए माँ लौट आई है। देवू और श्यामू रोए थे, अब भी कभी-कभी रोते हैं। दादा घर नहीं लौटेगा।

धीराबाबू ने यहाँ की जायदाद से भी अपना रिश्ता छुड़ा लिया है। अपने हिस्से की जायदाद भाइयों को दे दी है।

देवू ही अचानक एक दिन बोल पड़ा, दादा ने वहाँ एक कायस्थ की लड़की से शादी कर ली है। भाभी बी. ए. पास है। इसीलिए माँ के साथ झगड़ा हुआ।

सीताराम चौंक पड़ा था।

देवू ने कहा था, बताइएगा नहीं वर्ना माँ मुझे डाँटेंगी।

अनोखी शिक्षा है ! अद्‌भुत धैर्य है माँ का ! किसी दिन भी इस बारे में एक शब्द भी नहीं कहा उन्होंने। ये छोटे-से लड़के ! इन लोगों ने भी नहीं।

एक-एक बार सीताराम के जी में आता, माँ से कहे, हाथ जोड़कर अनुरोध करे, धीराबाबू को, उसकी दुल्हन को ले आइए। वह दुल्हन चाहे आपकी स्वजाति की न भी हो, वह पढ़ी-लिखी लड़की है, उसे ले आइए, आपका घर उज्ज्वल हो उठेगा, हँसने लगेगा, पवित्र होगा। सारी जातियों के अतिरिक्त और भी दो जातियाँ संसार में हैं—शिक्षित और अशिक्षित। आपके बेटे की जाति और आपके बेटे की दुल्हन की जाति में कोई फर्क नहीं। वे सचमुच एक ही जाति के हैं। यह मैं अपने प्राणों से जान सका हूं।

लेकिन ये बातें करने की उसे हिम्मत नहीं पड़ी। बीच-बीच में अब भी जो करने लगता है। वह केवल दीर्घनिश्वास छोड़कर चुप बना रहता। वह जानता है कि कितना भी स्नेह वे करें, फिर भी इन लोगों से उसका बड़ा फासला है।

सोचते-सोचते उदास हो वह स्तब्ध बैठा रहता। यकायक किसी समय उसके कानों से आ टकराता, लड़के शोर मचा रहे हैं। उसकी अन्यमनस्कता का सुयोग पाकर वे चंचल हो उठे हैं। वह अपने को संयत कर सजग हो बैठता, ऐ! ऐ! चुप! पढ़ो, पढ़ो सब लोग!

साधारण लड़के पढ़ने में मन लगाते। दो बाबू घराने के लड़के अपनी-अपनी शिकायत लाकर पेश करते।

उसने सर, मुझे मारा। मुक्का मारा है।

उसने मुझे उल्लू कहा है सर। दोनों ही बाबुओं के बेटे हैं।

सीताराम का जी करता, इनको बेधड़क पीट दे। उसका दुर्भाग्य है कि बाबुओं के जितने पाजी लड़के हैं वे हाई स्कूल की पाठशाला के जूठन की तरह उसी की पाठशाला में आकर इकट्ठे हो जाते हैं। उसका जी करता, चिल्ला कर कहे, अरे तुम सब बाबुओं के बेटे हो, तुम्हारे घर में अन्न है, सन्दूक में रुपये हैं। दलान-कोठे के ईंटे और चूने में दबकर तुम लोगों की इज्जत बरकरार है, तुम लोगों को इसका क्या दरकार है? क्यों गरीब के लड़कों की पढ़ाई में अड़चन डाल रहा है? आकू ने आकर उसका परित्राण किया। उसने उन दोनों को छुड़ा दिया। उसके पीछे लंगड़ा गोविन्द चिल्लाता—यह चिल्लाना उसका अभिनय है। सीताराम का गुस्सा ठंडा कर उसको हँसाने के लिए ही वह यह अभिनय करता। एकदम प्रह्लाद के गुरु पंडामार्क जैसा—मार ही डालूंगा। खा ही डालूंगा। भुर्त्ता बनाकर खा जाऊँगा। बैल पिटाई करूँगा। उल्लू पिटाई करूँगा। सीताराम को अन्त तक हँसना ही पड़ता।

●●

इस वक्त पाठशाला में बाईस लड़के हो गए हैं। वह जानता है कि संख्या और भी बढ़ेगी। केवटों में, साहा-सुनारों में पढ़ाई के प्रति रुझान बढ़ा है।

कभी-कभी उसकी इस उदासीनता को तोड़ देता है जयधर।

मास्टर जी!

ऑं ऽ?

यहां जरा देखिए।

उसकी पीठ पर प्यार से हाथ फेर सीताराम हँसकर कहता, कौन-सी जगह बचवा?

वह, यहां।

सीताराम उसे कहता, बैठो। यहां बैठो। इसके बाद वह उसको समझाने लगता है।

कोई दिन वह आता, मास्टर जी यह सवाल गणित की किताब में दिए उत्तर से मिल नहीं रहा है।

सीताराम जयधर का निकाला हुआ सवाल अच्छी तरह से देखता है। कहीं पर कोई गलती नहीं। खुद भी एक बार निकालकर देख लेता है। जयधर के

हल के साथ उसका हल मिल जाता। वह कहता, उत्तर गलत लिखा है। काट कर अपना उत्तर लिख दो। फिर वह अद्भुत भाषा में जयधर को प्यार करने लगता।—अरे कुरकुरी की माँ! मुरमुरी का छौना! इसका मतलब क्या है, उसे भी नहीं मालूम। यह उसने हुगली में अपने पंडित से सीखा है। वे भी खुश होने पर यही कहकर प्यार करते थे। वह भी करता है। जी खोलकर अकारण ही हँसता। उसको सबसे बड़ी खुशी है, जयधर बिल्कुल गरीब लड़का है, बाबुओं की कोठी की नौकरानी का बेटा।

जयधर छोटे से बड़ा होगा! सामान्य जयधर असामान्य असाधारण बन जायगा—यही उसका सबसे बड़ा आनन्द है। वह अगर इन बाबुओं का बेटा होता तो इतना आनन्द न हुआ होता। कभी-कभी उसके जी में आता कि चिल्लाकर कहे, अरे, अरे, ओ बाबुओं के लड़के, तू सब देख ले! देख ले इसे।

जयधर को वृत्ति मिलेगी—इसमें कोई सन्देह नहीं। जयधर पढ़ता है—निर्भ्रान्त जवाब देता है। उसकी पढ़ाई से एक असामान्य तीक्ष्ण बुद्धि का परिचय मिल जाता। बीच में देबू की पढ़ाई में अमनोयोग देखकर दुःख के बदले उसे खुशी हुई। कभी इस कोठी की नौकरानी का बेटा जयधर, इस घर के अन्यतम उत्तराधिकारी को मलिन कर खिल उठेगा। अपने ही क्षण वह अपने-आपसे लज्जित हो जाता। नहीं, ऐसी कामना करना उसके लिए उचित नहीं। कामना न करने पर भी अवश्य ही ऐसा ही होकर रहेगा, यह वह जानता है, फिर भी कल्पना में आनन्द अनुभव करना उसके लिए अनुचित होगा। इस घर का उस पर बहुत ऋण है। अचानक एक लड़के के रोदन से उसके चिन्तन का आनन्द-स्वप्न टूट गया।

मारा है रे मारा! एक लड़के की नाक से खून टपक रहा है। क्या हुआ? अरे, ऐं राधेश्याम, क्या हुआ? किसने मारा?

राधेश्याम घोषरों का लड़का है! नाक से टप-टप खून टपक रहा है। क्षण-भर के लिए भी अगर शान्ति मिल जाय! किसने मारा? गोबरा ने?

नहीं सर।—आकू ने झट जवाब दिया। वह राधेश्याम की शुश्रूषा कर रहा था, बोला, नाक में पेन्सिल घुसेड़ दी है।

पेन्सिल?

जी। इतनी बड़ी एक स्लेट-पेन्सिल नाक में घुसेड़ दी है।

क्या मुसीबत! सीताराम घबड़ाकर उस लड़के को ले बैठा। लगता है, आखिरकार डाक्टर के पास ले जाना पड़ेगा। लेकिन आकू ने उपाय बता दिया। बोला, नसवार दीजिए सर, छींकते ही निकल आयगी। सीताराम को यह बात तर्क-संगत लगी। आकू ने अपनी नसवार की डिबिया सीताराम के हाथ में दी।

ऐन उसी वक्त गोविन्द आ धमका; लंगड़े पैरों से फुदकते हुए आकर बोला, इन्स्पेक्टर आ रहा है पण्डित!

सर!

सब-इन्सपेक्टर ! उसके लिए सीताराम परेशान नहीं हुआ। एड ही नहीं मिलती है। उसकी पाठशाला को अभी तक मंजूरी ही नहीं मिली, सब-इन्सपेक्टर के आने पर परेशान होने की क्या जरूरत है उसे ? उससे भी ज्यादा तकाजा है, राधेश्याम की नाक से खून गिर रहा है। सीताराम ने नाक में नसवार दिया।

बाहर सायकिल की घंटी बजी। उस लड़के ने फच्च् से छींक मारी, साथ ही साथ पेन्सिल बाहर निकल आई। बाइसिकिल की घंटी फिर बजी। सब-इन्सपेक्टर बाहर से ही बुला रहे हैं, पंडित ! सीताराम ! नया सब-इन्सपेक्टर अजीर्ण का रोगी है, जमीकन्द पसन्द करने वाला, आधुनिक लेखक से उदासीन सब-इन्सपेक्टर !

●●

हालांकि सब-इन्सपेक्टर अच्छा समाचार लेकर आए हैं। नये डिस्ट्रिक्टबोर्ड का इलेक्शन फिर कुछ दिन पहले हो चुका है। इलेक्शन का नतीजा निकला है। रायबहादुर का गुट हार गया है। कांग्रेस लगभग सभी थानों में जीत गई है। सब-इन्सपेक्टर ने हँसकर कहा, अब तुम्हारा काम होगा सीताराम।

काम होगा ? सीताराम मानो विश्वास नहीं कर पा रहा है।

होगा जी होगा ! बस नए बोर्ड के बनने की अपेक्षा है।

सीताराम ने सब-इन्सपेक्टर को प्रणाम किया।

सब इन्सपेक्टर बोले, पंडित, हम लोग सरकारी नौकरी करते हैं। नौकरी के लिए अपने को बेच चुके हैं। देश का पक्ष लेकर बात करने का कोई उपाय नहीं। मामूली अपराध के लिए तुम्हारे ऊपर जो कुछ गुजरा है, उससे मन-ही-मन दुखी हुए हैं, लेकिन कर कुछ भी नहीं सके। रजनीबाबू बार-बार तुम्हारे बारे में बता गये थे—सो इस बार होगा। बोर्ड फॉर्म हो जाने के बाद एकबार चेयरमैन के कानों तक पहुँचाने की बात है। बस ! तुम्हारे स्कूल के छात्रों ने कहा है, महात्मा गांधी देश के श्रेष्ठ व्यक्ति हैं। चेयरमैन तुम्हारी पाठशाला को डबल ग्रांट देंगे। मैं कोशिश कर रहा हूँ इस मामले को उनके कानों तक पहुँचाने की।

●●

प्रवीण सब-इन्सपेक्टर साहब भले आदमी हैं। रजनीबाबू जैसे ही नेक आदमी। सज्जन जरा बीमार रहा करते हैं इसलिए बीच-बीच में अकारण ही गुस्सा हो उठते हैं। फिर फौरन ही ठंडे पड़ जाते हैं। एक तरह से देखा जाय तो रजनीबाबू से भी अच्छे हैं, कम-से-कम पंडितों के लिए। पंडितों का पक्ष लेकर वे ऊपरवालों से वादानुवाद करते रहते हैं।

●●

सीताराम आज न केवल खुश ही हुआ बल्कि उसने सब-इन्सपेक्टर के प्रति कृतज्ञताबोध किया। अगले दिन ही सवेरे वह एक

लेकर सब-इन्सपेक्टर साहब के मकान पर आ पहुँचा। नमस्कार आदि करने के बाद उसने कहा, यह सर, हमारे घर का पैदा हुआ है।

सब-इन्सपेक्टर साहब अभिभूत हो गये, बेहतरीन, बेहतरीन सूरन है। बहुत खूब! वह रोजाना सूरन का चोखा खाते हैं। जहाँ भी जाते हैं वहीं पता लगाते हैं, पंडित, तुम्हारे यहाँ अच्छा सूरन मिलता है न? आज सीताराम के हाथ में जमीकन्द देखकर वे खुद ही गल गये। वाह, वाह, वाह!

जमीकन्द रख आने के बाद बोले, कहो सीताराम, तुमको फाइल ही दिखा दूँ। देखना, मैंने तुम्हारे लिए कितना-कुछ लिखा है। हो जायगा, मैं बता रहा हूँ, तुम्हारा हो जायगा। और चुपके-चुपके तुमको एक खबर बताये दे रहा हूँ। कांग्रेसी बोर्ड के जो चेयरमैन होंगे—वे तुम्हारे धीरानन्द को बहुत चाहते हैं जी। उनका अभिमत है कि धीरानन्द एक दिग्गज लेखक है। सुना, कभी रवि ठाकुर के पास गये थे, ठाकुर ने उनसे कहा है—उनमें तत्व है। समझे? धीराबाबू के कारण तुम्हारा ग्रांट जाता रहा, वही ग्रांट अब डबल होकर लौटेगा। हँसने लगे थे।

सीताराम उसी दिन के लिए आशा लिए प्रतीक्षा कर रहा है। वही उसके जीवन का सर्वश्रेष्ठ दिन होगा। आशाभरी दृष्टि से वह भविष्य की ओर देखता।

नन्हे-नन्हे कोमल चेहरे यहाँ पढ़ेंगे। आने दो वह दिन, पाठशाला के लिए वह भवन बनाएगा। पक्का फर्श। उनके लिए बेंच का इन्तजाम करना पड़ेगा। कुर्सी, मेज, ब्लैकबोर्ड, टाइमपीस घड़ी, मैप, ग्लोब, चाक, पेन्सिल, डस्टर जाने कितने सामान-असबाब मंगवाने हैं! उसने कहा—तो आज मुझे इजाजत दें।

—ठहरो! एक दुअन्नी देकर सब-इन्सपेक्टर साहब बोले—यह लेकर जाओ। सूरन का दाम। अरे है है। लेना ही पड़ेगा। वर्ना यह तो मेरे लिए घूस लेने में शामिल हो जायगा। विचित्र व्यक्ति!

••

तिपहर के बाद वह अपनी आदत के मुताबिक झरने के किनारे जाकर बैठ गया। आज उसने अपनी कल्पना को पिंजरे का दरवाजा खोल पक्षी की तरह उड़ा दिया। इस बार उसको एड मिलेगी। उसकी साध पूरी होगी। वह मानो इतने दिन पंडितों के सम्मुख हुक्का-पानी बन्द बिरादरी बाहर बना हुआ था। अब वह बिरादरी में शामिल कर लिया जायगा। माफी मांगकर, कसूर कबूल कर बिरादरी में लिए जाने का मामला नहीं। अपनी जिद को बरकरार रखकर वह बिरादरी में दाखिल होगा। भविष्य की पाठशाला का शानदार रूप फौरन उसकी आँखों के सामने तिर जाता।

"सन्दीपन पाठशाला, रत्नहाटा। शिक्षक—श्री सीताराम पाल।" धूप-बारिश से लिखावट अस्पष्ट हो जायगी। हर वर्ष उसके ऊपर वह स्याही से नये तौर पर लिखेगा। उसके बाल सफेद हो जाएंगे, आँखों की रोशनी कम हो,

जाएगी, ऐनक लगाकर वह पढ़ाएगा। लड़के बैठे पढ़ेंगे। नन्हे नाजुक चेहरे! एक दल जाएगा, एक दल आएगा। उनकी पढ़ाई खत्म कर वह आशीर्वाद देगा, मेरा जीवन तो दुःख से ही भरा है, दुःख-कष्ट का भाग्य लेकर ही संसार में आया हूँ। लेकिन तुम लोग तरक्की करो, सुखी होओ। वही देखकर मुझे सबसे बड़ा सुख मिलेगा।

घर-गृहस्थी का कष्ट उसका कुछ बढ़ा है। कुछ बढ़ कर हीं छुटकारा नहीं, दिन-ब-दिन बढ़ता ही जा रहा है। बाप के श्राद्ध के समय उसने कुछ ऋण लिया था, सोचा था, पाठशाला की आय से ही वह हर माह चुकाता जायगा। लेकिन सो भी नहीं हुआ। इतने दिनों तक पाठशाला की आय भी क्या-कुछ थी! दूसरी ओर धान की कीमत भी दिन-ब-दिन घटती जा रही है। थोड़ी-सी जमीन-खेत की आय! वह और भी घट गई है। एड मिल जाय इसबार तो कुछ सुविधा हो। महीने में पाँच रुपए की आयवृद्धि उसके जैसे आदमी के लिए कोई कम नहीं।

अगले ही क्षण उसे हँसी आई। पाँच रुपए! हाय रे! दुनिया दिन-ब-दिन बदलती जा रही है। बाजार के रास्ते चलो तो नित नयी चीजें दिखाई पड़ती हैं। दिल कंगलापन करने लगता है। पाँच रुपए की आय बढ़ने पर, उसका एक कणभर भी क्या वह पा सकेगा? कभी-कभी कितनी ही चीजें खरीदने की ख्वाहिश होती। लेकिन लम्बी साँस लेकर वह अपने मन को धमकाता, तुम पाठशाला के पंडित हो, उस ओर मत देखो तुम। "छोटे-से घर में बड़ा-सा मन लेकर" तुमको रहना है। कभी-कभी उसकी यह चिन्ता सुदूरप्रसारी बन जाती है। वह भविष्य के बारे में सोचने लगता है। कन्या का विवाह है। उसके और मनोरमा के जीवन में हारी-बीमारी है। अगर वह ही बीमार हो, कई महीने बिस्तर पकड़ ले, तो?

उसे रजनीबाबू के दफ्तर में कन्यादायग्रस्त वृद्ध पंडित की बातें याद आ जाती हैं। वृद्ध पंडित ने रुपए के अभाव में अपने ही समवयस्क किसी वृद्ध के साथ बेटी की शादी की थी। कन्या विधवा हो गयी है। उसके सौतेले बेटों ने उसे खदेड़ दिया है। वह लड़की किसी बाबू के घर अब खाना बनाती है। बूढ़े पंडित की हालत भी इस वक्त शोचनीय है। पंडिताई करने की अब उसमें सामर्थ्य नहीं, वह अब भीख माँगता है। गाँव-गाँव घूमता, सम्पन्न लोगों के घर में दो-एक दिन रह जाता है, स्तव-स्तुति कर दो आना, चार आना लेकर पन्द्रह-बीस दिन के बाद घर आता है।

वह सिहर उठता। क्या उसकी भी दशा आखिर तक ऐसी ही हो जाएगी? उसकी एकमात्र तसल्ली यही है कि उसके पास कुछ जमीन है। दूसरी तसल्ली, सन्तान! बस उस कन्या के अतिरिक्त नहीं हुई। बड़ी साध थी उसकी एक पुत्र-सन्तान के लिए। उसको वह अपने मन के मुताबिक गढ़ता। लेकिन खैर! भगवान अब उसके घर कोई सन्तान न भेजें। दरिद्र शिक्षक है वह, किस सम्बल

से वह उसे इन्सान-सा इन्सान बना सकेगा ?

कल्पना-चिन्ता के बीच ही उसका मन सचेतन हो उठता। किसी दिन सिर के ऊपर से उल्लू घुघुआ कर चला जाता है, किसी दिन सिर के ऊपर चमगादड़ के डैनों की आवाज होने लगती है तो कभी नजदीक ही सियार फेंकरने लगते हैं। वह सचेतन हो आकाश की ओर देखने लगता। अन्धकार-भरा आकाश, कसौटी-से काले आकाश में तारे खिल आए हैं। चाँदनी रात चारों ओर जुन्हाई में झलमलाने लगती है, जमीन पर उसकी छाया पड़ती दिखाई देती। उसके मन में तिर जाती, *प्रकाश-प्रतिबिम्बित* परदा लटकाती एक खिड़की, परदे पर काली छाया में जाग उठा है– एक मुखड़ा, नुकीली नाक, पीछे की ओर ढीला जूड़ा। वह चलने लग पड़ता। आकर बालिका विद्यालय के सामने खड़ा हो जाता। कुछ देर खड़े-खड़े देखने के बाद लौट आता।

आजकल शाम को उसे अवकाश भी मिला हुआ है। श्यामू बहुत दिन पहले ही से रात को दूसरे मास्टर के पास अंगरेजी पढ़ने लगा है। कुछ दिन हुए वेंटू भी वहीं पढ़ने जा रहा है। आजकल वह काफी समय लेकर यह चित्र देख पाता है।

मनोरमा शिकायत करती, रात को जब पढ़ाना नहीं पड़ता तो छुट्टी के बाद घर भी तो चले आ सकते हो।

सीताराम कहता, दिन को पाठशाला की नौकरी, तिस पर घर की नौकरी। थोड़ी-सी भी छुट्टी नहीं दोगी मुझे ?

किसान-बहू अपने पैरों पर हाथ फेरते हुए कहती, सुनो पंडित मानिक !

क्या ?

मैं कहूँ तो मान-सुन लिया न तुमने ?

क्या मान लिया ? सीताराम हँसता।

यही, हमारी मालकिन की मिल्कियत-हुकूमत ? मालकिन जो कहा करेगी वही मानोगे ? तो अब तुमने परिवार को हुजूर कहा !

मनोरमा हँसती, कहती धत् मरी !

सीताराम बोला, तुझसे जो कहा कि तेरे बेटे में बड़ी बुद्धि है, उसे पाठशाला में दे। तो क्या हुआ उसका ?

लो देखो। बावड़ी का बेटा पढ़-लिखकर कोई हाकिम-हुक्काम तो बनेगा नहीं। नाहक वखत क्यों अरबाद-बरबाद करे ?

सीताराम ने अब दिल्लगी करते हुए उससे कहा, तो तू ही मेरी पाठशाला में भरती हो जा। तेरी जैसी अक्ल-शक्ल है, तुझे वृत्ति-इति मिल-इल ही जायगी। आज तूने मुझे ऐसी पकड़-अकड़ में बाँध डाला है कि क्या बताऊँ ! वह हँसने लगा।

••

चौदह

और भी दो साल के बाद।

सीताराम को लगा कि दुनिया में उससे बढ़कर सुखी शायद दूसरा कोई नहीं है। लगा, इसी दिन के लिए वह आजन्म तपस्या कर रहा था।

मणिलालबाबू उसकी पाठशाला में आए। उससे पूर्व विचित्र घटना घटित हो चुकी थी। पहले जयधर को वृत्ति मिली। जिले-भर में वह अव्वल आया। उसको रिकार्ड मार्क्स मिले। उसके बाद ही पाठशाला की जय-जयकार हुई। मणिबाबू आए उस जय-जयकार के बाद।

इस समय पाठशाला को मंजूरी मिल चुकी है, ग्रांट मिल गयी है। पाठशाला का मकान भी बन गया है। डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के चेयरमैन स्वयं उसकी पाठशाला में आए। धीराबाबू दीर्घजीवी हों। धीराबाबू ही लेकर आए।

इस सबसे पूर्व अचानक एक दिन धीराबाबू आए थे। अकेले ही आये थे। माँ ने चिट्ठी लिखी थी, तुझे एक बार देखने की इच्छा हो रही है, लेकिन अकेले ही आना।

धीराबाबू, वही धीराबाबू!

सीताराम को बाहों में बाँधकर बोले थे, पंडित, तुम्हें मैं सचमुच प्यार करता हूँ।

धीराबाबू को उससे प्यार है, यह सुन वह कृतार्थ हो गया था। कितनी ही सारी बातें की थीं, अपने दुख-दर्द की बातें। फिर धीराबाबू से उसकी बीवी के बारे में पूछा था।—भाभी? उनको क्यों नहीं ले आए?

वे तो नौकरी करती हैं। वे ढाका में गर्लस स्कूल में शिक्षिका हैं। मैं कलकत्ते में रहता हूँ। इन दिनों एक छोटे-से मेस में रहता हूँ। पहले एक टिन के मकान में रहता था, पाइस-होटल में खाता था।

टिन के मकान में रहते थे? पाइस होटल में खाते थे?

हाँ। उस समय जैसी कमाई थी उसी तरह रहता था पंडित! जानते ही ो, लिख कर कमाना हमारे देश में कितना मुश्किल काम है। वे हँसे।

धीराबाबू लेखक हैं। किताब लिखकर वे अपनी आजीविका कमाना हते हैं। आश्चर्यजनक व्यक्ति हैं। धीराबाबू अपनी किताबें उसे दे गये हैं। ने पढ़ी हैं। अच्छा लिखा है, बेहतरीन लिखा है धीराबाबू ने। शादी की —बीवी नौकरी करती हैं। हालाँकि उनके घर में अन्न की कोई कमी नहीं! चित्र!

ये किताबें पाकर उसदिन उसकी लज्जा की कोई सीमा न थी। साथ ही उसे याद पड़ गया था कि धीराबाबू की वे चन्द किताबें आज भी उसी के ां हैं। एकबार मन में आया, धीराबाबू के दोनों हाथ थाम कर वह बात कर दे। लेकिन सो भी उससे नहीं बन सका। उन सारी पुस्तकों में एक

की तलाश भी की थी धीराबाबू ने— याद है वह किताब तो मैंने खरीदी थी।

सीताराम फक पड़े चेहरे से खड़ा था, बड़ी कोशिश कर उसने कहना चाहा था, मैं एकबार अपने घर में खोज कर देखूंगा। लेकिन उसके मुंह से दो बार सिर्फ निकला था, मैं, मैं—।

धीराबाबू साथ ही साथ बोल पड़े थे, देखा होगा या श्यामा, किसी को दे आए होंगे!

धीराबाबू ही डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के चेयरमैन को लेकर आए। बीस-पच्चीस रुपये खर्च कर सन्दीपन पाठशाला के प्राइज डिस्ट्रीब्यूशन के लिए किताबें ले आए।

सीताराम ने पाठशाला की रिपोर्ट लिखी थी। धीराबाबू ने देख ली। बोलते स्वर में उसने रिपोर्ट पढ़ी। सन्दीपन नाम का इतिहास पौराणिक है। सीताराम ने लिखा था, भगवान् श्रीकृष्ण का गुरु। धीराबाबू ने काटकर लिखा था, "महामानव श्रीकृष्ण के शिक्षागुरु सान्दीपन मुनि की पाठशाला के नाम पर इस पाठशाला का नामकरण हुआ है।"

उस दिन गाँव के बहुत-सारे भद्रलोग आए थे। बड़े स्कूल के मास्टर भी मौजूद थे। बालिका-विद्यालय की शिक्षिका भी आई थीं। मानो लम्बी महिला कुछ ज्यादा ही काली लग रही थी। इस महिला के जीवन में भी मानों कहीं दुःख है। शायद वह काली है इसलिए उसे कुछ लज्जा भी हो। बड़े ही सम्भ्रम के साथ सारा समय बैठी रहीं।

चेयरमैन ने कहा था, जिस पाठशाला का छात्र भारत के श्रेष्ठ व्यक्ति के रूप में अहिंसा और सत्य की प्रतिमूर्ति महात्मा गांधी का नाम ले सकता है, उस पाठशाला को मैं देश का अन्यतम श्रेष्ठ शिक्षा-प्रतिष्ठान मानता हूँ।

चेयरमैन ने मासिक छह रुपया एड मंजूर कर दी है। पाठशाला के मकान के लिए एकमुश्त एक सौ रुपया दान मिला डिस्ट्रिक्टबोर्ड से। असबाब के लिए तीस रुपए।

भवन बन गया है। असबाब भी कुछ आ गया है। लेकिन और भी चाहिए। सो भी शायद हो जाएगा। गाँव के लोग प्रसन्न हैं। चेयरमैन की प्रशंसा मिली है उसे, उसके जयपुर ने उसका जयध्वज फहरा दिया है।

इस बार भी एक अच्छा लड़का है—नरेन्द्रनाथ मुकर्जी। इसे भी वृत्ति मिलेगी। यह बाबुओं का लड़का है। लेकिन सीताराम को इससे भी बड़ी खुशी है, इस वजह से कि इस लड़के को भी बड़े स्कूल की पाठशाला से नालायक करार कर उसका वर्जन किया गया था। था भी नालायक। नटखट लड़का! लेकिन बड़ा ही खूबसूरत चेहरा था उसका। चेहरा देखकर उसकी ममता जाग आई। तभी उसने उसे ले लिया था। इसके बाद उसने आविष्कार किया, मीठी बात करने पर वह लड़का बड़ा नेक है। और यह भी आविष्कार कर डाला कि फीस का तकाजा करते ही वह स्कूल में नागा करने लगता है, उसका—

लटपन बढ़ जाता है। उसने उसको फीस माँगना बन्द कर दिया। देखते ही देखते वह लड़का बदल गया। उसे वृत्ति मिलेगी।

सीताराम उसी को पढ़ा रहा था। यही उसकी विजय का दूसरा सोपान है।

अचानक मणिलाल बाबू पाठशाला आए। यही सीताराम की पाठशाला है। वाह! बहुत खूब! बहुत खूब! यह तो बड़ा अच्छा किया है जी।

सीताराम अपनी कुर्सी छोड़ उठ खड़ा हो गया। एक कुर्सी बढ़ा दी उसने, बैठिए आप, बैठिए।

मणिबाबू बैठ गये। नाम तुम्हारा बड़ा अच्छा हुआ है पंडित—सन्दीपन पाठशाला। सम्यक रूप से दीपन, जीवन को अग्निमय बनाना।

सीताराम बोला, यह नाम मेरा दिया हुआ नहीं है, यह धीराबाबू का दिया नाम है।

धीरानन्द! एक दीर्घश्वास छोड़ मणिलालबाबू बोले, हालांकि सुनता हूँ, छोकरे ने अच्छा नाम-यश कमा लिया है। लेकिन—। वे जरा रुके। फिर बोले, वंश पर कालिख पोत दी उसने। आखिरकार एक कायस्थ की बेटी से शादी कर ली! सुनते हैं, बीवी नौकरी भी करती है।

सीताराम चुप किये रहा। कड़ा जवाब उसके जुबान की नोक पर आ गया था। बड़ी कोशिश से उसने अपने को संयत किया। हजार हो, इज्जतदार शख्स हैं, वे उसकी पाठशाला में आए हैं, वे अतिथि हैं।

मणिलालबाबू ने किसी से कहा, कहाँ है रे? अँय?

उनका नौकर एक लड़के का हाथ थामे अन्दर आ गया।

मणिबाबू का पौत्र! उनका बेटा धीराबाबू का हम-उम्र है, वे खुद फोर्थ क्लास तक पढ़कर पढ़ाई छोड़ चुके थे। यह उन्हीं का बेटा है।

मणिबाबू बोले, मेरे इस पचु को, चिरंजीव पंचानन को तुम्हारी पाठशाला में भरती कराने आया हूँ। लो भरती कर लो। एक बात और: तुम्हें इसको प्राइवेट भी पढ़ाना पड़ेगा। मूल बात, इसकी बुनियाद तैयार कर देनी है।

सीताराम को लगा, ऐसा शुभ दिन उसके जीवन में शायद कभी आया नहीं। मणिबाबू को प्रणाम कर उसने पंचानन को भरती कर लिया। बोला, बाबू, प्राइवेट पढ़ाना मेरे लिए अब सम्भव नहीं होगा। लेकिन आदमी मैं देख दूंगा।

मणिबाबू जरा गम्भीर बने रहे। बोले, अच्छी बात, फिर कोई आदमी ही देख देना। मैं जानता हूँ कि तुम अच्छा आदमी ही दोगे। लेकिन तुम हो ईमानदार। तुम ही होते तो बेहतर होता।

सीताराम चुप्पी साधे रहा।

मणिलाल बाबू चले गये। सीताराम ने अपनी एक कापी में सन-तारीख नोट कर ली। इस कापी में वह अपने जीवन की स्मरणीय घटनाएँ लिख रखता है। धीराबाबू ने कहा है, मास्टर, तुम्हारे बारे में मैं एक किताब लिखूंगा। तुम

बूढ़े हो जाओ। उस वक्त एक दिन मैं आऊँगा। आकर तुम्हारी जीवन-कथा सुन जाऊँगा।

सीताराम ने इसीलिए जिल्दवाली कापी बनाई है। वह अपने जीवन की स्मरणीय घटनाएं और तारीख लिखकर रखता। डिस्ट्रिक बोर्ड के चेयरमैन जिस दिन आए थे, वही तारीख उसका पहला इन्दराज है। उसके बाद जयधर को वृत्ति मिलने की तारीख। केवल दो ही तारीखें लिखी गयी हैं। उससे पूर्व—शुरू की ओर की कहानियों को सहेज कर रखा है। उसमें भी कई तारीखें हैं। जो तारीखें बाबुओं की कोठी की दीवार पर लिखी थीं, वही तारीखें। सफेद कापी उलट-पुलट कर उसे बीच-बीच में हँसी आती। अपने ही मन में हँसता। क्या लिखेंगे धीराबाबू ? जीवन के रंग में कोई रौनक नहीं, सुर में कोई बहार नहीं, इसे लेकर चित्र नहीं बनता है, इसे लेकर गीत नहीं बनता है।

फिर भी वह लिखकर रखता। आज भी रखेगा—५ फरवरी १९२६।

●●

आठ महीने बाद।

सन् १९२६ के २१ सितम्बर को कापी खोलकर उसने तारीख लिख डाली। और साथ-ही-साथ उसे बन्द कर डाला।

परसों छुट्टी होगी पूजा की। कुआर का महीना, नीले आसमान में शरत् की धूप झिलमिला रही थी। बीच-बीच में सफेद बादल उड़ते जा रहे थे। बीच-बीच में बगुलों की पाँत। अनोखी प्रसन्नता से दिग्दिगन्त भर उठा है। लेकिन सीताराम को लगा—सबकुछ मलिन हो गया।

सीताराम उस दिन, उस वक्त लड़कों से चन्दे के लिए अपील कर रहा था, पूर्वी बंगाल में बाढ़ आई है, कितने ही गाँव बह गए हैं, कितनी ही जानें चली गई हैं, फसल बरबाद हो गयी है। बड़े-बड़े नेता लोगों ने—सुभाषचन्द बोस, आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र राय ने सहायता के लिए देश के सम्मुख हाथ पसारे हैं। चारों ओर चन्दा वसूला गया है। बड़ा स्कूल भी चन्दा वसूल रहा है। तुम लोग भी कुछ दो। जो जितना भी दे सकता है—दो आने, चार आने, जो जितना दे सकता। अभी से तो यह सब सीखना पड़ेगा। बड़ी-बड़ी जगहों से चन्दा जायगा, उसके साथ सन्दीपन पाठशाला के शिक्षक और छात्रों की सहायता के नाम पर तो कुछ भेजना ही पड़ेगा। कम-से-कम पाँच रुपए। जो कुछ तुम लोगों से बन पड़े दो, बाकी मैं दे दूंगा।

अचानक आकू आ पहुँचा। आकू अब ज्यादा बिगड़ चुका है। बीड़ी पीता, तमाकू पीता, रात को फीस्ट करता है। यहाँ पर ज्यादा आता नहीं। अड्डा अब स्टेशन पर है; कुलियों की ओर से मुसाफिरों के साथ मोलभाव करता है, झगड़ा भी। कुली उसे बीड़ी पिलाते हैं, चाय का दाम दे देते हैं, आकू इसी में मगन है। कभी-कभी पाठशाला में वह आता और मास्टर जी का हालचाल पूछ जाता। गाँव का हालचाल सीताराम को बता जाता। गोविन्द भी आकू के साथ सिगर

खटपन बढ़ जाता है। उसने उसकी फीस माँगना बन्द कर दिया। देखते ही देखते वह लड़का बदल गया। उसे वृत्ति मिलेगी।

सीताराम उसी को पढ़ा रहा था। यही उसकी विजय का दूसरा सोपान है।

अचानक मणिलाल बाबू पाठशाला आए। यही सीताराम की पाठशाला है। वाह! बहुत खूब! बहुत खूब! यह तो बड़ा अच्छा किया है जी।

सीताराम अपनी कुर्सी छोड़ उठ खड़ा हो गया। एक कुर्सी बढ़ा दी उसने, बैठिए आप, बैठिए।

मणिबाबू बैठ गये। नाम तुम्हारा बड़ा अच्छा हुआ है पंडित—सन्दीपन पाठशाला। सम्यक रूप से दीपन, जीवन को अग्निमय बनाना।

सीताराम बोला, यह नाम मेरा दिया हुआ नहीं है, यह धीराबाबू का दिया नाम है।

धीरानन्द! एक दीर्घश्वास छोड़ मणिलालबाबू बोले, हालाँकि सुनता हूँ, छोकरे ने अच्छा नाम-यश कमा लिया है। लेकिन—। वे जरा रुके। फिर बोले, वंश पर कालिख पोत दी उसने। आखिरकार एक कायस्थ की बेटी से शादी कर ली! सुनते हैं, बीवी नौकरी भी करती है।

सीताराम चुप किये रहा। कड़ा जवाब उसके जुबान की नोक पर आ गया था। बड़ी कोशिश से उसने अपने को संयत किया। हजार हो, इज्जतदार शख्स हैं, वे उसकी पाठशाला में आए हैं, वे अतिथि हैं।

मणिलालबाबू ने किसी से कहा, कहाँ है रे? अँय?

उनका नौकर एक लड़के का हाथ थामे अन्दर आ गया।

मणिबाबू का पौत्र! उनका बेटा धीराबाबू का हम-उम्र है, वे खुद फोर्थ क्लास तक पढ़कर पढ़ाई छोड़ चुके थे। यह उन्हीं का बेटा है।

मणिबाबू बोले, मेरे इस पचु को, चिरंजीत पंचानन को तुम्हारी पाठशाला में भरती कराने आया हूँ। लो भरती कर लो। एक बात और : तुम्हें इसको प्राइवेट भी पढ़ाना पड़ेगा। मूल बात, इसकी बुनियाद तैयार कर देनी है।

सीताराम को लगा, ऐसा शुभ दिन उसके जीवन में शायद कभी आया नहीं। मणिबाबू को प्रणाम कर उसने पंचानन को भरती कर लिया। बोला, बाबू, प्राइवेट पढ़ाना मेरे लिए अब सम्भव नहीं होगा। लेकिन आदमी मैं देख दूंगा।

मणिबाबू जरा गम्भीर बने रहे। बोले, अच्छी बात, फिर कोई आदमी ही देख देना। मैं जानता हूँ कि तुम अच्छा आदमी ही दोगे। लेकिन तुम हो ईमानदार। तुम ही होते तो बेहतर होता।

सीताराम चुप्पी साधे रहा।

मणिलाल बाबू चले गये। सीताराम ने अपनी एक कापी में सन-तारीख नोट कर ली। इस कापी में वह अपने जीवन की स्मरणीय घटनाएँ लिख रखता है। धीराबाबू ने कहा है, मास्टर, तुम्हारे बारे में मैं एक किताब लिखूंगा। तुम

हैं। वह दौड़कर गया, एक टिकट खरीदा, जंक्शन, एक इन्टर क्लास का। जंक्शन यहाँ से सात मील है। वहाँ जाकर यह लाइन खत्म हो गई है। वहाँ गाड़ी बदलनी पड़ेगी। वह उसी डिब्बे के दूसरे छोर पर जा जमकर बैठ गया। ट्रेन चली।

उदास दृष्टि से वह महिला गाँव की ओर देख रही है। क्रमशः वह उदासीनता बिला गई और चेहरे पर दबीमपन उभर आया।

काली-सी लम्बी लड़की। बगुले के पंख जैसी सफेद धुली खद्दर की, नीली किनारी वाली साड़ी, बदन पर आज हल्के लाल रंग का ब्लाउज पैरों में सैंडिल, सिर पर घूँघट नहीं, परिछन्न निपुणता से बाल ढीले जूड़े में बंधे, कन्धे से लटक रहा है खद्दर का एक झोला।

कई बार सीताराम के जी में आया, एक बात करे, कहे— चली जा रही हैं आप ? लेकिन किसी तरह से भी उससे न हो सका। नहीं-नहीं, वह पाठशाला का पंडित है।

उसने सोचा कि जंक्शन स्टेशन पर कुली बुलवाकर वह उनकी मदद करेगा। लेकिन यह भी उससे नहीं हो सका। उन्होंने खुद ही कुली बुला लिया। सामान चढ़ाते वक्त भी वह एक बार आगे बढ़ा, जाकर फिर पीछे हट आया। गाड़ी चली गई।

उसने अपनी कापी फिर खोली। सोचा था, तारीख काट देगा। लेकिन नहीं, रहने दो। बल्कि उसने और भी थोड़ा-सा लिख डाला।

"जीवन में बूंद-भर रंग था, रात के अन्धेरे में, झुटपुटे में आकाश की नीहारिका की तरह उभर आता था; वह भी पुंछ गया २१ सितम्बर १९२९ को।" उदास मन लिए वह एलहाटा की ट्रेन में आ बैठा। काफी समय है हाथ में। अचानक ख्याल आया, यहीं की किताबों की दुकान से कुछ किताबें खरीद ली जाएँ तो कैसा हो। आजकल वह पाठशाला में पाठ्य-पुस्तकों का व्यापार करने लगा है। सभी पंडित करते हैं। साल में एक बार, पाँच सात रुपए का लाभ। महीने में दस-पन्द्रह रुपए जिसकी आय हो उसके लिए साल में पाँच-सात रुपए भी बहुत होते हैं। कुछ कुंजी वाली किताबें चाहिएँ। कुंजी वाली किताबों में मुनाफा ज्यादा है। इनकी बिक्री सारा साल होती रहती है।

लेकिन नहीं, रहने दो। आज का दिन उसके जीवन की माला से अलग ही रखा जाए। आज उस काली लड़की के सिवा और किसी के बारे में वह नहीं सोचेगा। जीवन की गुप्त बात गुप्त ही रह जाए। केवल धीराबाबू से कहेगा, वह उस पर किताब लिखेगा। लेकिन इतनी-सी बात के सिवा धीराबाबू से वह क्या कहेगा ?

क्या लिखेंगे धीराबाबू ?

उसके रंगशून्य जीवन के बारे में लिखेगा, उसकी सन्दीपन पाठशाला के बारे में लिखेगा धीराबाबू ?

••

गया है। वह अब आकू का अनुचर है। सिर्फ रात को यहाँ आकर लेटता है।

सीताराम ने उसे देख हँसकर पूछा, क्या खबर है आकू?

आकू बीड़ी पी रहा था, फेंकी नहीं। आजकल वह फेंकता नहीं, कुशलता से उसे ढीली मुट्ठी के अन्दर छिपा लेता है। बीड़ी छिपा, दूसरी ओर मुँह फेर धुआँ छोड़ आकू बोला, बड़ी मुश्किल हो गई सर। थोड़ी-सी रस्सी चाहिए। बिस्तरबन्द का चमड़े वाला फीता टूट गया।

सीताराम हँसा। आकू परोपकार कर रहा है।

आकू बोला, बिस्तर में दुनिया-भर का सामान भर दिया है। मैंने तब बताया तो उन्होंने सुना ही नहीं। पढ़ी-लिखी हुई तो क्या? है तो औरत ही! उस बालिका विद्यालय की दीदी जी हैं सर।

सीताराम हड़बड़ा गया, रस्सी— यह लो, यह रस्सी ले जाओ। उसने बच्चों के लिए खरीदे हुए स्किपिंग रोप की एक रस्सी दे दी।

अच्छा ही होगा। ठीक ही है। आकू बोला, बड़ी तरस आ गई सर, दीदी जी काफी दिन यहाँ रहीं। चली जा रही है, फिर तो यहाँ आएगी नहीं। मेरी बहन पढ़ती है वहाँ। उसी से मुझे बुलवा भेजा, बोलीं, आकू, तुम अगर मेरे जाते वक्त जरा मदद करो, कुली बुलाकर तय कर दो तो अच्छा हो। बड़ी तरस आ गई उस पर। बहुत दिनों से थी हमारे यहाँ। फिर तो आएगी नहीं। सुनकर बड़ा अफसोस हुआ। इसलिए सबकुछ ठीक-ठाक कर दिया। लेकिन—रास्ते में बिस्तरबन्द का चमड़ा फट गया। गोविन्द को पहरे पर बिठा कर आया हूँ।

सीताराम को लगा, शरत् काल का यह अपराह्न अकस्मात् ही फीका पड़ गया। जा रही हैं। चली जा रही हैं! सीताराम अभिभूत-सा आकू के साथ निकल आया।

अच्छी नौकरी मिली है इसीलिए जा रही हैं। रास्ते पर बिस्तर टूट पड़ा है। कुली को लेकर आकू बिस्तर बाँधने लगा। बिखरा सामान गोविन्द ने उठा-उठाकर दिया। सीताराम ने भी। बिस्तर में वह परदा भी बँधा है। आकू चला गया। लेकिन वे कहाँ हैं?

वे शायद दूसरे रास्ते से स्टेशन गई हैं। शाम के अन्धेरे में प्रकाशित परदे पर यह मुख फिर कभी उभरेगा नहीं। वह वहीं खड़ा रहा।

ट्रेन आ रही है, घंटी टनटना गयी है। घड़ी में तीन बजकर पन्द्रह हो रहा है। यकायक सीताराम दौड़कर पाठशाला लौट आया, हथौड़ी उठाकर छुट्टी की घंटी बजा दी।

अरे, छुट्टी आज -छुट्टी! मुझे याद नहीं रहा। मुझे एक बार जंकशन जाना है। आज छुट्टी! झटपट दरवाजा बन्द कर वह दौड़ पड़ा। उसे जंकशन पहुँचना ही है। पहुँचना ही है।

ट्रेन आ गयी है। एक खाली इन्टर क्लास में वह बैठी हुई हैं।

स्कूल की लड़कियाँ आई हैं, उन्हीं की ओर देख रही हैं, बतिया रही

हैं। वह दौड़कर गया, एक टिकट खरीदा, जंकशन, एक इन्टर क्लास का। जंकशन यहाँ से सात मील है। वहाँ जाकर यह लाइन खत्म हो गई है। वहाँ गाड़ी बदलनी पड़ेगी। वह उसी डिब्बे के दूसरे छोर पर जा जमकर बैठ गया। ट्रेन चली।

उदास दृष्टि से वह महिला गाँव की ओर देख रही है। क्रमश: वह उदासीनता विला गई और चेहरे पर ढीलापन उभर आया।

काली-सी लम्बी लड़की। बगुले के पंख-जैसी सफेद धुली खद्दर की, नीली किनारी वाली साड़ी, बदन पर आज हल्के लाल रंग का ब्लाउज, पैरों में सैंडिल, सिर पर घूँघट नहीं, परिच्छन्न निपुणता से बाल ढीले जूड़े में बँधे। कन्धे से लटक रहा है खद्दर का एक झोला।

कई बार सीताराम के जी में आया, एक बात करे, कहे— चली जा रही हैं आप? लेकिन किसी तरह से भी उससे न हो सका। नहीं-नहीं, वह पाठशाला का पंडित है।

उसने सोचा कि जंक्शन स्टेशन पर कुली बुलवाकर वह उसकी मदद करेगा। लेकिन वह भी उससे नहीं हो सका। उन्होंने खुद ही कुली बुला लिया। सामान चढ़ाते वक्त भी वह एक बार आगे बढ़ा, जाकर फिर पीछे हट आया। गाड़ी चली गई।

उसने अपनी कापी फिर खोली। सोचा था, तारीख काट देगा। लेकिन नहीं, रहने दो। बल्कि उसने और भी थोड़ा-सा लिख डाला।

"जीवन में बूँद-भर रंग था, रात के अन्धेरे में, झुटपुटे में आकाश की नीहारिका की तरह उभर आता था; वह भी पुँछ गया २१ सितम्बर १६२६ को।"

उदास मन लिए वह रतनहाटा की ट्रेन में आ बैठा। काफी समय है हाथ में। अचानक ख्याल आया, यहाँ की किताबों की दुकान से कुछ किताबें खरीद ली जाएँ तो कैसा हो। आजकल वह पाठशाला में पाठ्य-पुस्तकों का व्यापार करने लगा है। सभी पंडित करते हैं। साल में एक बार, पाँच सात रुपए का लाभ। महीने में दस-पन्द्रह रुपए जिसकी आय हो उसके लिए साल में पाँच-सात रुपए भी बहुत होते हैं। कुछ कुंजी वाली किताबें चाहिएँ। कुंजी वाली किताबों में मुनाफा ज्यादा है। इनकी बिक्री सारा साल होती रहती है।

लेकिन नहीं, रहने दो। आज का दिन उसके जीवन की माला से अलग ही रखा जाए। आज उस काली लड़की के सिवा और किसी के बारे में वह नहीं सोचेगा। जीवन की गुप्त बात गुप्त ही रह जाए। केवल धीराबाबू से कहेगा, वह उस पर किताब लिखेगा। लेकिन इतनी-सी बात के सिवा धीराबाबू से वह क्या कहेगा?

क्या लिखेंगे धीराबाबू?

उसके रंगशून्य जीवन के बारे में लिखेगा, उसकी सन्दीपन पाठशाला के बारे में लिखेगा धीराबाबू?

●●

पन्द्रह

लिखेगा—कोंवल-कोंवल मुख वाले सारे बाल-गोपाल चिरकाल सन्दीपन पाठशाला को प्रकाशित कर पाँतों में बैठे मधुर कंठों के कलरव से पढ़ते हैं—अ, आ, छोती ई, बली ई।

हाँ। फिर यह क्या है ? बताओ भला। छोटी —। संकेत से सीताराम उसे समझाता। तुतलाती ज़ुबान में वह लड़का कहता, छोता उ, बला ऊ।

वाह ! वाह ! बोलो।

उत्साह से कोंवल मुखड़ा सुबह के सूरज की छटा पड़े कोंपल की नाईं झलमला उठता, शुभ्र आँखें चमचमा उठतीं। हरी-हरी घास पर ठहरी ओस की बूंदों की भाँति। वह पढ़ता जाता, ऋ। यह ? यह क्या मात्चा ?

यह मात्चा लृ कार है।

उस ओर लड़के पढ़ते अ और च और ल, अच-ल। अ ध और म, अध-म।

हाँ ! यह दोनों यानी अचल और अधम कभी मत बनना तुम।

ज, ल, ग में छोटी इ की मात्रा और र में ए की मात्रा—जल गिरे।

सीताराम खुद ही कहता, प में आ की मात्रा और त, पात और ह में छोटी इ की मात्रा और ल में ए की मात्रा, हिले, पात हिले। जल गिरे, पात हिले। ज और ट जट, ह में छोटी इ की मात्रा ल में ए की मात्रा ले—जट हिले। कहाँ, अपनी जटा तो हिलाओ एक बार। उस लड़के के सिर पर बड़े-बड़े बाल, उसी में दो जटाएँ बन गई हैं। देवता के पास मनौती है। यहाँ के प्रचलित पद्य कहता सीताराम—जटा हिले, इमली गिरे और उसे दुलारता।

लड़का शर्मा कर सिर झुकाये रहता है। इसी बीच उसे अपने सिर की जटा के लिए लाज लगने लगी है। सीताराम खुद ही उसकी जटा हिला देता। बड़ी कक्षा के लड़के पढ़ रहे हैं।

"हम लोग जिस देश में रहते हैं, उस देश का नाम है भारतवर्ष। भारतवर्ष के उत्तर में संसार की सर्वोच्च पर्वतमाला हिमालय है, दक्षिण में बंगोपसागर, भारत महासागर हैं।"

वे खड़े होकर तरन्नुम से पढ़ते—

"कोन देशेरइ तरुलता
सकल देशेर चाइते श्यामल ?
कोन देशेते चलते गेले
दलते हय रे दुर्वा कोमल ?
कोथाय फले सोनार फसल
सोनार कमल फोटे रे ?
से आमादेर बांगला देश—"

सीताराम भाई ? कुशल से तो हो ?

कौन ? सीताराम कुर्सी से उठ खड़ा हुआ। वही पलाशवुनी वाले वृद्ध पंडित जी। हूँ, यह कैसी शकल हो गई है उनकी ! शिथिल चर्म झूल आने से हड्डियाँ प्रगट हो आई हैं, कुबड़ा-सा झुक गए हैं, लाठी थामे पाठशाला के आँगन में आ खड़े हो गए हैं। मैली काली-सी धोती पहने हैं, उनमें सिलाई के बड़े-बड़े दाग काली मिट्टी में दरार जैसे दिख रहे हैं। हड़बड़ाकर उतरने के बाद आगे बढ़ गया सीताराम। आइए-आइए। कितना सौभाग्य है मेरा।

तुम्हारा सौभाग्य —हा-हा कर हँस पड़े पंडित।

सौभाग्य क्यों नहीं। अवश्य ही यह मेरा सौभाग्य है।

कल्याण हो तुम्हारा। भले आदमी हो तुम। अब कुछ खिलाओ तो भाई। बड़ी भूख लगी है। खिलाकर अपना सौभाग्य बढ़ा लो।

सीताराम व्यस्त हो उठा, अरे ! गोविन्द चंद, सुनो तो भई।

पंडित बोलता ही रहा, जानते ही होंगे, भीख माँगता हूँ, हाँ भीख ही है एक तरह से। गृहिणी को मुक्ति मिल गई है। तो श्राद्ध तो करना ही पड़ेगा। इसलिए पलाशवुनी गया था। हैं तो सब गेंतिहर किसान ही लेकिन कभी के छात्र तो हैं मेरे। कुछ भीख-ईख माँगकर घर जाऊँगा। दोपहर हो गई, विश्राम चाहिए, भूख-प्यास भी लगी है। सो एक बार सोचा कि बाबुओं की ठाकुरबाड़ी चला जाय या किसी भी बाबू की कोठी में। लेकिन मन नहीं किया। तुम्हारी ही याद आ गई। शास्त्र में कहा है, ब्राह्मणस्य, ब्राह्मणम् गति। बाबू ब्राह्मण और पाठशाला का पंडित भिखमंगा ब्राह्मण तो कोई एक नहीं। तो मन में आया, पाठशाले के पंडितस्य पाठशाले के पंडितम् गति। सो यही चला आया। कहकर ही फिर से हा-हा कर पंडित हँसने लगे।

इस हँसी से सीताराम झेंप गया। उसे लगा, पंडित उसकी खुशामद कर रहे हैं। उनको कुर्सी पर बिठाकर वह एक कापी की जिल्द से हवा करने लगा। बोला, अच्छा ही किया है आपने। आप पधारे हैं इससे मुझे कितनी खुशी हुई है, क्या बताऊँ ? तेल मगाऊँ, नहा लीजिए।

स्नान ? तो—। पंडित ने अपना अंगौछा फैलाकर एक बार देखा। अंगौछा धोती से भी ज्यादा मैला। तिस पर कितने ही छेद। दिखाकर बोले, साथ कोई धोती तो है नहीं। इसको पहन कर नहाना—। फिर हा-हा कर हँस पड़े पंडित। फिर धीमे स्वर में बोले, समझे भाई, पलाशवुनी के मैदान वाले पोखर में जाकर दिगम्बर होकर ही, समझे ? पंडित की हँसी थमती ही नहीं।

कापी की जिल्द उनके हाथ में देकर सीताराम बोले, आप तनिक इन बच्चों को देखते रहें। मैं अभी आया।

वह एक नयी धोती और शीशी में थोड़ा-सा तेल लेकर लौट आया। बोला, तेल मल लीजिए। नहाकर यह धोती पहन लीजिए।

वृद्ध के होंठ काँपने लगे।

पंडित को विदा कर उसने एक ठंडी साँस ली। दारिद्र्यदोषो गुणराशि-

नाशी। पंडित स्वयं यह बात बता गए। नहा कर खाने के बाद पंडित ने कहा था, भाई, लड़कों से दो पैसे-चार पैसे चन्दा अगर वसूल कर देते। जानते ही हो पत्नीदाय। मातृदाय पितृदाय नहीं, वृद्ध ब्राह्मण का पत्नीदाय। कहकर फिर हा-हाकर हँस पड़े। लड़कों से एक रुपया सात आने इकट्ठे हुए, उसने खुद एक रुपया एक आना मिलाकर ढाई रुपए पूरे कर उनके हाथ में दे दिए।

जाते वक्त पंडित बता गए, एक बात बताते जा रहा हूं भैया! जानते होंगे, वृद्धस्य वचनम् ग्राह्य। बूढ़े की बात याद रखना। ये बड़े-बड़े दालान-कोठे बनते हैं, देखा है न? उसे राजमिस्त्री बनाते हैं, नक्शा बनाते, कारीगरी दिखाते हैं, वेतन लेते और विदा हो जाते हैं। बड़े लोग उसमें वास करते हैं, कोठियाँ उन्हीं की होती हैं। फिर भी राजमिस्त्री अपने नाम लिख जाते हैं—फलाँ राज, फलाँ सन् आदि आदि। कुल बात यह कि उनके नाम रह जाते हैं। मजदूरी भी उनको कोई बुरी नहीं मिलती। हमारे पंडितों से ज्यादा ही पाते हैं। लेकिन देखो, शुरू में जो लोग काम करते हैं, नींव के लिए मिट्टी खोदते हैं—वे बस मिट्टी खोदने वाले मजदूर हैं, उनको कोई भी याद नहीं रखता। उनकी मजदूरी भी सवेरे से तीन पहर तक मिट्टी काटने के बाद—कुल चार आने होते हैं। पेट-भर खाना भी उससे नहीं जुटता। वे अपनी आखिरी उम्र में अनखाये मरते हैं। अगर वे बाबुओं की कोठी में जायें, कहें, बाबू साहब, मैंने आपके महल की नींव खोदी थी, आज अनखाये मर रहा हूं, लिहाजा मुझे कुछ भी भीख दीजिए। बाबू क्या करेंगे? पहचान भी नहीं सकेंगे। भैया भीख देना तो दर-किनार, दरबान को बुलाकर निकाल देंगे। स्कूल-कालेज के मास्टर हुए बड़े राज-मिस्त्री छोटे राजमिस्त्री। और अभागे हम पाठशाला के पंडित हुए नींव के लिए मिट्टी खोदने वाले मजदूर। हम लोगों को कोई याद ही नहीं रखता। जाओ तो पहचानेंगे नहीं। भीख भी दें तो दो आने, चार आने, बस। इसीलिए कहता हूं—। ढेर-सी बातें कर वे हाँफने लगे थे। जरा रुककर फिर बोले, कुछ-कुछ संचय करते रहो। समझे? हालांकि तुम्हारे पास कुछ जमीन-खेत हैं, मेरी जैसी हालत तुम्हारी होने वाली नहीं। फिर भी वृद्ध की बात याद रखना। इस तरह से—जिस तरह अभी तुमने मुझे धोती दी, खाना खिलाया—इस तरह खर्च मत किया करना। कुछ-कुछ जमा करने की आदत डालो।

दरवाजे के पास पहुंचकर वृद्ध ने फिर कहा, भैया, एक बात और बताऊँ?

बताइए।

मुझे एक बंडल बीड़ी और एक माचिस खरीद दो।

●●

सीताराम लौटकर पाठशाला की कुर्सी पर बैठा सोचने लगा। पंडित उसे अव-साद से ग्रस्त कर गए। वही चिन्ता आकर उस पर सवार हो गई है। पंडित ने कोई झूठ तो कहा नहीं। और भी बहुत-सारी बातें की थीं पंडित ने। दोपहर-भर वह अनर्गल बोलते ही रहे। धोती और ढाई रुपये की सहायता पाकर

ओफ, छी छी ! फिर आंखों में आंसू आ गए। कुछ दिनों से, यही शायद महीने-भर से यह उत्पात शुरू हो गया है। आँखों से पानी टपकता है। खास तौर से तिपहर में पाठशाला के आखिरी घंटों में ज्यादा पानी गिरता। सिर भी भारी हो जाता है। डाक्टर को दिखलाना पड़ेगा। खैर, बाद में लिखेंगे। पंडित की बातें अब भी कानों में गूंज रही हैं। मन में बिल्कुल गुंथ गई हैं, यह क्या भुलाने वाली बात है ?

पंडित ने कहा है, भैया, आज लगता है, मति मारी गई थी मेरी। वर्ना जरा सोच-विचार कर देखो, हिसाब लगाकर देख लो, पुरोहित का रोजाना का रोजगार पंडित के रोजाना के रोजगार से कहीं ज्यादा है। चावल, धोती, दक्षिणा —हिसाब लगाकर देख लो। और ठेके पर पकवान बनाने के काम में कमाई भी दिन-ब-दिन बढ़ती ही जा रही है। एक वक्त एक रुपया, दो वक्त दो रुपए। रसोइया-ब्राह्मण की माहवारी तनख्वाह ही अब खुराक-पोशाक और आठ रुपये-दस रुपये। इसके अलावा बाबुओं के नाते-रिश्तेदार, आने-जाने वाले; महीने में दो रुपए बख्शीश के। पाठशाला की पंडिताई करके जिन्दगी-भर घुइयाँ ही छीलते रहे। कहकर ही हा हा कर हँस पड़े।

फिर बोले थे, कुछ बुरा न मानना भैया! सच बात बताऊँ ?

तुमने भी मुझ जैसी भूल की है। सद्‌गोप किसान के बेटे हो। बाप-दादा खेती-बाड़ी करते थे; अपनी जमीन, और भी दो-चार जनों की दो-दस बीघा जमीन बटाई में लेकर दूध-भात खाते रहे। खलिहान में धान, घर में ऊड़द, गेहूं, गुड़ जमा कर सुख से दिन काटते रहे। तुमने भी मेरी तरह घुंइया भूनकर खाये भैया ! पुश्तैनी पेशा छोड़ लिखपढ़ पंडित बनने में बेजा किया है।

अचानक उसका हाथ थामकर बोले थे, कुछ बुरा तो मान नहीं रहे हो भैया ?

नहीं, नहीं। आपने सच्ची बात बताई है। बुरा क्यों मानूंगा ?

हां। तुम्हें जानता हूं, तभी कहने की हिम्मत पड़ी। वर्ना अब तो मैं भिखमंगा हूं, मैं—

कुछ देर के लिए वे खामोश हो गए थे, फिर बड़े ही धीमे स्वर में कहा था, भैया, क्या यूंही कहता हूं ? आज तुमसे कुछ भी छिपाऊंगा नहीं। विधवा युवती कन्या महाराजिन का काम करती है, जानते होगे ? लेकिन काम छोड़कर भाग आई है। जानते हो क्यों ? भाग आने को मजबूर हुई है। मतलब, समझ रहे हो न ? वहां बाबुओं का युवा पुत्र उसके पीछे पड़ा था। बताओ भैया, अब तो मान लो मैं हूं, भीख मांगकर खिला रहा हूं, लेकिन मेरे बाद उसका क्या होगा ? सम्बल कुछ होता तो आज मैं चिन्ता न करता होता। मेरे बाद उसी सम्बल के सहारे अपने घर में आत्मरक्षा कर किसी कदर वह रह सकती थी।

सीताराम सोचता, उसके जीवन में क्या जाने क्या होगा। फिर उसकी आंखों में पानी आ गया। यह पानी आना वह पानी आना नहीं। यह उसका

मन रो रहा है, तभी पानी आ रहा है। आँखें पोंछ डालीं उसने।

पाठशाला के दरवाजे पर सायकिल की घंटी बजी। स्कूल सब-इंस्पेक्टर साहब ने प्रवेश किया। नए आदमी, थोड़े ही दिन हुए आए हैं, कम उम्र, कड़ा आदमी! साहब के दफ्तर में जाकर देखा है, मोटी-मोटी अंगरेजी की किताबें पढ़ते हैं। एक शेल्फ में चमाचम जिल्द लगी बंकिमचन्द्र, रवीन्द्रनाथ की किताबें। दो-तीन मासिक पत्र मंगवाते हैं। आप अति आधुनिक हैं। आप कहते हैं—तुम लोगों के धीराबाबू वाहियात लिखते हैं जी। बिल्कुल प्रतिक्रियावादी, रिऐक्शनरी!

सीताराम इन दोनों शब्दों का ही अर्थ नहीं समझता। चुप किए रहता।

गम्भीर भाव से सब-इन्सपेक्टर रजिस्टर-बही आदि लेकर बैठ गए। नोट ले लिये। इन्सपेक्शन बुक पर मन्तव्य लिखा।

उनके चले जाने के बाद पाठशाला की छुट्टी हो गई। टन्न-टन्न-नन-न-न।

फिर अगले दिन साढ़े दस बजे पाठशाला लगेगी। टन्न-टन्न-टन्न।

साल-दर-साल यही चलता रहेगा। सीताराम के बाल सफेद होंगे। माथे पर रेखाएँ उभर आएँगी। शायद अन्त में उस वृद्ध पंडित-जैसी दशा हो जाएगी। लिखेगा, धीराबाबू यही लिखेगा, यही तो उसका जीवन है।

जीवन मानो क्रमशः क्लान्त-क्लान्त नीरस होता जा रहा है।

इसी बीच एक-एक लहर आती। सूखी हुई नदी में बाढ़ आ जाती है।

उस दिन सब-इन्सपेक्टर ने आकर कहा, पंडित, तुम लोगों के यहाँ प्राय-मरी टीचर्स कांफेंस होने की बात चल रही है। सुना है?

जी नहीं।

खबर तुम्हारे पास भी आएगी।

●●

खबर आई। बड़े स्कूल की पाठशाला के हेडपंडित श्रीश बाबू ही इसके संयोजक हैं। वे अपने दल के साथ आए। श्रीशबाबू बहुदर्शी व्यक्ति, योग्य शिक्षक और अत्यन्त मिष्टभाषी हैं। एकमात्र दोष है, वे दक्ष षड्यंत्रकारी हैं। उसके बहुत सारे अच्छे लड़कों को ये बहका ले गए हैं। खैर, ये जब आये हैं और यह कांफेंस— जिला प्राथमिक शिक्षक सम्मेलन जब सभी की भलाई के लिए है, तब वह जी खोलकर साथ देगा।

उनकी दरिद्र दशा के बारे में देश को बताया जाएगा, गवर्नमेंट के पास मांग रखी जायगी। दिल को मानो कुछ बल मिल रहा है।

स्वागत-समिति का गठन हुआ। इस थाने की पाठशालाओं के पंडितों से चन्दा उगाहकर सारा खर्च निभाना पड़ेगा। उनमें से पन्द्रह को स्वागत-समिति में लिया गया। गोपालपुर का हृषिकेश दास वृद्ध पंडित है; गोविन्दपुर का मोहन मित्र उम्र से छोकरा है, व्यापारी पाड़ा के मक्तब के मौलवी मुहम्मद हुसैन; रत्नहाटा के सभी बड़े स्कूल के तीन जने और सन्दीपन पाठशाला का सीता-

राम—इसी तरह से पन्द्रह लोग। श्रीशबाबू अध्यक्ष हैं।

सीताराम दो सहकारी मंत्रियों में एक।

यह एक उत्साहजनक मामला था। ऐसी घटना जीवन में कम ही आई हैं, केवल एक बार और आई थी, उस बार जब धीराबाबू ने डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के कांग्रेसी चेयरमैन को लाकर सभा की थी। फिर वैसा उत्सव हो न सका।

अचानक याद आ गई, उस सभा में एक काली लड़की बैठी थी।

हर सांझ को आज भी वह ठंडी सांस भरता है। सांझें सारी-की-सारी विरस हो चुकी हैं। अब और प्रकाशित परदे पर छायाछवि-सा एक मुखड़ा उभर नहीं आता है। सीताराम की आंखों में कुछ नुक्स आ गया है। बिना चश्मा लिए गुजारा नहीं। पानी गिरता, धुंधला देखता, लेकिन फिर भी प्रकाशित परदे पर छाया की छवि में उभरा हुआ मुख अमावस के आकाश में सुकवा-जैसा सुस्पष्ट है। नोट-बुक में उसने लिखा—सन् उन्नीस सौ तीस, छब्बीस जनवरी। उस तारीख पर जिला प्राथमिक शिक्षक सम्मेलन है।

लेकिन तारीख के लिए वह दुखी हुआ। उधर वही तारीख कांग्रेस का स्वाधीनता दिवस मनाने के लिए निर्धारित हुई है। लेकिन चारा भी क्या? मजिस्ट्रेट साहब उद्घाटन करेंगे, उन्होंने ही यह तारीख दी है। उस तारीख पर देबू यहां कांग्रेस का झंडा फहराएगा, संकल्प-वाणी का पाठ करेगा। धीराबाबू ने लिखा है, मैं नहीं आ पा रहा हूं, लेकिन रत्नहाटा गांव में स्वाधीनता दिवस नहीं मनाया जायगा, यह सोचते हुए मुझे मर्मान्तिक दुःख हो रहा है। तुममनाना।

धीराबाबू ने लहर भेज दी है। जय-जयकार हो धीराबाबू का। लेकिन धीराबाबू, तुम आए क्यों नहीं? लहर क्या प्रवाह है? तुम्हारा काम क्या देबू से हो सकता है?

देबू और श्यामू के लिए उसे मर्मान्तिक क्लेश है। वे मैट्रिक पास कर बैठे हैं। श्यामू आइ०एस-सी में फेल हो कर घर लौट आया है। देबू ने तीसरी बार की कोशिश में मैट्रिक पास किया है। देबू से क्या धीराबाबू का काम हो सकता है? लेकिन देबू का इस ओर एक रुझान है।

खैर, जाने भी दो यह बात। मामूली पाठशाला का पंडित है वह। अदरक का व्यापारी है वह, जहाज का हालचाल लेकर वह क्या करेगा? सम्मेलन के लिए उसने श्यामू-देबू से एक भीख मांगी, आधा मन मछली। मैंने कहा है, मैं वसूल कर दूंगा। मेरी इज्जत रखनी है। सो उन लोगों ने दी है।

धीराबाबू को उसने चन्दे के लिए लिखा था। धीराबाबू ने दस रुपए भेज दिए हैं। उस दिन सवेरे उसे सबसे बड़ी खुशी हासिल हुई। मनोरमा ने उसके हाथ में एक रुपया दिया, तुम लोगों के उसमें वह क्या हो रहा है जो, उसमें यह मेरा चन्दा है। बेचारी कांफ्रेन्स शब्द उच्चारण नहीं कर सकती।

तुम्हारा चन्दा? मैंने तो दे दिया है, फिर?

तुम लोगों की तनख्वाह बढ़ेगी, सम्मान बढ़ेगा और मैं चन्दा न दूं?

रुपया उसने ले लिया, लेकिन मनोरमा को आगोश में लेकर, चूम कर प्यार जताने की फुरसत नहीं। रत्नहाटा में ढोलक बज रहा है। उसकी आवाज यहाँ तक आ रही है, सुनाई पड़ रही है। रायवेंशे नाच हो रहा है। लड़के नाच रहे हैं।

यही एक विडम्बना है।

मजिस्ट्रेट साहब आएँगे, उद्‌घाटन करेंगे। साहब की सनक है, लोक-नृत्य की। साहब के आने के बाद से जिला में इस नाच को लेकर हो-हल्ला करते फिर रहे हैं। शिव नाचे, ब्रह्मा नाचे और नाचे इन्द्र।—सरकारी हाकिम नाच रहे हैं, रायबहादुर लोग नाच रहे हैं, वकील नाच रहे हैं, मुख्तार नाच रहे हैं, बड़े स्कूल के लड़के नाच रहे हैं, मास्टर नाच रहे हैं, अब इन लोगों की बारी है। पाठशाला के लड़कों को नाचना पड़ेगा और साथ-ही-साथ इन लोगों को भी। मुँह बन्द किये नाचना है। कुछ भी बोलोगे तो सर्वनाश। रायपुर के व्योमकेश ने उस नाच का व्यंग्य कर एक कागज छपाया था,—गाँव-देश में जैसी तुकबन्दी प्रचलित है :

"मेरी शादी तो ज्यों-त्यों
दादा की शादी में रायवेंशे नाच
आओ गटागट दारू पीके आज।"

इसके परिणाम व्योमकेश को जेल हो गयी है।

फिर भी गनीमत कि डिविजनल इन्सपेक्टर आफ स्कूल्स रायसाहब मिश्र साहब की कोई सनक नहीं। वे ही सभापति होंगे।

सन् तीस की छब्बीस जनवरी!

सुसज्जित मंडप में अधिवेशन हुआ। संयोग से सीताराम को सभापति के आसन के पास ही खड़ा होना पड़ा।

अचानक अप्रत्याशित रूप से उसके जीवन की एक बड़ी साध पूरी हो गई आज। उसकी नजर पड़ी, सभा के बाहर जनता के बीच शिवकिंकर खड़ा है। वह इशारे से उसे ही बुला रहा है। सीताराम सावधानी से निकल गया।

शिवकिंकर अनुग्रह-प्रार्थी की तरह सविनय बोला, मुझे भीतर कहीं बिठा सकते हो भाई पंडित?

सीताराम की जुबान की नोक पर जवाब आ गया, नहीं। लेकिन अगले ही क्षण उसने आत्मसंवरण कर सादर सम्भाषण से कहा, आइए।

उस समय सभापति का अभिभाषण शुरु हो गया था। एक अप्रत्याशित समाचार उन्होंने सुनाया, "नयी शिक्षा-योजना बन रही है जिसमें देश के सर्वत्र, प्रत्येक गांव चाहे न हो, हर पाँच-सात गाँवों के केन्द्रों में अवैतनिक प्राथमिक विद्यालय स्थापित होंगे। सारे देश के बच्चे अज्ञानता के अन्धकार से ज्ञान के प्रकाश में संसार को देखकर धन्य हो सकें, ऐसी व्यवस्था होगी। उन सब केन्द्रों में जो शिक्षक होंगे, आप ही लोग रहेंगे, जिससे उनका वेतन ऊँचा हो, उनके

अभाव-अभियोग दूर हों, इसके लिए भरसक कोशिश की जायगी। आप ही लोग देश के आदिगुरु हैं। आप लोग कोई मामूली नहीं हैं।"

खुशी से सीताराम की आँखें नम हो गईं। उसकी दृष्टि-शक्ति कम हो आई है। आज उसकी आंखों के पानी में क्षीण दृष्टि के सम्मुख सभी कुछ मानों सफेद कोहरे में ढक गया।

उसदिन घर लौटकर अपनी नोट-बुक में उसने यह तारीख लिख ली—

"आज मुझे लगा, आकाश में नीलापन झलमला रहा है। झील-तड़ाग में जल झिलमिला रहा है। पंछियों के गीत में आनन्द झर रहा है। बड़ा आनन्द है आज। आज मन में बड़ी आशाएं जाग उठी हैं।"

इसके बाद लिखा है—

"घर लौटने के रास्ते—देवू की फहरायी राष्ट्रीय पताका को छिपकर प्रणाम कर आया। संकल्प-वाणी जेब में है। घर आकर उसको पढ़ा। आज २६ जनवरी १९३० सन है।"

सम्मेलन समाप्त होने के बाद वह वहाँ गया था जहाँ तिरंगा ध्वज उड़ रहा था। अकेले खड़े प्रणाम कर कहा था—मुँह खोलकर कहने का साहस नहीं, लेकिन मेरा भी अन्तर कहता है—तुम्हारी जय हो! तुम्हारी जय हो! तुम्हारी जय हो!

●●

सोलह

२६ जनवरी १९३०। प्राथमिक शिक्षक सम्मेलन।

उसके बाद भी और कई तारीखें उसकी नोट-बुक में लिखी गयी हैं। तारीखों के बगल में घटनाओं के संक्षिप्त ब्योरे।

"१७ अगस्त १९३०। देवू—मेरे हाथों गढ़े हुए देवू ने भारतवर्ष के स्वतन्त्रता-युद्ध में कारावरण किया। धीराबाबू कलकत्ते में राजबन्दी के रूप में फिर पकड़े गये हैं। देवू ने उन्हीं के पदचिन्हों का अनुसरण किया है। यह मैं जानता हूं। लेकिन मैंने ही तो उसे बताया था :

"महाज्ञानी महाजन जिस पथ कर गमन
हो गये प्रातः स्मरणीय
उसी पथ को लक्ष्य कर स्वीय कीर्ति-ध्वजा धर
हम लोग भी होंगे वरेणीय।"

अन्त में उसने लिखा है—"आज गौरव से मेरा सीना तन गया है। यह बात किसी से कहने की नहीं। हाय! इस गौरव के बारे में मुंह खोलकर कहने की हिम्मत नहीं मुझे। मैं दुर्बल हूं, मैं अभागा हूं।" इस सिलसिले उसका दुःख

भी बहुत है। जिस दिन देबू को पुलिस गिरफ्तार कर ले गई, उस दिन स्टेशन पर कितनी भीड़ थी ! गांव के नर-नारी युवा-वृद्ध-शिशु सभी उसका अभिनन्दन करने आए थे। फूलमालाओं से देबू का गला भर गया था। वह भी माला गूंथकर ले गया था। लेकिन दरोगा को देखकर—देने का साहस नहीं हुआ। उसे बहुत दिन पहले की बात याद पड़ गई थी। उसकी क्षीण-दृष्टि आंखों के सम्मुख तिर आया था—संदीपन पाठशाला का चित्र। भय से उसने वह माला अपने चदरे के नीचे छिपा ली थी। फिर ट्रेन के चले जाने के बहुत दिनों के बाद उसने देबू के घर में प्रवेश किया था। मां से मिलेगा। मां को प्रणाम कर अपना जीवन सार्थक करेगा। उनके पास बैठकर एकबार रोएगा। बोलेगा—आपके देबू का मैं पंडित बना था—तभी मेरा जीवन धन्य हुआ। घर में प्रवेश कर उसने चारों ओर देख कर कहा—कहां, मां कहां ?

—मां, मां, कहां है ?

बरामदे पर कोई बैठा था—उसीसे उसने पूछा। उन्होंने जवाब दिया—सीताराम ! आओ बेटा। यह रही मैं।

सीताराम जरा झेंप गया।—मेरी आंखों की रोशनी—जरा कम हो गई है न। मैं पहचान न सका मां !

—बैठो बेटा, बैठो।

सीताराम बैठ गया। उसकी समझ में नहीं आया कि क्या कहे। दुःख जताने तो वह आया नहीं, दुःख प्रगट करने से वह मां हंसेगी, यह वह जानता है। लेकिन किस भाषा में उनका अभिनन्दन प्रगट करे ? वह भाषा तो उसे आती नहीं। उसके दिल की बात यहां आकर लजा रही है। वह कहने आया था—जानती हैं मां, देबू को और श्यामू को मैं बचपन से यह सब सिखाता रहा हूं। लेकिन ये बातें झेंपा रही हैं। ऐसी मां न होने पर क्या वैसे बेटे होते हैं ? धीरानन्द क्या किसी मास्टर का गढ़ा हुआ धीरानन्द है ? हाय रे हाय ! इस मां के तीन बेटों में एक है धीरानन्द तो दूसरा है देवानन्द। और उसने व धीराबाबू के शिक्षकों ने जाने कितने लड़कों को जीवन-भर शिक्षा दी है। लेकिन दूसरा धीरानन्द और दूसरा देवानन्द कहां है ? इस मां के सामने क्या वैसा दावा किया जा सकता है ?

मां ने कहा—तुम रो क्यों रहे हो बेटा ?

सीताराम रो नहीं रहा था, उसकी आंखों से जिस प्रकार पानी टपकता है—वैसी ही एक धार ढुलक आई थी—वही मां को दिखाई पड़ गया है। आंखें पोंछकर सीताराम बोला—नहीं मां ! मैं रोया नहीं। मेरी आंखों से कभी-कभी पानी गिरता है। वर्ना क्या यह कोई रोने की बात है ! यह तो मेरे लिए सीना तानकर बतलाने वाली बात है। देबू मेरा छात्र है।

मां हंसी—वह हंसी देखकर सीताराम का मुंह उतर गया। बड़ी इमारत की नींव पर जिस मजदूर ने काम किया है वह अगर कभी आकर गृहस्वामी से

कहे—यह मकान मेरा बनाया हुआ है, उस वक्त गृहस्वामी करुणा की जो हँसी हँसता है—यह वही हँसी है। उसने झटपट कहा—आपकी सन्तान के सिवा इस गाँव में और कौन ऐसा काम कर सकता है?

माँ थोड़ा चुप रहकर बोली—यह भी ऐसा क्या कुछ किया है बेटा। देश के लिए बड़े-बड़े लोग सर्वत्यागी संन्यासी बन गए हैं, सबकुछ न्योछावर कर दिया है उन लोगों ने। आन्दोलन के समय—हजारों में लोग तीर्थयात्री-जैसे चले जा रहे हैं। इनमें कुछ हलचल से खिच भी गये हैं।

माँ हँसी, इसके बाद ही बात को पलटकर बोली—लेकिन तुम्हारी आँखों की यह हालत कब से हुई है बेटा? यह कोई अच्छी बात नहीं। इलाज कराओ। ऐनक ले लो।

सीताराम कहने को हुआ—पैसे की बात। कहने को हुआ, इलाज करवाने में माँ, रुपया चाहिए। वह मुझे कहाँ से मिलेगा? लेकिन रुक गया। यह कहने पर माँ शायद सोच लें कि वह रुपया भीख माँग रहा है। साथ-ही-साथ बोल पड़ेंगी, बीस-पच्चीस रुपए मैं दे दूंगी, शेष तुम संग्रह कर लो। उसने कहा, जी हाँ, अब कराऊँगा। सोचा था, शहद-अहद डालने से ही यह दोष जाता रहेगा, लेकिन गया नहीं। अब इलाज कराऊँगा। चश्मा लूंगा।

उठकर चला आया वह।

••

रुपया उसे मनोरमा ने दिया। मधुमक्खी-सी संचयी मनोरमा! पैसे जोड़-जोड़कर रुपया बनाती है, दस रुपए हो जाते ही उसे नोट में परिणत करती है। वह रत्ना के व्याह के लिए रुपया जमा कर रही है। वह कहती यही है लेकिन बात दरअस्ल यह नहीं है—वही उसका स्वभाव है। वह साक्षात् लक्ष्मी है। पचास रुपए हाथ में देकर बोली, आँखों की तुम जाँच करवा लो। और भी रुपया लगे, मैं दे दूंगी।

आँखों की जाँच करवा आया वह। कलकत्ते से नहीं, चालीसेक मील दूर संथालों के बीच क्रिश्चियन मिशनरियों ने मिशन खोला है। वहाँ अच्छा अस्पताल है। आँखों का इलाज वहाँ अच्छा होता है। उन्हीं से इलाज करवा आया। साथ आकू गया। सीताराम मोटे शीशे वाला चश्मा लेकर लौट आया। रोशनी काफी लौट आई है।

नोट-बुक खोलकर उसने प्रसन्न-मन लिखा—"विद्या-ज्ञान कितनी अनोखी सामग्री है। मृतप्रायजन को संजीवित कर देती। अन्धे को दृष्टि देती। आह, आज नीला आकाश देखकर जान में जान आई। उन पादरी साहबों को लाख-लाख प्रणाम करता हूँ। और मनोरमा को दोनों हाथ उठाकर आशीर्वाद करता हूँ। लेकिन मेरी यह दृष्टि क्या टिकी रहेगी? मैं तो प्रतारक हूँ। मैं प्रतारक जो हूँ। मैंने मनोरमा से धोखा किया है। आज भी झरने के किनारे बैठे मन-

ही-मन सोचता है और मन की आँखों से घर की खिड़की के परदे पर उभरी काली छाया से बनी तस्वीर देखता है।

••

इसके बाद तारीख है ३० मार्च १९३५।

समाचार आया है कि धीवरों के लड़के शशीनाथ को वृत्ति मिली है। आँखों की रोशनी वापस पाना सार्थक हुआ है। सार्थक हुआ है। यही शायद उसके सर्वोत्तम सुख का दिन है। धीवर शशीनाथ के अन्धकारमय जीवन-पथ पर उसके हाथों में दीपक दे सका है। आज बड़े स्कूल के वृद्ध हेडमास्टर नहीं रहे। आकाश की ओर मुख उठाकर उसने मन-ही-मन कहा, मुझे दिया हुआ आपका आशीर्वाद सफल हुआ है। पूरे पाँच रुपए खर्च कर वह देव-स्थान पर पूजा चढ़ा आया।

सन्दीपन पाठशाला को उसने उस दिन मनोरम ढंग से सजाया। लड़कों को मिठाई बाँटी। स्वयं जाकर शशीनाथ को बड़े स्कूल में भरती कर आया।

असमय-वृद्ध सीताराम को मानो नया जीवन मिल गया। वह फिर जवानी की उमंग लेकर पढ़ाने लग गया। लोग उससे सस्नेह मजाक कर कहते हैं—बलिहारी पंडित!

वह हँसता। अब भी बाकी है। जयधर पिछली बार मैट्रिक में वृत्ति पाकर कालेज में पढ़ रहा है। वह आइ०-ए० में वृत्ति पाएगा, बी० ए० में पाएगा, एम० ए० में पाएगा। हाकिम बनेगा। नौकरी पर जाने से पूर्व वह उसे प्रणाम करके जाएगा। बोलेगा, आपको एकबार मेरे घर आना होगा। वह जाएगा। वहाँ पहुँचकर उसको आशीर्वाद कर आएगा। सब लोगों के निकट जयधर परिचय देगा, मेरे गुरु। इन्होंने ही मुझे मेरे हाथों को पकड़-खींचकर अपनी पाठशाला में जाकर भरती किया था।

वह कहेगा, बेटा, माणिक का मूल्य उसका अपना ही मूल्य होता है। उसी मूल्य पर वह राजमुकुट पर शोभा देता है। जो मणिकार उसका आविष्कार कर, उसे काट-घिस कर उज्ज्वल बनाता है उसका नाम उस माणिक के मूल्य की बदौलत अक्षय बन जाता है। उसका असली मूल्य मणि काटने वाले मजदूर की मजदूरी से अधिक नहीं।

पढ़ो—पढ़ो सब! पढ़ते रहो! मेरे लाल—मेरे माणिक पढ़ते रहो!

"भगवान बुद्ध ने कभी राज्य-सम्पदा त्याग कर संन्यास ग्रहण किया था। मनुष्य के सर्वप्रकार दुःखमोचन के लिए तपस्या की थी। दीनतम-मूर्खतम लोगों में भी उन्होंने अपना तपस्यालब्ध फल वितरण किया था।" पढ़ो—पढ़ो।

—क्या है! क्या है तुम्हारा? अब की तुम्हारी बारी है। इसबार तुमको वृत्ति लेनी होगी। क्या कहते हो?

—हिसाब मिल नहीं रहा है सर।

—हिसाब नहीं मिलता? देखें। है ऊँ: । यह क्या?

शून्य की तरह लिखता था। लिखकर जोड़ने-घटाने के समय खुद ही उसे सिफर मानकर गणित में गलती कर बैठता था। उसी गलती के कारण उसे वृत्ति नहीं मिली। तेरा—नौ और एक को लेकर सारी गड़बड़ी है। नौ को एक जैसा लिखोगे और एक को नौ जैसा। मेरी सारी मेहनत पर पानी फेर दोगे। क्या बताऊँ ? तुझे भला बताऊँ भी तो क्या ? ऐ ! ऐ रमन ! जरा छड़ी तो ले आ। आज तुझे मैं मार-मारकर सिखाऊँगा। एक और नौ जब भी लिखेगा तभी यह मार तुझे याद आएगी। वह क्रुद्ध हो उठा।

लेकिन आखिर तक उसने आत्मसंवरण कर डाला। क्या होगा मार कर ? उसकी नियति है। सीताराम हजार कोशिश से भी उसको बदल नहीं सकेगा। वह थककर बैठे-बैठे नियति के रहस्य के बारे में सोचने लगा। धीराबाबू नियति नहीं मानते। हाय धीराबाबू ! सोचते-सोचते उसे ऊंघाई आने लगी। कुर्सी के पीछे की ओर थकान से सिर टिका देता। चन्द लम्हों में ही उसके नाक बोलने लगते। मुंह खुल जाता। लड़के एक-दूसरे की ओर देख इशारा करते, मास्टर की हालत दिखाकर हँसते।

गोविन्द अब भी है। उसने आकू की सोहबत छोड़ दी है। वह भी देखता और हँसता है। लड़कों को इंगित में सिखाता है—दे मास्टर के मुँह में—मक्खी डाल दे।

घर से खेत-मजूर ने आकर पुकारा, पंडित जी !

गोविन्द ने खंखार कर आवाज की। सीताराम की नींद टूटी। चौंक पड़ा वह। —क्या है रे ? तू ? घर के सब—।

—ठीक है जी ठीक। रत्ना दीदी का रिश्ता आया है। रत्ना के मामा लोग-बाग साथ लेकर आ गए हैं। वे कन्या देखेंगे।

जय भगवान ! रत्ना ही एकमात्र सन्तान है। उसका विवाह हो जाने से ही वह मुक्त होगा। काम खत्म होगा। आज कुआर की चार तारीख है।

●●

फिर रत्ना के विवाह के दिन।

उसने अपनी नोटबुक में लिखा—"सन् उन्नीस सौ पैंतीस। बंगाब्द तेरह सौ इकतालीस, ७ अग्रहायण को विवाह। कितना आनन्द ! वर मैट्रिक पास है। आइ०ए० पढ़ रहा है। भगवान तुम्हारी अपार करुणा है।"

●●

सत्रह

दीर्घकाल—बारह वर्ष बाद। पहली सितम्बर सन् १९४७।

बारह वर्षों के बाद सीताराम ने उस दिन अपनी नोटबुक खोली। देश

स्वतन्त्र हो गया है। उनकी आँखों पर मोटा चश्मा। अपने घर के ओसारे पर बैठ, नोटबुक खोलकर उसने पढ़ने की कोशिश की। फिर उनकी दृष्टि धुंधली पड़ने लगी है। क्षीण से क्षीणतर– बुझते हुए दीपक की नाई। आज धीराबाबू आएँगे। देश स्वतन्त्र हुआ है। स्वतन्त्र देश के स्वनामधन्य लेखक धीरानन्द मुखोपाध्याय। उन्होंने लिखा है—"पंडित, स्वतन्त्र रत्नहाटा को प्रणाम करने आऊँगा। तुमको देखने आऊँगा। तुम कहीं चले न जाना। मैं खुद तुम्हारे घर आऊँगा। तुम्हारी नोटबुक ले जाऊँगा।"

जय-जयकार हो! धीराबाबू, आपकी जय-जयकार हो। लेकिन देखोगे भी तो क्या? गाज के गिरने से जला हुआ मानवृक्ष नहीं, शीशम नहीं, देवदार नहीं, विशाल बरगद नहीं, विराट अर्जुन नहीं, श्मशान का आकाशस्पर्शी सेमल भी नहीं। अफला अपुष्पित बौना-सा छोटा– सेहुंड। सूख गया है, इस बार मरेगा।

लेकिन जब तुम आओगे तब तुमको तुम्हारा प्राप्तित नोटबुक तो मुझे देना ही है। वह नोटबुक और पेन्सिल लेकर बैठ गया।

झुक कर अन्दाजे में ही लिख गया।

—"क्या देखने आ रहे हैं धीराबाबू? देश स्वतन्त्र हुआ है। उस दिन असंख्य ध्वज, अनगिनत झण्डे—रोशनी—अनेक गाने—प्रभूत आनन्द-कलरव से देश उच्छ्वसित हो उठा था। किन्तु रत्नहाटा तो ध्वंसोन्मुख है। इस सीताराम की तरह ही वह अपने अन्तिम क्षण की प्रतीक्षा में है।

आपने संसार का इतिहास पढ़ा है धीराबाबू! मैं सीताराम—किसान घर का लड़का—अंग्रेजी स्कूल में—नार्मल स्कूल में मैंने भारतवर्ष का इतिहास पढ़ा था। फिर आजीवन पाठशाला की पंडिताई, पाठशाला के पाठ्य में इतिहास नहीं है। इसलिए भारतवर्ष का इतिहासभर भी मैं करीब-करीब भूल गया हूँ। भूगोल? भूगोल भी वैसा ही। रत्नहाटा के बीच में खड़े होने पर चारों ओर आकाश जितने-भर में गोल होकर झुक आता है उतनी ही सीमा तक मेरा भूगोल है। लेकिन इस बार इतिहास देखा। सन् उन्नीस सौ इक्कीस से तुम रत्नहाटा के पुत्र—भारतवर्ष के स्वतन्त्रता युद्ध में मत्त हो गए, वह मेरे लिए भारतवर्ष का स्वतन्त्रता-युद्ध नहीं, रत्नहाटा का स्वतन्त्रता-युद्ध रहा। सन् सैंतालीस में आकर वह युद्ध समाप्त हुआ। इस बीच संसार का इतिहास आगे बढ़कर रत्नहाटा के इतिहास को अपने में मिला चुका था। युद्ध ने बड़े-बड़े राज्यों के इतिहास को ही केवल नहीं बदला, रत्नहाटा के इतिहास को भी बदल दिया। युद्ध आया। रत्नहाटा तहस-नहस हो गया। बड़ी-बड़ी गृहस्थियाँ टूट गयीं। श्री गयी—सम्पदा गयी। जो लोग सिर ऊँचा किए हुए थे उनके सिर झुक गए। मणिबाबू को एक बार देख जाना धीराबाबू। कमरे के भीतर चुपचाप बैठे रहते हैं। नौकर रखने की भी हैसियत नहीं रही। खुद ही तमाकू बनाकर पीते हैं। द्वैपायन में महामान्य दुर्योधन की कथा पुराण में पढ़ी है। अपनी रत्नहाटा कथा में मणिबाबू के अन्धकार में दुबक कर बैठने की बात लिखना।

मैं जानता हूँ धीराबाबू, तुम कहोगे, "पंडित अब भी बाकी है। जंघा-भंजन।" तुम मनुष्यों के साथ मनुष्य के रूप में विला गए हो। तुम हँसोगे। बोलोगे—जिन सम्बन्धी व्यक्तियों की उन लोगों ने वंचना की है—तुम उनकी ओर हो। शायद तुम कहो, "मैं ही गदायुद्ध के समय—जाँघ पर चपत मारकर गदाघात का इंगित दूंगा। देना। मैं अगर रहा—तो रोऊँगा। मैं रोऊँगा, धीराबाबू!"

मेरी आँखें जाती रहीं—अच्छा ही हुआ। मुझे ध्वंसोन्मुख रत्नहाटा अब और नहीं देखना पड़ेगा। तुम हँस कर कहोगे"''इसमें डरने का क्या है पंडित! फिर नए तौर से गढ़ूंगा।

गढ़ो, ऐसा ही गढ़ो धीराबाबू! अमृत की तपस्या है तुम्हारी—तुम गढ़ो। मैं पाठशाला का पंडित हूं। मेरी सन्दीपन पाठशाला ही टूट गयी है, मैं अन्धा बना बैठा हूं। मेरी मनोरमा नहीं रही। मेरी रत्ना विधवा हो गई है। मैं मृत्यु-कवलित हूं। अजगर जिस प्रकार धीरे-धीरे खरगोश को पकड़कर ग्रास करता है—उसी प्रकार से मुझे लील रही है। लेकिन फर्क क्या है, जानते हो? फर्क है—खरगोश-सा मैं आर्त्तनाद नहीं कर रहा हूं।

मनोरमा हँसते-हँसते मरी, मृत्यु उसने चाही थी। उसी से सीखा है। लिखना बन्द कर वह नोटबुक के पन्ने उलटता रहा।

"सन् १९३७ के १२ दिसम्बर मनोरमा को मुक्ति मिली। हाँ, यह मृत्यु उसके लिए मुक्ति ही थी। बड़ा ही निष्ठुर आघात उसे लगा था। रत्ना का वैधव्य उसे निदारुण शैल-सा दिल पर आ लगा था।" रत्ना विधवा हो गयी है!

फिर नोटबुक के पन्ने पलटे।

सन् १९३७ के ७ सितम्बर को रत्ना विधवा हुई। लिखा है—"पाठशाला में बैठा था कि टेलिग्राम मिला।" रत्ना—उनकी एकमात्र कन्या थी—बड़ी साध से उसका नाम रत्नावली रखा था। आइ. ए. पढ़ने वाले लड़के से उसका व्याह किया था। याद आ रहा है—पादरियों की चिकित्सा से उसकी आंखों की रोशनी करीब-करीब ठीक ही थी। आसमान में उस दिन बादल थे। लड़के पढ़ रहे थे। अचानक टेलीग्राम आया। टेलीग्राम पढ़कर वह पत्थर हो गया था। कानों से कुछ सुनाई नहीं पड़ रहा था, आंखों से कुछ दिखाई नहीं पड़ रहा था, संसार मानो पुंछ चुका था। गोविन्द भयभीत हो गया था—उसने आकर पुकारा था—पंडित! पंडित!

वह अपने आप में आया, उसे सुनाई पड़ा, कोई शब्द हो रहा है—झर, झर, झर, झर! लेकिन समझ न सका किसका शब्द है। लड़के पढ़ रहे हैं—अ आ इ ई।—क-र—कर। ख-ल—खल। ज-ल—जल।

जल गिरे, पात हिले। जल गिरे पात हिले।

सीताराम की आंखों के आंसुओं से दृष्टि अवरुद्ध हो चुकी थी। झर-झर धारा में वर्षा उतर आई थी उस वक्त—कानों से सुना था, आंखों से देखा नहीं।

तभी से फिर उसकी आँखों से पानी टपकना शुरू हो गया। वह आज भी थमा नहीं। आँखें हैं"'दृष्टि नहीं, देख नहीं पाता, पानी टपकता ही रहता है; अपने-आप ही टपकता है।

उधर इस शोक से मनोरमा ने बिस्तर ले लिया। फिर उठी ही नहीं। निःशब्द अपने बुरे भाग्य की लज्जा से—ईश्वर पर—सीताराम पर रूठ कर ही वह चली गई एक दिन।

मनोरमा की अन्तिम बातें भी लिख रखने की इच्छा थी उसकी। कई रोज कोशिश भी की थी। लेकिन लिख न सका। जितनी ही बार कोशिश की—उतने ही बार उसकी आँखों से अविराम जल गिरता रहा था। नोटबुक और कलम रख देनी पड़ी। रहने दो लिखना। क्या होगा लिखकर? दिल ही में लिखा रहा। अक्षर-अक्षर अस्थि-पंजर पर खुदे रहे।

सज्ञान ही मनोरमा मृत्यु की गोद में ढुलक पड़ी थी। मानों हँसते-हँसते मरण-सागर में डुबकी लगाकर फिर उतरायी ही नहीं—गल गयी चीनी की पुड़िया-सी। सिर्फ चारेक बार व्याकुल हो मुँह से साँस लेने की कोशिश की थी। उसके बाद ही सिर मानो एक ओर ढुलक गया था।

मृत्यु से पूर्व उसने बार-बार उसके हाथ थाम कर कहा था—तुमको मैं सुखी न कर सकी। आशीर्वाद करो, अगले जन्म में मैं तुम्ही को पाऊं, तुम्हारी मन-माफिक बन कर तुमको सुखी बना सकूँ।

चौंक पड़ा था सीताराम।—क्यों? क्यों? यह बात तुम क्यों कर रही हो मनो? तुम मुझे बड़े भाग्य से मिली थी। ऐसी बात न करो तुम। नहीं-नहीं। कहकर वह चिल्ला उठा था।

मनोरमा ने भी कहा था,—नहीं। उसके मुख पर एक विचित्र मुस्कान खिल आई थी। कहा था, मैं जानती हूं। मैं जानती हूं। तुम सुखी नहीं हुए। तुम्हारा असन्तोष मैं भाँप जो लेती थी।

सीताराम हक्काबक्का रह गया था। उसका दिल अनुशोचना से भर गया था। जी में आया था कि अपना अपराध स्वीकार कर ले। पर न कर सका। साथ-ही-साथ मनोरमा की मृत्युशय्या के सिरहाने दीवार पर क्षणभर के लिए एक चित्र उभर आया। रात के अन्धेरे में एक प्रकाशित खिड़की के परदे पर काली छाया से अंकित एक चित्र।

बहुत देर बाद अपने को सम्भाल कर उसने उससे कहा था—तब तो तुम भी सुखी नहीं हो सकी मनो! तुम मुझे क्षमा कर जाओ मनो!

मनोरमा ने बड़ी सुन्दर हँसी हँसी थी। हँसकर कुछ कहने जा रही थी। लेकिन उसी क्षण जाने क्या हुआ। वह व्याकुल और बेचैन हो उठी, चन्द बार मुँह खोलकर साँस लेने की कोशिश की उसने—हाथ बढ़ाकर उसको पकड़ने की कोशिश की फिर सभी कुछ स्थिर हो गया; वह ढुलक गई।

सीताराम रोया नहीं। फूल चुन-सजाकर उसने मनोरमा को अपने हाथों

चिता पर लिटा दिया था। उसने अपने बचपन में पुत्रशोक-विजयी महर्षि द्विजेन्द्रनाथ ठाकुर को शान्ति-निकेतन में देखा था। मन-ही-मन उस दृश्य का स्मरण किया था उसने। प्रशान्त चेहरा लिये बैठे-बैठे रत्ना को उसने सान्त्वना दी थी। आज से उसी को रत्ना का माँ-बाप दोनों बनना पड़ेगा। दिल की पीर दिल ही में रख उसको हँसमुख सारा जीवन बिताना पड़ेगा।

लोग ढाढ़स बँधाने आकर थोड़ा-सा अचरज ही करने लगे थे। प्रौढ़ वय में पत्नी-वियोग से कोई भी सीना पीटकर रोता नहीं है, वह देश और समाज में लज्जाजनक बात मानी जाती है। लेकिन उसको इस प्रकार स्थिर और शान्त देखने की भी उन्होंने प्रत्याशा नहीं की थी। लोगों ने भला भी कहा था और बुरा भी। हालाँकि वह सब आड़ ही में कहा गया था। मुँह के ऊपर कहा था कन्हाई राय ने। कन्हाई काका को उससे प्यार था। लेकिन विचित्र मनुष्य था वह। उसने उस दिन उससे कहा था—तुम तो बेटा, पत्थर हो। फिर कहा था—सो भी कैसे कहूं। पत्थर में न सुख है न दुख। तुम्हारा सभी कुछ उल्टा-पुल्टा है बेटा! सुख के दिनों तुम्हारे चेहरे पर कभी हँसी नहीं देखी। फिर इतना दुःख-शोक है—तुम्हारी आँखों में आँसू नहीं; सुख के दिनों में मुख देखकर लगता कि हाय इस आदमी को कितना कष्ट है! आज देख रहा हूं, हँसकर बुला रहे हो, आओ काका, आओ।

हथेली उलट कर उसने जताया था—क्या जाने! कुछ भी न समझ सका तुमको। फिर बोला था, अच्छा, बताओ भला तुम्हें दुःख में ही सुख मिलता है कि नहीं?

सीताराम ने कहा था, संसार में दुःख ही तो परम वस्तु है राय काका! सुख के समय लोग भगवान को भूल जाते हैं, दुःख ही उसे याद दिला देता है।

राय ने कहा था, क्या जाने बेटा, दुःख किसे कहते हैं, नहीं समझ सका।

—नहीं समझे? सीताराम हँसा था।

—कौन जाने? दोनों हाथ उलटकर उपेक्षा से उसने कहा था—हँसा, खेला, नाचा, गाया—दिन गुजर गया। खात्मा भी कर लाया हूं। कहाँ, दुःख कहाँ? हालाँकि नाचने में पैर फिसलता है, दौड़ने में ठोकर लगती है, जिन्दा रहने में बीमारी होती है; दारू पीने पर खुमारी, खत्म होते वक्त सिर भारी हो जाता है; जब मर्जी चीखता-चिल्लाता-रोता हूं, उसी में सुख मिलता। तुम रोओ—देखोगे, सुख मिलेगा।

जाते वक्त बोला था—मैं तो खुद आया ही हूं, रानी माँ ने भी सन्देश भेजा है। कहा है—गाड़ी पर एक दिन जाऊँगी। बड़ा दुःख मिला है सीताराम को, उससे बेटे की तरह स्नेह करती हूं—मुझे भी बड़ा दुःख मिला। एक दिन जाऊँगी।

यह क्या? चौंक पड़ा था सीताराम। माँ आएँगी क्यों? नहीं-नहीं।—काका माँ से कहना-मैं खुद ही जाऊँगा। कल ही जाऊँगा।

अगले दिन ही वह गया था।

माँ ने उसके मुख की ओर देख सिर पर हाथ रख आशीर्वाद दिया था—तुम्हें सिद्धि मिलेगी बेटा। तुम्हारी सहनशक्ति देखकर मैं समझ रही हूँ—तुम्हें मिलेगी।

वह भी एक विचित्र नारी हैं। सदा से सीताराम जितना उनसे प्यार करता रहा है—उतना ही डरता रहा है। वह भय उसका तिल भर भी कम नहीं हुआ। लेकिन हाँ! रानी माँ—सचमुच की रानी माँ थीं। हिमालय की सफेद बर्फ से ढकी। वैसी ही उज्ज्वल, वैसी ही प्रदीप्त, वैसी ही कठिन। हालांकि उन्हीं के वक्ष से—गंगा-यमुना-ब्रह्मपुत्र निकल आए हैं। करुणा की धाराएँ।

कितना नाम है धीराबाबू का! कितना गौरव! देश-देशान्तर सारे भारत-वर्ष भर में उनकी ख्याति फैली हुई है। फिर भी उस एक अपराध के कारण वे कभी बेटे के पास नहीं गईं, बेटे को बुलाया नहीं। कहा है, अकेले धीरा को कैसे बुलाऊँगी? बहू का छुआ हुआ खाऊँगी नहीं, उसके बच्चों को गोद में लेते मन सकुचाएगा—उनको मैं बुला नहीं सकूँगी, धीरा क्या खुशी से आ सकेगा? माँ की इस भ्रान्ति से सीताराम को क्लेश होता। लेकिन भ्रान्ति हुई भी तो क्या, उनकी चरित्र-महिमा और अन्तर-वेदना से वह भ्रान्ति भी महिमान्वित हो उठी है। उनकी वेदना को सीताराम समझता था।

देबू को लेकर ही वे प्रसन्न-मन सारा जीवन बिता गईं। देबू क्रमश: इस इलाके का नामी देश-सेवक बन गया है। वे इसी से खुश थीं। लेकिन उन्होंने एक अन्याय कर डाला है। देबू-श्याम् के शुभाकांक्षी होने के कारण ही सीताराम ने इस बात को महसूस किया है। जमाना बिगड़ने जाने के बावजूद—माँ ने घर के क्रिया-कर्म और हर एक के प्राप्य में कोई कमी नहीं की है। फलत: देबू-श्याम् की हालत ज्यादा खराब हुई है। किसी का प्राप्य घटाने का प्रस्ताव मुँह में लाने का भी उपाय नहीं था। लाने पर—उनके चेहरे पर प्रचंड घृणा का भाव उभर आता था—क्या गजब की निगाहों से वह देखती थीं। रत्नहाटा के बाबुओं की कोठी का जमाना मानो उन्हीं के साथ-साथ चला गया। माँ चली गई हैं किन्तु उनको याद कर सीताराम आज भी भय और सम्भ्रम से सजग हो उठता है। उनकी महिमा और माधुर्य के बारे में सोचते-सोचते वह उदास हो जाता है।

माँ के साथ आखिरी भेंट हुई थी उनकी रोगशय्या पर। उस समय पाठशाला उसने बन्द कर दी। आँखों की रोशनी उसकी बिल्कुल क्षीण हो चुकी थी। लाठी के सहारे राह चलकर वह माँ को देखने गया था।

—कैसी हैं माँ?

उस बात का जवाब उन्होंने नहीं दिया था। पूछा था, तुम्हारी दृष्टि ऐसी हो गई है बेटा?

सीताराम हँसा था। माथे पर हाथ रखा था।

माँ ने कहा था—दीखता नहीं है बेटा? दीखता नहीं तो सुन। बाहर की

रोशनी जब कम होने लगी है तब भीतर रोशनी जलाने का प्रबन्ध करो।

●●

दीक्षा उसने ली है।

गुरु को प्रणाम, और माँ—आपको प्रणाम। गुरु ने दिया है मंत्र—और आपने दिया था परामर्श। धीराबाबू मंत्र की बात सुनकर हँसे थे। सीताराम ने उनको पत्र से यह समाचार भेजा था। जबाब में धीराबाबू ने लिखा था —"कौन-सा मंत्र लिया तुमने पंडित ? सरस्वती मंत्र हो तो मुझे कुछ कहना नहीं। लेकिन वह दीक्षा तो तुम्हारी बहुत दिन पहले हो चुकी है। खुद ही ली थी तुमने। उसका गुरु कौन है—सो तुम ही जानते हो। पंडित, माथे पर तिलक-चन्दन लगाये तुम्हारे चेहरे की कल्पना करता रहा—और हँसता रहा। नहीं-नहीं पंडित, यह मुझे अच्छा नहीं लगा।" सीताराम ने लिखा था, "आपका कर्म उच्च है, साधना विपुल, शायद जन्म-जन्मान्तर का पुण्य हो या किसी भी कारणवश जन्म से ही आपकी उपलब्धि की प्रतिभा बड़ी है। आपको मंत्र की आवश्यकता नहीं, मुझे है।"

है क्यों नहीं ! धीराबाबू, जो लोग आकाश में उठते हैं—उठ सकते हैं, उनसे आकाश की बातें, आकाश में उठने के पथ के बारे में उपदेश या मंत्र लिए बिना धरती के मनुष्य के लिए क्या उपाय है ?

तो सुनो कन्हाई राय की बात बताऊं।

वह जो मनुष्य कन्हाई राय है—जिसने हँस-खेल, नाच-कूद कर सारी जिंदगी बिता दी उसकी आखिरी बात बताता हूँ, सुनो। उपपद तत्पुरुष लोगों ने उसे पसन्द नहीं किया, उसने भी किसी की परवाह नहीं की। लोगों ने उसकी बात सुनी नहीं लेकिन कहने से वह चूका भी नहीं। बाबुओं की कोठी में सारी जिंदगी बिता दी। उनके हितों की कामना करता रहा। बाबुओं की वसूली से पूर्व वह अपना हक वसूल करता था, शराब पीता था, ऊँची आवाज में कहता था, कौन जाने बाबा, दुःख किसे कहते हैं। उसी कन्हाई राय ने मरते समय कहा—सीताराम से ही कहा—भगवान को क्या कहकर पुकारूँ, बता भला सीताराम ! पुकारने जा रहा हूँ पर पुकार नहीं पा रहा हूं। बड़ा डर लग रहा है ! हाय रे बप्पा ? बता भला क्या करूँ ?

निमोनिया हुआ था कन्हाई राय को। बाबुओं की कोठी में ही मरा। माँ तब नहीं रही, इसलिए कोई तीमारदारी भी उसकी नहीं हुई। बिना किसी देख-रेख के ही पड़ा था। देखने जाकर सीताराम ही आखिरी तीन दिन उसके पास रहा। छोड़कर न आ सका। उस वक्त वह घोर विकार में था। आँः ! आँः ! शब्द कर छाती के दर्द से वह कराह रहा था; बीच-बीच में विह्वल आँखें खोल उँगली बढ़ाकर चिल्ला उठता था। मरा रे, मरा रे ! गया, गया, गया।

क्या हुआ ? राय काका ! राय काका !

जा बे। साला खूब बच गया।

आखिरी दिन होश में आए थे। सीताराम को देख हँसकर कहा था—तुम ? हाँ, तुम्हारे सिवा और हो भी कौन सकता ?

सीताराम ने कहा था —कैसे हो ?

सीने पर हाथ रख राय ने कहा था—छाती में बड़ा दर्द है।

इसके बाद वही बातें कही थीं। कहा था—उस तकलीफ से ज्यादा तकलीफ मन में है। समझे ? भगवान को क्या कहकर पुकारूँ, समझ नहीं पा रहा हूँ। पुकारने को होकर भी पुकार नहीं पा रहा हूँ। बता सकते हो तुम ? मरने में डर लग रहा है।

●●

दीक्षा की बात पर तुम हँसो मत घोराबाबू, तुमको तो हँसना नहीं चाहिए। घोराबाबू, जो नन्हे लोग माटी पर रहते हैं वे हाथ बढ़ाकर भी ऊँचे तबके के लोगों तक पहुँच नहीं पाते हैं। ऊपर वाले लोगों को वे समझ नहीं पाते। और जो नन्हे लोग सुयोग-सुविधा पाकर ऊपर उठ जाते हैं वे भी हाथ बढ़ाकर माटी के मानुस को छू नहीं पाते। लेकिन जो लोग सचमुच बड़े लोग हैं, वे माटी पर खड़े होकर भी ऊँचाई में रहने वालों को अपनी पहुँच में पाते हैं, फिर ऊँचे उठ जाने के बाद भी नीचे की ओर हाथ बढ़ाकर माटी-मानुस के हाथ थाम लेते हैं। उनको समझने में कोई गलती तो नहीं होनी चाहिए।

दीक्षा न लेता तो मेरा वक्त कैसे कटता, बताइए ?

आँखों के सामने से लगभग सभी कुछ पुछ गया है। पृथिवी सफेद कोहरे से ढकी हुई। ओसारे बैठा रहता हूं और मन में इष्ट का जाप करता रहता हू।

दिन के नौ बजे एक बार दुनिया से सम्पर्क स्थापित होता है।

लड़के रास्ते से पाठशाला जाते हैं। सन्दीपन पाठशाला की घड़ी घर में टगी है। उसमें टन्न-टन्न नौ की टंकोर बजते ही उसके कान सजग हो उठते हैं। पैंट सुनाई पड़ने लगती है। सीताराम झुक-झुककर देखता। कोहरे में धुंधली आकृतियों जैसे लड़कों को देखता—रोजाना ही उनको बुलाता; पूछता, स्कूल चले सब ?

—जी।

—स्कूल कैसा लग रहा है ?

—अच्छा।

—अच्छा ? सच कह रहे हो ?

—जी, सच कह रहा हूँ।

—मास्टर मारता नहीं ?

—मारता है।

—तो ? तो फिर अच्छा क्यों लगता ?

—लगता है। कितने लड़के आते हैं इस गाँव, उस गाँव से। कितना सुन्दर भवन है ! बहुत-सी तसवीरें हैं। कितने चमचमाते बेंच हैं।

सीताराम चुप हो जाता। वह काल के परिवर्तन के बारे में सोचने लगता। बड़े परिवर्तन आए हैं। पिछले सन् चालीस में उसकी सन्दीपन पाठशाला बन्द हो गयी। उस वक्त फ्री प्रायमरी स्कूलों की नींव पड़ी थी। उसको कोई अफसोस नहीं था। वह अक्षम हो गया है और दूसरी ओर विना फीस के देश के सभी वालक पढ़ सकेंगे, लिहाजा इसमें खेद करने का क्या है! खेद केवल इतना ही है—अगर सिर्फ नाम रह जाता। सन्दीपन पाठशाला। दूसरा खेद, अपने प्रथम जीवन में उसे ऐसा मौका क्यों नहीं मिला? काश! वह ऐसे एक सुसज्जित स्कूल में शिक्षकता कर सकता। वह उदास हो जाता। अचानक उसे एक वात याद आ जाती। वह पूछता—क्यों—क्यों! तुम लोगों की कुर्सी-मेज, मकान-अकान तो अच्छे हैं—फूलों का वगीचा वनाया—तुम लोगों ने? अजी! कहाँ? सभी चले गये क्या?

वे उस वक्त चले गए थे।

सीताराम चुपचाप वैठा रहता। रास्ते से कोई जाता तो वह गुहारता—कौन जा रहे हो?

—मैं हूं पंडित।

—कौन? चंडीचरण?

—हां।

—सुनो सुनो।

—ढेर-सारे काम हैं पंडित, सुनने की इस वक्त फुरसत नहीं। गाय दुहना है। वछड़ा अभी नन्हा-सा है। तिस पर गाय सिर हिलाती है। किसी औरत की क्या मजाल जो पास चली जाए।

—जाओ। तो फिर जाओ।

चंडीचरण आधा झूठ वतला गया। गाय शायद दुहना है लेकिन उसके लिए इतना हड़वड़ाकर वह नहीं गया, सीताराम के पास वैठना नहीं चाहता, तभी चला गया। वह जानता है, वे कहते हैं—अरे वाप, ऐसे मनही के पास कहीं वैठा जा सकता है? वस पढ़ाई-लिखाई की वातें—नहीं तो विज्ञ-विज्ञ वातें। अगर रस की दो वातें करो तो छी-छी करने लगेगा। राम कहो।

वह करे भी तो क्या? उससे यह सव नहीं होता। जाने कैसी रुचि वन गई है उसकी! पवित्र तो है लेकिन वह जरा खुश्क और कठिन है इसमें कोई संदेह नहीं। दीर्घश्वास छोड़ वह बुलाता—रत्ना विटिया!

रत्ना इस वक्त रसोई के काम में लगी रहती है। वह भीतर से जवाव देती, क्या है वावू?

—क्या कर रही है?

—सब्जी चढ़ाई है वावू।

—अच्छा, तो फिर रहने दे।

—क्यों वावू? चाय पिओगे?

अब उसने यह एक आदत डाल ली है। चाय पीता है। चाय की लालच में दो-चार जने आ जाते हैं। कोई न आने पर रत्ना ही एक कटोरी लेकर पास बैठ जाती है।

और कुछ भी न होने पर चुपचाप बैठा रहता है। सोचता है—सूर्य के चारों ओर पृथ्वी घूम रही है। चल रही है तो चल रही है। वही केवल बैठा है। यह भावना भी दुस्सह हो उठे—तो क्या करेगा वह ? बता सकते हो धीराबाबू ? क्या करेगा ?

तब उसी इष्टमंत्र का जप। वह इस इष्टदेवता के रूप का ध्यान करने की कोशिश करता। बिना मंत्र के कहीं चल सकता है धीराबाबू ?

समय बीत जाता। बड़े मजे में बीत जाता। कहाँ से बीत जाता, यही उसकी समझ में नहीं आता। रत्ना आकर बुलाती—बाबू उठो, नहा लो, दिन काफी चढ़ आया है।

सचमुच दिन काफी चढ़ आया है; स्वतंत्र रत्नहाटा के नए प्राथमिक विद्यालय में, बड़े स्कूल में टिफन का घंटा बजता—टन्न टन्न टन्न—ट न न न न।

●●

घप्प घपाम, घप्प घपाम;—दो असमान शब्द द्रुत आगे बढ़ते आ रहे हैं। सीताराम ने सुनकर ही जान लिया, श्री बाँकाचाँद गोविन्द छोटे-बड़े पैरों से एक कम एक ज्यादा आवाज उभारते भागते आ रहे हैं। आओ बाँका चाँद, बंकुबिहारी।

वही—वही एक है—उसके इस निस्संग जीवन का साथी। बीच-बीच दो-तीन दिन के बाद एक-एक दिन गोविन्द आता है। एक वेला—किसी दिन दोनों वेले ही यहाँ काट जाता। दुनिया-भर की खबरें लेकर आता है।

—समझे पंडित, बड़ी जबरदस्त खबर है आज !

—क्या जबर खबर है बाँकाराय ?

—याने कलजुग का खात्मा समझो। माँ चंडी के थान में सभी पूजा कर सकेंगे, मन्दिर में प्रवेश कर सकेंगे, कानून बन गया। और साथ ही साथ एक जबरदस्त मामला, चाटुज्जे के घर में किम्भूतकिमाकार बच्चा पैदा हुआ है, सिर पर सींग ! है न कलजुग का खात्मा !

ऐसी ही विचित्र खबरें वह ले आता है। किसी दिन खबर लाता—"मंत्री आ रहा है रत्नहाटा में। बाबू बाबू में लड़ाई छिड़ गयी है। यह कहता मंत्री हमारे घर में टिकेगा तो वह कहता कभी नहीं, हमारी कोठी में ठहरेगा।"

स्वाधीन देश का मंत्री आ रहा है। बाबू लोग तो झगड़ेंगे ही। झगड़ें। लेकिन ये मंत्री लोग बाबुओं के घर में टिकते ही क्यों हैं ? मन असन्तोष से भर जाता। गरीबों के घर में क्यों नहीं ठहरते ?

किसी दिन खबर लाता, कलकत्ते में मकानात चूर-चूर हो गए हैं। हवाई जहाज टूट पड़ा है।

किसी दिन बाँका चाँद आता, कहता, "हो गया है पंडित ! चलो कल ही चलो। बिल्कुल आँखें दुरुस्त कर घर लौटोगे। सपने देख एक तीर्थ उभर आया है, कैसा भी मरीज क्यों न हो, सात दिन नहाकर लोटपोट खाते ही चंगा हो जायगा। समझे, कोढ़ी अच्छे हो गये हैं। यहीं नजदीक ही। बीस कोस होगा।

सीताराम हँसता। वह इष्टमंत्र का जप बेशक करता है, लेकिन यह विश्वास उसमें नहीं है।

एक दिन खबर ले आया था, पंडित, तुम्हारे जयधर को देखा। ओफ ! इतना भारी बदन हो गया है—सारे जहाँ का सामान लेकर टीसन पर उतरा। मुझे पहचाना जी। बोला, लंगड़े गोविन्द ! अर्दली मुझे भागो-भागो कह रहा था लेकिन जयधर ने पहचान लिया तो वह खिसक गया। तुम्हारे बारे में पूछा; मैं तुम्हारा सारा ब्योरा सुना रहा था लेकिन पूरा सुना न सका। उससे पहले ही किराए की मोटर आ धमकी। सामान लादकर सर्र से चली गई। मुझे आठ आना दिया है। सोचा था, पूरा रुपया देगा। हाकिम है। लेकिन मिले आठ ही आने।

जयधर अब मुन्सेफ है।

सीताराम की नोटबुक में जयधर का नाम बहुत बार रहने की बात है लेकिन ऐसा नहीं है। उसके मैट्रिक में स्कालरशिप मिलने का समाचार। आई. ए. में द्वितीय होने की खबर। उसके बाद भी एक खबर है जिसको लिखकर भी सीताराम ने काट दिया है। जब जयधर बी. ए. पढ़ता था, एक दिन आकू स्टेशन से भागता हुआ आया। सर, जयधर स्टेशन पर उतरा है।

जयधर ! सीताराम ने उच्छ्वसित हो आकू से कहा था, आकू, उसे जाकर बता, मैं बुला रहा हूँ। जल्दी जा।

जयधर कालेज से आता-जाता है, इस रास्ते से नहीं। दूसरे स्टेशन पर उतरकर घुमावदार रास्ते से जाता है। उसकी माँ उस वक्त नौकरी छोड़कर चली गयी है। सीताराम जयधर के झेंपने का कारण जानता था।

आकू गया। सीताराम प्रतीक्षा में उद्ग्रीव बैठा रहा। लेकिन दोनों में एक भी नहीं आया। अन्त में ज्योतिष साहा के भतीजे से मालूम हुआ—आकू और जयधर में स्टेशन पर बड़ा भद्दा-सा झगड़ा हो गया है।

—क्यों ? कैसा झगड़ा ? उसे पछतावा हुआ—क्यों उसे बुलाने उसने चंडाल आकू को भेजा था।

सीतेश जरा चुप रहकर झिझकते हुए ही बोला—आकू ने कहा था, पंडित से भेंट करके जाना जयधर। इस पर जयधर ने कहा था—इससे मुझे घर जाने में देर हो जाएगी। इसी पर आकू ने शायद कहा था, देर हो जायगी इसलिए पंडित से नहीं मिलेगा ? अजीब निमकहराम है तू ! यही झगड़ा है। जयधर ने भी क्या कुछ कहा है, आकू ने भी कहा। और आकू की जुबान !

जयधर ने कहा था—बहुत-सारे पंडित, बहुत सारे मास्टरों के पास ही पढ़ा,

सभी से मिल-मिलाकर प्रणाम करना पड़े तो—पैर घिसकर आधे हो जायेंगे और माथे पर गूमट निकल आयगा। तेरा तो बस वही एक पंडित है—तू जा।

आकू ने जयधर को नौकरानी का बेटा होने का स्मरण करा दिया है। बहुत सारी बातें कही हैं उसने —रसहाटा के बाबुओं का बेटा है वह। लेकिन जयधर विश्वविद्यालय का कृती छात्र है, उसने ऐसी तीखी भाषा में उस पर तीर चलाये हैं कि आकू ने हार मान ली है। इसके बाद जयधर दूसरा रास्ता पकड़ घर चला गया है। भेंट नहीं की।

यह घटना लिखकर भी उसने काट दिया है।

लेकिन उसके बी. ए.-एम. ए. पास की तारीखें हैं। मुन्सिफ होने के समाचार पाने की तारीख है। बस और नहीं। कल्याण हो जयधर का, जयधर को उसने जीवन से पोंछ डाला है। मुन्सिफ होने वाली खबर पाकर उसने जयधर को आशीर्वाद करते हुए पत्र लिखा था। अपनी दशा के बारे में भी लिखा था—हो सके तो एक बार अभागे पंडित को भी देख जाना। जवाब में चिट्ठी नहीं आई, पाँच रुपये का एक मनी-आर्डर आया था। हाय जयधर ! सीताराम को तूने भिखमंगा ठहराया। उसने क्या तेरी सहायता पाने के लिए अपना दुख-दर्द सूचित किया था रे? रुपया उसने लौटा दिया था। उसी दिन से उसने उसे अपने मन से पोंछ डाला था।

फिर भी उसने उसकी अमंगल-कामना नहीं की। धीराबाबू की ही एक बात का उसने स्मरण किया था—धीराबाबू एकदिन देबू का प्रथम भाग उलट-पुलटकर देखते हुए बोले थे—विद्यासागर महाशय ने त्रिकालदर्शी की तरह प्रथम भाग की रचना की है पंडित। देखा है आपने—पहले अचल है फिर अधम। संसार में जो चलता नहीं वही अचल है, और जो अचल है वही अधम है। उस दिन सीताराम ने कहा था, नहीं धीराबाबू, यह बात लेकिन उल्टी है, जो अधम होता है वही अचल हो जाता है। हम लोगों की ओर देखिए न, अधम भाग्य लेकर जन्मे हैं तभी संसार में अचल बने रहें। शिवकिंकर की ओर देखिए, अधम कुल में अधम भाग्य लेकर उसने जन्म नहीं लिया है तभी अचल होने पर भी उत्तम के रूप में चला जा रहा है।

असम पैरों से विचित्र शब्द करते हुए गोविन्द आज भागता हुआ आया।—पंडित !

—क्या समाचार है बाँकाचाँद ? कौन-सी संगीन घटना घटित हो गयी आज ?

—बस आ ही पहुँचा पंडित !

—कौन ?

—तुम्हारे धीराबाबू जी।

—यह क्या ? वे तो शाम के बाद आएंगे।

—नहीं जी, उसने मीटिंग-पिटिंग मुलतवी कर दी और कहा, पहले मैं पंडित से मिलूँगा।

सीताराम अभिभूत हो गया। विश्वसंसार मानों मधुमय हो उठा ! धरती पर इतना मधु है ? धीराबाबू कौन है ? यह तो सारे संसार का मधु है—इस संसार का दान। संसार के मधु से धीराबाबू मधुर है।

पंडित ! धीराबाबू सचमुच आकर खड़ा हो गया।

सीताराम अपने जीर्ण झुके हुए शरीर को सीधाकर बैठ गया। धीराबाबू ! उसका शरीर आनन्द से रोमांचित हो उठा। वह उठकर खड़ा हो गया।

धीरानन्द ने जोर से उसे अपने वक्ष में बांध लिया।—मैं आ गया हूं पंडित।

मैं जानता हूं, आप आएंगे। रत्ना, आसन दे, आसन दे बेटी।

रत्ना पहले ही निकट आ खड़ी हो गयी थी। उसने कहा, आसन लायी हूं बाबा !

दे, बिछा दे। मेरे पास आ जा। खुद ही रत्ना के सिर पर हाथ रखकर बोला, मेरी रत्ना है यह धीराबाबू ! मेरा शक्तिशेल। प्रणाम कर बेटी।

धीरानन्द ने आशीर्वाद किया।

सीताराम बोला, लक्ष्मण से भी मैं बड़ा वीर हूं धीराबाबू। शक्तिशेल के आघात से लक्ष्मण अचेतन हो गये थे, हनुमान को विशल्यकरणी लाने में गन्धमादन उठाकर ले आना पड़ा था। मैं शक्तिशेल सीने में लिए फिर रहा हूं। वह हंसा, फिर बोला, कहां, आप जरा आगे बढ़ आइए, देखें आपको, कितने बड़े आदमी हैं आप।

—आंखों से क्या बिल्कुल देख नहीं पाते हो मास्टर !

—पाता हूं। अच्छी तरह नहीं देख पाता।

—अरे तो फिर !

—तो फिर क्या ?

—उम्र तुम्हारी कोई ज्यादा तो है नहीं।

पाठशाला का पंडित जिसकी मासिक आय पन्द्रह रुपया हो, उसके लिए यही उम्र काफी है। इसके अलावा—। पंडित हंसा। हंसते-हंसते ही बोला, जानते ही होंगे, सन्दीपन पाठशाला उठ गयी। देश पर शिक्षा-कर लगा। फ्री यू० पी० स्कूल बने, मेरी पाठशाला भी उसी में चली गयी। और ये आंखें लेकर करूंगा भी क्या ?

नहीं पंडित ! तुम वीर हो, तुम सच्चे पंडित हो। आज इस नए स्कूल में जरूरत थी। नए युग में पुरानी बातें, सुख के दिनों में दुःख की बातें करने वाले लोगों के सिवाय चलेगा नहीं।

नहीं, बस और नहीं। आंखें भी जाती रहीं। जमाना भी नया है धीराबाबू। नये अच्छे लोग आए हैं। बेहतरीन आदमी, भला छोकरा। बातें करके आनन्द मिला। बहुत-सारी बातें हुई उसके साथ। क्या कहा, जानते हैं ? कहा, सभी लोगों को शिक्षित करना पड़ेगा—चंडाल से ब्राह्मण तक। धीराबाबू, मेरा शरीर रोमांचित हो उठा। सिखाएं। शिक्षा दें। अगर जिन्दा रहा, तो उस दिन

काश ! एकबार के लिए भी दृष्टि वापस पा जाऊँ। इन्सान के उस मुख का रूप एकबार देखूँगा।

धीरानन्द उसके बदन पर हाथ फेरते हुए बोला, यह सब बातें रहने दो पंडित !

रहने दूँ ?

हाँ। मैं तुम्हारी अपनी बातें सुनने आया हूँ।

वही तो हमारी अपनी बात है जी। अच्छा फन्स पढ़ाई सभी करें। पाठशाला के पंडितों के पास इसके सिवा और कौन-सी बातें हैं, बताइए ? जो नहीं सीख सकेगा, उसे बेवकूफ, बुद्धू, गधा कहकर गाली दूँगा। सीताराम हँसने लगा।

वह मैं जानता हूँ। उसका मैं अनुमान लगा सकता हूँ। पंडित, अपनी मनोरमा के बारे में बातें करो। अपनी रत्ना के बारे में।

केवल मेरी ही बातें लेकर किताब लिखेंगे आप ?

हाँ। बताओ अपनी बातें। सिर्फ तुम्हारी ही बातें।

अरी रत्ना ! बेटी जरा किसान-बहू से कह दे, ताजा दूध ले आने को। धीराबाबू को चाय बना दे। वर्ना कहानी जमेगी नहीं। हाँ—धीराबाबू, यही अच्छा है। सिर्फ मेरी बातों को लेकर ही किताब लिखिए। श्रीशबाबू भी पाठशाला के पंडित हैं लेकिन वह मुझसे बहुत बड़े आदमी हैं। फिर पलाशबुनी के पंडित—वे मुझसे कुछ अलग ही तरह के हैं। सिर्फ मेरी बातें लेकर किताब लिखिएगा। लेकिन कोई झूठा रंग न चढ़ाइएगा उस पर। इकतारे से जिस प्रकार का सुर निकलता है वैसा ही बजाइएगा। बाउल का गाना जैसा होता है, वैसा ही रखिएगा। इकरंगा चित्र कैसा भी लगे उस पर दूसरा रंग न चढ़ाइएगा।—सन्दीपन पाठशाला का यह सीताराम पंडित।

नोटबुक उसके हाथों में देकर वह बोला, इसी में सबकुछ लिखा है। सिर्फ एक बात नहीं लिखी। जरा देखिए तो रत्ना कहाँ है ?

यहाँ तो नहीं है, शायद रसोई में हो।

धीमे स्वर में वह बोला, धीराबाबू, विद्यालय में एक शिक्षिका आई थी—उससे मैंने प्यार किया था। पाठशाला का पंडित होने पर भी मैं इन्सान ही हूँ। यही बात इसमें लिखी नहीं। बताता हूँ, सुनिए यह बात।

वह बात खत्म कर पंडित चुप ही बैठा रहा।

●●

धीरानन्द बोला, पंडित, तो मैं अब उठूँ।

पंडित भी उठकर खड़ा हो गया। धीरानन्द ने फिर उसे बाहों में बाँध लिया।

सीताराम अचानक बोल पड़ा, और एक बात है धीराबाबू ! उसके होंठ काँपने लगे।

बताओ पंडित।

—मेरी एक बात और भी है धीराबाबू।

—बताओ पंडित। बताओ।

मेरा हाथ थामकर मुझे ऊपर ले जाएंगे ? वहाँ बताऊँगा, वहीं बताऊँगा।

धीरानन्द उसे सहारा देकर ऊपर ले गया।

पंडित अन्दाज़े से ताखे के पास गया। पुकारा, धीराबाबू !

पंडित !

मेरा पाप— इस पाप से मुझे मुक्त करें।

ये किताबें आपकी हैं। मैं पढ़ने लाकर इनको लौटाया नहीं। इनको आप ले जाइए। रजनीबाबू की एक किताब है। धीराबाबू !

धीरानन्द स्तब्ध खड़ा रहा। कुछ देर बाद फिर आकर उसने पंडित को अंकवार में भर लिया। भीरु दुर्बल हृदस्पन्दन दरिद्रता-क्षीण वक्षपंजर के अन्तराल से ध्वनित हो रहा है। आवेश की प्रबलता से शरीर ज्वर से उत्तप्त और प्रखर। क्षीण दृष्टि से वह मुक्त द्वारपथ से अस्तगामी सूर्य की अन्तिम रश्मि से उज्ज्वल पश्चिम आकाश की ओर देख रहा है। होंठ मानों किसी असहनीय थर-थर कम्पन से कांप रहे हैं।

धीरानन्द ने गाढ़े स्वर में कहा, 'जय हो, जय हो'—पंडित, तुम्हारी जय हो ! धीरानन्द के आलिंगन के समय उसकी आँखों से चश्मा गिर गया।

सीताराम ने पुकारा, रत्ना ! एक बत्ती दे जा बेटी। कमरा अंधेरा हो गया।

आई बाबू !—रत्ना ने जवाब दिया।

धीरानन्द ने आश्चर्य से कहा, यह क्या पंडित, तुम तो कुछ भी देख नहीं पाते हो ? कमरे में अब भी तो प्रकाश है। इतनी देर में उसने पंडित की दृष्टि-हीनता का परिमाण महसूस किया। सिहर उठा वह।

सीताराम ने हँसकर कहा, प्रकाश है ? ओह, चश्मा गिर गया है न आँखों से। देखिए तो धीराबाबू, नहीं तो मैं ही शायद अपने पैरों से तोड़ डालूं।

धीरानन्द ने चश्मा उठाकर उसके हाथों में दिया। चश्मा पहनकर सीताराम ने कहा, यही अच्छा है।

धीरानन्द ने उसका हाथ थामकर कहा, पंडित, तुम मेरे साथ चलो, आँखों का इलाज कराओगे।

सीताराम ने गर्दन हिलाई, नहीं। जरा चुप रहकर बोला, क्या देखूँगा आँखों से ? रत्ना की विधवा मूर्त्ति ! रहने दो। धीरानन्द सन्नाटे में आ गया।

रत्ना बत्ती पहुँचा गई। खामोशी तोड़कर सीताराम ने कहा, अच्छा आँखों से मैं भगवान को देखने की कोशिश करूँगा। आपकी माँ ने कहा था—मैं देख सकूँगा। देखें, देख पाता हूँ कि नहीं। ऊपर की ओर उसने दृष्टि टिका दी।

धीरानन्द ने, इस क्षण का मौका पा, दोनों हाथ माथे से लगाकर उसे प्रणाम किया।

—बताओ पंडित। बताओ।

मेरा हाथ थामकर मुझे ऊपर ले जाएंगे ? वहाँ बताऊँगा, वहीं बताऊँगा।

धीरानन्द उसे सहारा देकर ऊपर ले गया।

पंडित अन्दाजे से ताखे के पास गया। पुकारा, धीराबाबू !

पंडित !

मेरा पाप— इस पाप से मुझे मुक्त करें।

ये किताबें आपकी हैं। मैं पढ़ने लाकर इनको लौटाया नहीं। इनको आप ले जाइए। रजनीबाबू की एक किताब है। धीराबाबू !

धीरानन्द स्तब्ध खड़ा रहा। कुछ देर बाद फिर आकर उसने पंडित को अंकवार में भर लिया। भीरु दुर्बल हृदस्पन्दन दरिद्रता-क्षीण वक्षपंजर के अन्तराल से ध्वनित हो रहा है। आवेश की प्रबलता से शरीर ज्वर से उत्तप्त और प्रखर। क्षीण दृष्टि से वह मुक्त द्वारपथ से अस्तगामी सूर्य की अन्तिम रश्मि से उज्ज्वल पश्चिम आकाश की ओर देख रहा है। होंठ मानों किसी असहनीय थर-थर कम्पन से कांप रहे हैं।

धीरानन्द ने गाढ़े स्वर में कहा, जय हो, जय हो—पंडित, तुम्हारी जय हो ! धीरानन्द के आलिंगन के समय उसकी आँखों से चश्मा गिर गया।

सीताराम ने पुकारा, रत्ना ! एक बत्ती दे जा बेटी। कमरा अंधेरा हो गया।

आई बाबू !—रत्ना ने जवाब दिया।

धीरानन्द ने आश्चर्य से कहा, यह क्या पंडित, तुम तो कुछ भी देख नहीं पाते हो ? कमरे में अब भी तो प्रकाश है। इतनी देर में उसने पंडित की दृष्टि-हीनता का परिमाण महसूस किया। सिहर उठा वह।

सीताराम ने हँसकर कहा, प्रकाश है ? ओह, चश्मा गिर गया है न आँखों से। देखिए तो धीराबाबू, नहीं तो मैं ही शायद अपने पैरों से तोड़ डालूं।

धीरानन्द ने चश्मा उठाकर उसके हाथों में दिया। चश्मा पहनकर सीताराम ने कहा, यही अच्छा है।

धीरानन्द ने उसका हाथ थामकर कहा, पंडित, तुम मेरे साथ चलो, आँखों का इलाज कराओगे।

सीताराम ने गर्दन हिलाई, नहीं। जरा चुप रहकर बोला, क्या देखूंगा आँखों से ? रत्ना की विधवा मूर्त्ति ! रहने दो। धीरानन्द सन्नाटे में आ गया।

रत्ना बत्ती पहुँचा गई। खामोशी तोड़कर सीताराम ने कहा, अच्छा आँखों से मैं भगवान को देखने की कोशिश करूँगा। आपकी माँ ने कहा था—मैं देख सकूँगा। देखूँ, देख पाता हूँ कि नहीं। ऊपर की ओर उसने दृष्टि टिका दी।

धीरानन्द ने, इस क्षण का मौका पा, दोनों हाथ माथे से लगाकर उसे प्रणाम किया।

—बताओ पंडित। बताओ।

मेरा हाथ थामकर मुझे ऊपर ले जाएंगे ? वहाँ बताऊँगा, वहीं बताऊँगा।

धीरानन्द उसे सहारा देकर ऊपर ले गया।

पंडित अन्दाज़े से ताखे के पास गया। पुकारा, धीराबाबू !

पंडित !

मेरा पाप— इस पाप से मुझे मुक्त करें।

ये किताबें आपकी हैं। मैं पढ़ने लाकर इनको लौटाया नहीं। इनको आप ले जाइए। रजनीबाबू की एक किताब है। धीराबाबू !

धीरानन्द स्तब्ध खड़ा रहा। कुछ देर बाद फिर आकर उसने पंडित को अंकवार में भर लिया। भीरु दुर्बल हृदस्पन्दन दरिद्रता-क्षीण वक्षपंजर के अन्तराल से ध्वनित हो रहा है। आवेश की प्रबलता से शरीर ज्वर से उत्तप्त और प्रखर। क्षीण दृष्टि से वह मुक्त द्वारपथ से अस्तगामी सूर्य की अन्तिम रश्मि से उज्ज्वल पश्चिम आकाश की ओर देख रहा है। होंठ मानों किसी असहनीय थर-थर कम्पन से कांप रहे हैं।

धीरानन्द ने गाढ़े स्वर में कहा, जय हो, जय हो—पंडित, तुम्हारी जय हो ! धीरानन्द के आलिंगन के समय उसकी आँखों से चश्मा गिर गया।

सीताराम ने पुकारा, रत्ना ! एक बत्ती दे जा बेटी। कमरा अंधेरा हो गया।

आई बाबू !—रत्ना ने जवाब दिया।

धीरानन्द ने आश्चर्य से कहा, यह क्या पंडित, तुम तो कुछ भी देख नहीं पाते हो ? कमरे में अब भी तो प्रकाश है। इतनी देर में उसने पंडित की दृष्टि-हीनता का परिमाण महसूस किया। सिहर उठा वह।

सीताराम ने हँसकर कहा, प्रकाश है ? ओह, चश्मा गिर गया है न आँखों से। देखिए तो धीराबाबू, नहीं तो मैं ही शायद अपने पैरों से तोड़ डालूं।

धीरानन्द ने चश्मा उठाकर उसके हाथों में दिया। चश्मा पहनकर सीताराम ने कहा, यही अच्छा है।

धीरानन्द ने उसका हाथ थामकर कहा, पंडित, तुम मेरे साथ चलो, आँखों का इलाज करायोगे।

सीताराम ने गर्दन हिलाई, नहीं। जरा चुप रहकर बोला, क्या देखूंगा आँखों से ? रत्ना की विधवा मूर्त्ति ! रहने दो। धीरानन्द सन्नाटे में आ गया।

रत्ना बत्ती पहुँचा गई। खामोशी तोड़कर सीताराम ने कहा, अच्छा आँखों से मैं भगवान को देखने की कोशिश करूंगा। आपकी माँ ने कहा था—मैं देख सकूंगा। देखें, देख पाता हूं कि नहीं। ऊपर की ओर उसने दृष्टि टिका दी।

धीरानन्द ने, इस क्षण का मौका पा, दोनों हाथ माथे से लगाकर उसे प्रणाम किया।